लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

उपन्यास

बिमल मित्र

लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गाधी मार्ग
इलाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

•

अनुवादक
नगेन्द्र चौधरी

•

विमल मित्र

•

प्रथम सस्करण १९७७

•

लोकभारती प्रेस
१८, महात्मा गाधी मार्ग
इलाहाबाद-१ द्वारा मुद्रित

मूल्य : १५.००

परम आदरणीय

श्री मुक्ति प्रसाद मुखोपाध्याय

नागपुर मे आपके घर मे जो कुछ दिन हम थे—उसकी सुख-स्मृति मेरे जीवन मे चिर स्मरणीय रहेगी।

१ वैसाख, १३८३ —विमल मित्र

रोकड जो मिली नहीं

[एक]

इस उपन्यास के अन्त मे एक चिट्ठी है। उसी चिट्ठी मे मेरे इस उपन्यास का अन्त हुआ है। आप लोग उस चिट्ठी को पहले ही नही पढ लें। वैसा कीजिएगा तो कहानी पढने के आनन्द से आप वचित हो जाइएगा।

तीर्थ के देवता तीर्थ-पथ के अन्त मे वास करते है। तीर्थ-पथ को तय किये बिना तीर्थ के देवता के दर्शन नही होते। तीर्थ-यात्रा मे चूकि यातना झेलनी पडती है, इसीलिए तीर्थ के देवता का इतना माहात्म्य है, तीर्थस्थान पहुँचने से इतने आनन्द की प्राप्ति होती है।

इसी तरह मनुष्य का जीवन हुआ करता है। मनुष्य के जीवन का आरम्भ क्योंकि जन्म से होता है इसीलिए वह अन्त मे जन्मान्तर मे पहुँचकर अमृतमय हो जाता है। तमाम नदियो का अन्त चूकि समुद्र मे होता है इसलिए समुद्र ही क्या सब कुछ है और नदी कुछ भी नही?

लिखने बैठा हूँ तो सोचता हूँ, उपन्यास की शुरुआत कहाँ से करूँ, किसको केन्द्र मान कर लिखूँ? किसके बारे मे कहानी शुरू करूँ? सुनीति मित्र को लेकर? वह क्या इस कहानी की नायिका है? या लीला हसराज को लेकर शुरू करूँ? कुछ भी समझ मे नही आ रहा है। अपने मास्टर साहब कालीपद को लेकर शुरू करूँ तो भी काम चल सकता है। वही कालीपद मास्टर साहब जो पहले खादी पहना करते थे, जो ब्रह्मचर्य पालन को जीवन का धर्म मानकर चलते थे। या अगर दुर्गा दीदी को लेकर शुरू करूँ तो भी बुरा नही होगा। वह सब न कर अगर पार्क स्ट्रीट के ब्लैक प्रिंस को लेकर शुरू करूँ तो भी कोई हर्ज नही।

शुरू करने का एक और उपाय है। वह है सोने का एक हार। मामूली सोने के जिस हार को उपलक्ष्य बनाने के कारण इतनी छोटी सख्या का हिसाब जो गलत हो गया, उसी को लेकर शुरुआत की जा सकती है। दिखा सकता हूँ कि डेढ सौ रुपये का एक मामूली हार

तरह इस उपन्यास का एक असाधारण उपादान हो गया।

कर तो सकता हूँ सब कुछ, मगर असली बात है आज का युग गति और व्यस्तता का युग है। हम इसी व्यस्तता-युग के अभिशप्त प्राणी हैं। हम आज आराम या अवकाश ग्रहण की बात नही सोच सकते। प्रत्येक आदमी के जीवन मे एक समय आता है जब उसे अवकाश-ग्रहण करना पडता है, कर्म-क्षेत्र से दूर हटकर खडा होना पडता है। वही सुखद और स्वास्थ्यकारी होता है। मगर हम ऐसा नही कर पाते। हम दुनिया को छोडकर इतनी आसानी से नही जाना चाहते, किसी के लिए तिल भर भी जगह नही छोडना चाहते। हम चलना जानते है, रुकना नही।

लेकिन जब शुरू करना ही है तो इतनी भूमिका की जरूरत ही क्या? लेखन को ही जब धर्म के रूप मे स्वीकार कर लिया है तो चिंता फिक्र की दुहाई दूँ तो आप मानने को तैयार नही होइएगा। फिर भी मन ही मन बडा ही क्लेश होता है। सोचता हूँ, मैं यह क्या कर रहा हूँ। आदमी को पहचानने और उसकी पहचान कराने की जिम्मेदारी जान-बूझकर अपने माथे पर क्यो ले रहा हूँ!

यही वजह है कि जब कोई हिसाब नही मिलता है तो कभी-कभी जी मे होता है अपने जीवन को ही धिक्कारूँ! बार-बार कहने को मन होता है कि मैंने यह क्या किया? इतने दिनो के बाद मैंने कितनी बडी गलती की। मुझमे जो इतना अहकार था कि मै आदमी को पहचानता हूँ, उस अहकार को क्या इस तरह चूर होना चाहिए था?

इसीलिए तो सोचता हूँ, बावजूद इतने इतने आदमियो को देखने, इतने आदमियो से मिलने और इतनी मोटी-मोटी किताबें लिखने के, मैं कुछ भी न जान सका, किसी को भी पहचान न सका। यह चिरपरिचित दुनिया किसी किसी दिन मुझे अजनबी जैसी लगती है। चारो ओर का समाज अचानक एक अजनबी चेहरा पहन कर मेरे सामने खडा हो जाता है। देखकर मैं स्तभित हो जाता हूँ, चौंक पडता हूँ, अपने आपको ही नये सिरे से पहचानने की कोशिश करने लगता हूँ।

सुनीति की ही बात लें। सुनीति मित्र के साथ ही जिस तरह की घटना हुई, उसी पर सोचकर देख लें। सुनीति को मैं क्या थोडे दिनो से जानता था?

जब सुनीति हमारे घर पर पहले-पहल आयी थी, उस समय भैया की लडकी ज्यादा से ज्यादा पाँच या छह साल की होगी। भैया की वह

पहली सन्तान है, अत वडी ही लाडली थी। सभी उसे बेहद प्यार करते थे। एक बात उसके मुह से निकल जाये तो सभी कहते, "आह कितनी अक्लमन्द है।"

इतनी कम उम्र मे जब इतनी अक्लमन्द हे तो बडी होने पर कितनी अक्लमन्द होगी, यह सोचकर सभी रोमाचित हो उठते थे।

वही लडकी जब चार साल की हो गयी तो भैया ने उसे नर्सरी स्कूल मे दाखिल करा दिया।

हमारे जमाने मे चाहे जो कुछ हुआ हो, मगर इस युग मे सभी अपनी-अपनी लडकी को इन्दिरा गाँधी बनाना चाहते हें। लडकियो को सजा-धजा कर उनकी माताएँ उन्हे यूनिफार्म पहनाती है और उसके बाद फ्लास्क हाथ मे लिए गली पार करती हुई स्कूल की वस के लिए इन्तजार करती रहती है। जिनकी माताएँ गृहस्थी के कामो के कारण वक्त नही निकाल पाती है, उनके बाप, चाचा या भाइयो को यह जिम्मेदारी ओढनी पडती है।

यह नया रिवाज चल पडा हे।

पहले यह सब रिवाज नही था। आज जो बच्चे जितने ही बडे स्कूल मे पढते हैं, जितनी ही कीमती वस पर सवार होकर स्कूल जाते हैं, उनके मा-बाप की उतनी ही इज्जत होती है। जिन बच्चो के स्कूल की फीस ज्यादा है, बस मे जिन्हे ज्यादा किराया चुकाना पडता है, वे समाज और मुहल्ले मे ईर्ष्या की दृष्टि से देखे जाते है। बच्चो की स्कूल-वस पर जो नाम लिखा रहता है, असली कीमत उसी की हे। उस नाम को देखते ही हम अन्दाज लगा लेंगे कि तुम्हारे पिता का कितना सम्मान हे, उन्हे दफ्तर मे कितनी तनख्वाह मिलती है, तुम्हारा खान पान किस तरह का हे।

सचमुच पहले यह सब नही था। वीथि के कारण भैया को भी इस समस्या के सामने खडा होना पडा। भैया अच्छी नौकरी पर हैं, महीने मे उन्हे दो हजार रुपये तनख्वाह मिलती है, अत उनकी लडकी का मुहल्ले के महाकाली विद्यालय मे दाखिला नही कराया जा सकता हे। महाकाली विद्यालय की माहवार फीस मात्र दस रुपये है। इससे भैया की इज्जत पर पानी फिर जायेगा, साथ-साथ हमारे खानदान की भी इज्जत धूल मे मिल जायेगी।

दरअसल इस युग मे इस मिथ्या सम्मान को लेकर ही हम जीवन

जी रहे है। धर्म बच रहा है या नही, इसे देखने की ज़रूरत हम महसूस नही करते, सत्य जीवित है या नही, इस पर हम विचार नही करते। बाहरी आदमी के सामने हमारा मिथ्या सम्मान बना रहे तो हम जी जाये।

मगर मैं इतनी बातें क्यो कह रहा हूँ और कौन इतना सुनेगा? कहानी कहना मेरा काम है, इसलिए मुझे कहानी ही लिखनी चाहिए। मैं हमेशा से इस बात पर विश्वास करता आया हूँ कि आदमी अभी जिस तरह से रह रहा है, उस तरह नही रहेगा, उसका समाज भी इस तरह नही रहेगा। तब अच्छाई-बुराई का अर्थ बदल जायेगा, पाप-पुण्य के अर्थ मे परिवर्तन आयेगा। या फिर ऐसा भी हो सकता है कि प्राचीन मूल्य लौट आयें। आदमी फिर से धर्म, सत्य और ईश्वर की महिमा को मर्यादा प्रदान करने लगे।

तब हो सकता है, सुनीति मित्र की कहानी आदमी को सचमुच ही अच्छी लगने लगे। हो सकता है सही तौर पर तब सुनीति मित्र का मूल्याकन हो।

और इसी भरोसे आज मैं सुनीति मित्र की कहानी लिखने बैठा हूँ।

शुरू मे सुनीति मित्र से मेरी कोई जान-पहचान नही थी। किसी खास घटना या स्थिति के कारण ही आदमी से आदमी की जान-पहचान होती है। तब हा, रक्त या आत्मीयता का सबध हो तो बात ही अलग है।

मगर दुनिया-भर के आदमी से खून के रिश्ते मे बधना मुमकिन नही है। दुनिया मे इतने-इतने आदमी है, विविध कारणो से एक दूसरे के सपर्क मे आते हैं। लेकिन ऐसा होने से ही क्या सभी एक-दूसरे को जानने-पहचानने लगते हैं? घनिष्ठता के सूत्र मे बँध जाते हैं?

भैया की लडकी के लिए एक मास्टरनी की ज़रूरत पडी।

भैया को हमेशा काम मे व्यस्त रहना पडता है। उनके पास वक्त नही है कि लडकी के लिए मास्टरनी की तलाश करे। दफ्तर जाना पडता है, दफ्तर की जिम्मेदारी निभानी पडती है। दफ्तर के काम से कलकत्ते से बाहर जाना पडता है। वीथि के लिए जो कुछ भी करना है, सब कुछ भाभी जी को ही करना पडता है।

और मैं?

मैं ठहरा आलसी आदमी । हर तरह का काम रहने पर भी म निकम्मा हूँ । अत मुझ पर ही इस काम की जिम्मेदारी लादी गयी—यानी वीथि के लिए मास्टरनी की तलाश करने की ज़िम्मेदारी ।

'तीन नबर गवाह' नामक एक उपन्यास मे भी मैं लिख चुका हूँ और अब भी यह स्वीकार करता हूँ कि मैं तब ऐसी एक नौकरी कर रहा था जिसमे मुझे फुसत और काम—दोनो अधिक से अधिक तादाद मे मिलते थे ।

सभ्य भाषा मे कहूँ तो कहना पडेगा कि तब में गुप्तचर का काम करता था ।

'गुप्तचर' शब्द सुनने मे खराब लगता है । मगर चाहे खराब ही क्यो न लगे, मेरा असली काम वही था ।

मैं ठहरा पुलिस का आदमी । पुलिस का आदमी रहने पर भी मुझे रोज-रोज दफ्तर नही जाना पडता था । मुझे स्वाधीनतापूर्वक समाज के हर तबके के आदमी से हेल-मेल बढाकर अनैतिकता की छिपी हुई खबरो का पता लगाना पडता था और ठीक समय पर इसकी लिखित सूचना अपने अफसर को देनी पडती थी । उसके बाद एक दिन जाल बिछाकर मुजरिम को पकडना पडता था ।

कहा जा सकता है कि तब मैं सरकार के अपराध निरोध विभाग का एक वरिष्ठ अफसर था ।

इसके बारे मे यहाँ ज्यादा लिखना जरूरी नही है । इतना कहना ही काफी होगा कि इसी काम के सिलसिले मे सुनीति मित्र से मेरी जान-पहचान हुई ।

इस बात को जरा खोलकर ही कहूँ ।

मुझे अपने एक व्यक्तिगत काम से एक दिन किसी कॉलेज मे जाना पडा था । कॉलेज नामी-गिरामी था । कॉलेज के अध्यक्ष मेरे परिचित ही नही, ऐसे दोस्त भी थे ।

बहुत दिनो के बाद उसने मुझसे कहा, "बात क्या है जी ? आज-कल तो तुमसे मुलाकात होती ही नही ।"

मैंने कहा, "मुलाकात कैसे होगी ? अखबार क्या तुम पढते नही ?"

दोस्त की समझ मे मेरी बात नही आयी ।

बोला, "क्यो ? अखबार से तुम्हारी नौकरी का क्या वास्ता है ?"

मैंने कहा, "वास्ता कुछ भी नही है, मगर अखबारो मे देखा नही

कि चारो तरफ किस तरह घूस लेने-देने का सिलसिला चल रहा है ? घूस लेने देने का सिलसिला वढ जाता है तो हम लोगो का भी काम वढ जाता है, इसमें अवाक् होने की क्या वात ?"

दोस्त बोला, "मगर पकडा तो कोई भी नही जाता। और अखवारा मे जो दो-चार व्यक्तियो के पकडे जाने की खबर अगर छपती भी है तो अत मे उनके साथ कैसा सलूक किया जाता है, उसकी कोई जानकारी हासिल नही होती है।"

मैंने कहा, "इन गभीर वातो पर मैं तुमसे वहस नही करूगा। अपनी नौकरी बचाकर तनख्वाह लेना मेरा काम है और वह काम मैं नियमित ढग से किये जा रहा हूँ। तब हाँ, इस युग मे दुनिया म जव पैसा बटोरना ही आदमी का सबसे बडा क्वालिफिकेशन है, तो फिर घूस लेने-देने के सिलसिले के खत्म होने की उम्मीद करना वेकार है। दिन दिन जितना वढ रहा है, बढता ही जायेगा। और-अगर रातो-रात हमारा देश रामराज्य हो जाये तो फिर हमारी नौकरी क्या बरकरार रहेगी ? तव मैं वेकार हो जाऊँगा।"

दोस्त वोला, "खैर, क्या खाओगे, यह तो बताओ। हमारे यहाँ अच्छा कैन्टीन खुला है, कहो तो कुछ मँगाऊँ।"

मैंने कहा, "नही, मँगाने की जरूरत नहीं, मैंने अभी तुरन्त खाना खाया है।",

"फिर चाय ?"

"नही। कुछ भी नही चाहिए। तुम्हारे पास एक काम से आया हूँ।"

"काम ? मुझसे तुम्हारा कौन सा काम हो सकता है ? हम मास्टरी करते है और तुम ठहरे पुलिस कमचारी। जहाज से अदरक के व्यापारी का कौन सा रिश्ता हो सकता है ?"

मैंने कहा, "काम है।"

"किसी को कालेज मे दाखिल कराना है ?"

"नही, ऐसी वात नही है। मुझे अपनी भतीजी के लिए किसी मास्टरनी की जरूरत है। यानी एक ऐसी मास्टरनी की जो नियमित ढग से उसे पढाये। कभी गैरहाजिर न रहे। काफी पढी-लिखी हो और चरित्र भी अच्छा हो।"

दोस्त बोला, "स्वभाव-चरित्र के बारे मे मे गारन्टी नही दे सक्ता। क्योकि पुरुषो के भाग्य और औरतो के चरित्र को हम तुम क्या, देवता भी नही समझ सक्ते।"

"फिर तो तुम्हारे पास आया ही नाहक? सिफ अखबारो मे विज्ञापन देते ही हजारो दरख्वास्ते आ जाती।"

दोस्त बोला, "ठीक है, मैं सोचकर कहूँगा। मुझे दो-चार दिन का वक्त दो।"

[दो]

कुछ दिन बाद मेरे दोस्त ने सूचना दी कि एक मास्टरनी मिल गयी है और अगर उसे यह पता चल जाये कि मैं किस दिन उसके पास पहुँच रहा हूँ तो वह उसको बुला लेगा। तभी मैं उस महिला से बातचीत कर पसन्द या नापसन्द जो करने को होगा, कर लूगा।

मेरे जीवन का ज्यादातर वक्त लोगो को जानने-पहचानने मे बीता है। आदमी से हेल-मेल बढाकर उसे पहचानना ही सबसे कठिन काम है।

आदमी को पहचानने के सिलसिले मे मैं ठगा नही गया, यह बात भी दावे के साथ नही कह सकता। उसके चलते बहुत बार मुझे कितनी ही क्षतियाँ उठानी पडी है। तब हाँ, इतना तो जरूर ही कह सकता हूँ कि क्षति उतनी अधिक नही हुई है कि मुझे अनुताप की भट्ठी मे तपना पडा हो। सोचा है, यह भी कोई कीमत ही चुका रहा हूँ। कुछ पाने के लिए कुछ न कुछ कीमत चुकानी ही पडती है।

दिन तय कर एक दिन मिलने गया। वहाँ मेरे मित्र ने सारा इन्तजाम करके रखा था। देखा, मेरे लिए एक महिला कमरे के अन्दर बैठी हुई है। मेरे अन्दर जाते ही महिला उठकर खडी हो गयी।

"बैठिए, बैठिए।" मैंने कहा।

मेरे बेठने के बाद महिला बैठ गयी। महिला का व्यवहार अच्छा ही लगा और स्वभाव से वह भली और विनयी जैसी लगी। कभी-कभी अभाव के कारण भी आदमी भलमनसाहत और विनम्रता का अभिनय करता है। अपना मतलब बनाने के लिए भी आदमी विनयी बन जाता है। मगर वह सब मेरी अन्वेषक दृष्टि से छिप नही पाता है। मैं निजी अनुभव के सहारे समझ लेता हूँ कि कौन असली विनम्रता है और कौन नकली। चाहे जितना बडा अभिनेता क्यो न हो, उसका अभिनय हमेशा अभिनय ही रहेगा। वह कभी असली नही हो पाता है। और यदि

असली हो जाये तो फिर वह अभिनय रह ही नही जाता। अब असली की तरह देखने मे लगे, असली जैसा ही लगे तो वह अभिनय है। मिसाल के तौर पर हम रोल्ड गोल्ड या गिल्टी सोने को ले सकते ह। अगर गिल्टी सोने को असली साने का गहना समझकर चोर चुराये तो उसका गिल्टी सोना होना सार्थक है।

दोस्त बोला, "तुम सुनीति से 'आप' कहकर बातचीत क्यो कर रहे हो? दरअसल वह तुम्हारी छोटी बहन जेसी है। पहले इसी कॉलेज मे पढती थी। यही से सुनाति ने बी० ए० पास किया है।"

मैंने उसकी बात मानते हुए कहा, "तुम्हारा नाम सुनीति है न? मगर सुनीति क्या?"

महिला बोली, "सुनीति मित्र!"

देखा, सुनीति के गले की आवाज कितनी मीठी है। कोई-कोई महिला ऐसी होती है जो देखने मे अच्छी नही होती मगर बातचीत करने के बाद अकारण ही वह देखने मे अच्छी लगने लगती है। आँखो से देखने पर कितनी ही बुरी क्यो न लगे मगर थोडी-सी बात-चीत करने के बाद ही वह बुराई दूर हो जाती है। आँखे स्वीकार कर लें तो मन स्वीकार नही भी कर सकता है, लेकिन मन एक बार स्वीकार ले तो आँखो को स्वीकार करना ही पडता है। मनुष्य के चरित्र के विवेचन का यही नियम है।

इस विवेचन के पैमाने से मापने पर सुनीति उसी तरह की भली लडकी लगी। उसकी देह के रग को गोरा नही कहा जा सकता, बल्कि काला कहा जाये तो सही होगा। मगर काला हो तो निंदा करने लायक है, सुनीति ने इस उक्ति को झूठा साबित कर दिया था। काली न कह कर उसे कृष्णकलि कहा जाये तो वणन ठीक होगा। जिस तरह ठीक-ठीक वर्णन किया जा सकता हे उसी तरह उसे सम्मान की दृष्टि से भी देखा जा सकता है।

हाँ, दुनिया मे प्रशसा की तुलना मे सम्मान दुर्लभ वस्तु हुआ करता है। सम्मान चूकि बहुत कम आदमियो को नसीब होता है, यही वजह है कि उसके चाहने वालो की सख्या इतनी अधिक होती है।

अपने दोस्त से जो कुछ सुना उससे मेरे मन मे उसके प्रति सहानुभूति पैदा हुई। बडी बात यही है कि अपने काले रग के चेहरे के बावजूद सुनीति मुझसे सहानुभूति प्राप्त कर सकी। क्योकि मेरी नौकरी

तरह री है, उसके कारण मैं यह मानकर चलता हूँ कि आदमी असल मे सहानुभूति के लायक नही है। आदमी चोर, गुडा, जुआरी, चरित्र हीन और बेईमान है। इस दुनिया मे जहाँ भी इसका अभाव दीखे, समझ लेना चाहिए कि अपवाद ही है। ज्यादा दिन पुलिस की नौकरी करने का एक बुरा नतीजा यही होता है कि आस-पास जिस पर भी निगाह जाती ह उस पर अविश्वास करना ही अच्छा लगता है। वह अविश्वास फैलते-फैलते पुलिसवाले के अपने परिवार की सीमा मे प्रवेश कर जाता है। माँ-बाप या स्त्री की बात तो दूर, तब वह खुद अपनी ही निगाह मे अविश्वास का पात्र हो जाता है।

मैंने पूछा, "तुम्हारे घर पर कौन-कौन हैं ?"

सुनीति के बदले मेरे मित्र ने ही जवाब दिया, "बूढे पिता जी और माँ—बस यही दो, बाकी कोई नही। सुनीति ने इस बार हमारे कॉलेज से बी० ए० पास किया है और अब एम० ए० मे पढ रही है।"

"सब्जेक्ट क्या है ?"

"हिस्ट्री। इतिहास, अँग्रेजी और सस्कृत मे मैं हमेशा अव्वल आती रही हूँ, मगर मैं बचपन से ही इतिहास पढना पसन्द करती आयी हूँ। अभी गृहस्थी का खर्च चलाते हुए कॉलेज की फीस देना मेरे बूते के बाहर की बात है। इसीलिए एक-दो ट्यूशन मिल जायें तो मुझे सुविधा हो।"

उसके बाद बहुत सारी बाते हुईं। घर कहाँ है, बाबू जी क्या करते थे, विवाह क्यो नही किया आदि-आदि।

मैंने बताया, छात्रा मेरी भतीजी है। वह अँग्रेजी स्कूल म पढती है। बँगला के बजाय अँग्रेजी पर ही ज्यादा जोर देना पडेगा।

सुनीति बोली, "मैंने मिशनरी स्कूल से ही सिनियर कैम्ब्रिज पास किया है। अँग्रेजी मे मुझे एट्टी परसेन्ट मार्क मिला था।"

"फिर तो चिन्ता की कोई बात ही नहीं।" मैंने कहा।

किसी का स्वभाव चरित्र बाहरी चेहरे को देखने से समझ मे नही आता ह। उसका अन्दाज लगा लेना पडता है। शिक्षा दीक्षा का पता विश्वविद्यालय के सर्टिफिकेट से चल जाता है। यह भी क्या कम बात है। मुझे अपनी भतीजी के लिए एक ऐसी मास्टरनी की जरूरत थी जिसका चाल चलन अच्छा हो। आजकल राह-बाट मे लडकियो के ऐसे ऐसे लिबासो पर नजर पडती है, जिनके कारण आखें बन्द कर लेनी पडती है। सिर अपने आप झुक जाता है। सुनीति मित्र का लिबास उस

किस्म का नही है। उसके पैर के चप्पल, साडी और ब्लाउज से शुरू कर के जूडे तक मे एक ऐसी सुन्दर-शान्त शालीनता की छाप है, जिसे देखकर आँखें जुडा जाती है और मन श्रद्धा मे परिपूर्ण हो उठता है।

लौटकर भैया को सुनीति के बारे मे बताया।

भैया उस कोटि के अफसर है जो अपने ऑफिस को ही मदिर समझते हैं। ऐसे लोग बिस्तर पर लेटे-लेटे शायद ऑफिस का ही सपना देखा करते है। भाभी जी से सुना है, भैया नीद मे भी ऑफिस की फाइलो के बारे मे बडबडाते रहते हैं। शायद भैया को हमेशा यह बात याद नही रहती कि घर नामक भी कोई जगह है। खाने के समय भैया को याद दिला देना पडता है कि उन्हे भूख लगी है। पता नही, सरकारी ऑफिस मे भैया जैसे कितने अफसर है। अगर भैया के जैसे कुछ लोग है तो मानना पडेगा कि हिन्दुस्तान के सुदिन लौट आये हैं। भाभी अगर न होती तो हो सकता है, भैया दफ्तर मे ही रात गुजार देते।

मेरे छुटपन मे जो मास्टर साहब मुझे पढाते थे, वे मेरा आदर्श थे। कहा जा सकता है कि मै और भैया उन्ही के आदर्श के कारण ही आदमी हो पाये थे।

हमारे मास्टर साहब अल्पाहारी और अल्पाचारी थे। कभी मास-मछली वगैरह नही खाते थे। उनके पाँवों मे साधारण चप्पल रहा करते थे, देह पर खादी की मोटी धोती और चादर। सरदियो मे वे चादर के बदले बदन पर गरम शाल डाल लेते थे।

हम पूछते, "मास्टर साहब आपको ठड नही लगती है ?"

मास्टर साहब जवाब देते, "हमारे देश मे सौ मे अस्सी आदमी जिस तरह गुजारा करते है, उसकी तुलना मे मेरी यह गरम शाल विलासिता ही कही जायेगी।"

यह कहकर वे हस देते थे।

मेरे पिता जी कहते, "उन्ही की बाते ठीक है, हमारे मुल्क मे ऐसे ही आदमियो की जरूरत है। बगाली अय्याशी के चलते ही मारे गये।"

कहा जा सकता है कि भैया को भी वही स्वभाव मिला है। किस कमीज को पहनना है, क्या खाना है, कब किसमे कैसे बातचीत करनी है, उसकी भैया परवाह ही नही करते। भैया बस एक ही चीज का हिसाब रखते है और वह है दफ्तर का काम। उसके बारे मे उनके गणित मे कभी कोई गलती नही होती है।

खाने के समय मैंने भैया को सुनीति के बारे में बताया।

भाभी बोली, "किससे कह रहे हो देवर जी, तुम्हारे भैया अभी ऑफिस की बात सोच रहे हैं। इससे तो बेहतर यही है कि तुम मुझसे कहो मैं ध्यान से सुनूंगी।"

बात भैया के कानों में पहुँची।

"किस चीज के बारे में कह रहे थे ? चुनाव के बारे में ? इस साल वह नहीं होने जा रहा है। अगले साल होगा।"

भाभी बोली, "लो सुनो देवर जी, अपने भैया की बातें सुन ली न ?"

उसके बाद भैया की ओर ताकती हुई बोली, "तुम्हें रोटी दूँ ?"

भैया बोले, "नहीं-नहीं, मेरा पेट भर चुका है। तुम जो कह रही थी, वही कहो।"

भाभी जी ने उनकी बातों पर ध्यान न देकर कहा, "न हो तो तुम किसी दिन उसे मेरे पास ले आओ, देवर जी। उससे बातचीत करने पर मैं सब समझ जाऊँगी। कहा रहती है ?"

मैं बोला, "लडकियों के एक मेस में। वहा उसे बहुत तकलीफ होती है।"

"क्यो ? खाने-पीने की तकलीफ होती है ?"

मैंने कहा, "नहीं, मुहल्ले के लडके छेडखानी करते हे, बहुत तरह की बातें कर उसे शर्मिन्दा करने की कोशिश करते हैं। इतनी बडी हो चुकी है, शादी नहीं हुई है, ऐसी हालत में जैसा हुआ करता है, वही सब होता हे।"

"शादी अब तक क्यो नहीं हुई है ?"

"शादी क्या हर किसी की हो जाती हे ? अगर कोई शादी करा देता तो हो गई होती, लगता है, उस ओर से ही कोई बाधा है।" मैने कहा।

"बाधा किस बात की ?"

"यह सब बात किसी महिला से पूछना ठीक नहीं होता है। तब हाँ, लगता है, माँ-बाप भी नहीं चाहते कि लडकी की शादी हो जाये।"

"क्यो ?"

"मैने कहा, "नौकरी करने वाली लडकी को इसी तरह की मुसीबत का सामना करना पडता है, भाभी जी। इतने दिनों से पुलिस

विभाग मे काम कर रहा हूँ, फिर यह बात मुझसे अनदेखी कैसे रह जायेगी ? लडकी की शादी हो जायेगी तो वह परायी हो जायेगी, साथ ही साथ उसकी कमाई का पैसा भी दूसरे के हाथ मे चला जायेगा। ऐसी हालत मे गरीब माँ-बाप भला कही लडकी की शादी करना चाहते है ?"

"मगर तुम तो कह रहे हो कि वह नौकरी नही करती है। बी० ए० पास है और एम० ए० मे पढ रही है। वैसी लडकी कौन-सी कमाई करती है ?"

"कई ट्यूशनें करती है। आजकल ट्यूशन करके भी लडकियाँ काफी कमा लेती हैं। लगभग दो सौ रुपये उससे मिल ही जाते होगे। एक सौ रुपये बाप को भेजती होगी और बाकी एक सौ मे खुद गुजारा करती होगी। अगर हमारे घर मे उसके लिए रहने खाने का इन्तजाम हो जाये तो उसके काफी पैसे बच जायेंगे।"

भाभी जी बोली, "तुम किसी दिन उसे घर पर ले आओ, मैं उससे बातचीत करना चाहती हूँ। उसके बाद बात तय की जायेगी।"

उसके बाद एक दिन मै सुनीति मित्र को अपने घर पर ले आया और भावी छात्रा की माँ से उसका परिचय करा दिया। अपने सिर पर ही सारी जिम्मेदारी क्यो उठाऊँ ? भैया का छात्रा का अभिभावक होना न होने जैसा ही है, ऐसी हालत मे भाभी जी ही सर्वेसर्वा है। उनके हाथ मे सुनीति मित्र को सौप देने से मैं निश्चिन्तता के साथ रह सकता हूँ।

सुनीति मित्र एक दिन हमारे घर पर आयी। उसका वही सादा लिबास था, साडी का अचल पूरे जिस्म मे लिपटा था। पैरो मे साधारण चप्पल। किसी तरह के विशेष साज-सिंगार की तडक-भडक नही थी।

भाभी जी ने आगे बढकर उसकी अभ्यर्थना की और कमरे के अन्दर ले गयी। मैं उन लोगो के साथ अन्दर महल मे नही गया। औरत ही औरत को ठीक से पहचान सकती है। इसके अलावा भाभी की ही लडकी को जब पढाना है तो वे ही भली-भाति जाच पडताल कर ले। उस पर अगर भाभी जी सुनीति को घर मे आश्रय देना चाहे तो कहना ही क्या ! ज़रूरत पडने पर मेरी भतीजी को चौबीसो घटा उससे सहायता प्राप्त हो सकती है। कहा जा सकता है कि भाभी और सुनीति

दोनो के लिए परेशानी दूर हो जायेगी। फिर हमे प्रत्यक्ष रूप मे भतीजी की लिखाई-पढाई के लिए कोई चिन्ता नही रह जायेगी।

हमारी गृहस्थी मे मद के नाम पर मैं और भैया हैं, लेकिन दुनियादारी के मामले मे हम दोनो कोरे ही है। हमे पैसा कमाना है, इसलिए हम कमाते है। मगर गृहस्थी चलाने की सारी जिम्मेदारी भाभी जी पर हे। कौन क्या चीज खायेगा, किस किस चीज की जरूरत है, किसकी कमीज फट गयी है और उसकी जगह पर दूसरी लेनी है, किसका हाथ खर्च का पैसा कम हो गया है और उसे रुपया देना है—इन सारी बातो की जिम्मेदारी भाभी पर रहती है। इसके अलावा मध्य वित्त की गृहस्थी के कामो का कोई अन्त है। दाई, नौकर, रसोइया वगैरह को ठीक से नियत्रण मे रखना भी एक बडा काम ही है। उनसे ठीक से काम लेना पडता है, कभी उन्हे डाँटना पडता है तो कभी पुचकारना पडता हे। बीच-बीच मे बख्शीश देनी पडती है। इस तरह की सामथ्य होना एक तरह की कला ही हे। आजकल हिन्दुस्तान मे मैनेजमेन्ट कोस की पढाई होती है, यह काम भी उसी तरह का है। भाभी जी ने अलबत्ता मैनेजमेन्ट कोस नही पढा था, मगर नौकर-चाकरो से किस तरह सलूक करना चाहिए, उनमे इसकी सहजात योग्यता है।

यही कारण है कि घर के हम सभी सदस्य भाभी जी पर निभर करते थे। घर के अन्दर हम लोगो का कोई रौब नही चलता था। हम भी भाभी जी पर गृहस्थी का पूरा भार सौपकर चैन से रहते थे।

सुनीति मित्र से बातचीत करने के बाद भाभी जी मेरे पास आयी और बोली, "मेरी आँखो मे कोई धूल नही झोक सकता है, देवर जी। मैंने खोद खोदकर हर बात पूछी। सुनने पर यह बात साफ हो गयी कि सुनीति बहुत ही अच्छे खानदान की लडकी है। हालत खराब रहने के कारण ही अब तक विवाह नही हो पाया है।"

"आपने उसकी गृहस्थी की सारी बातो की पूछताछ की?"

"हा, सब कुछ पूछा। बाबू जी क्या करते थे, कहा रहते हे, माँ-बाप को कितना पैसा भेजना पडता है, उसका निजी खर्च कितना है, ट्यूशन करने से उसे कितना पैसा मिलता है—यही सब।'

"उसने क्या बताया?"

भाभी जी बोली, "बडी ही सुशील लडकी हे। कोई दूसरी लडकी होती तो इन बातो का जवाब ही नही देती या देती भी तो झूठी बाते

नानी जी बोली, "जाओ, तुम्हें यह सब [illegible]। बाहर अपने कमरे में जाकर [illegible] लिखो। मैं थोड़ी देर में आकर देखूँगी।"

वीथि चली गयी।

मैंने पूछा, "आपने सुनीति को रुपया दे दिया?"

"हां। मुझे उस पर बड़ी दया आ गयी। उसको देखा नहीं, एक अच्छी साड़ी खरीदे, उसके लिए भी उसके पास पैसा नहीं है। इस महीने उसके पिता जी ने उसे बीस रुपया [illegible] भेजा है। कहा है—उसे चश्मा बनवाना है। रुपये का इन्तजाम कैसे करेगी, इसी के लिए चिन्तित है। कॉलिज का प्रिंसिपल उसकी लिखाई पढ़ाई और परीक्षा का फल देखकर अब तक उसकी फीस चुकाता आ रहा था। मगर एम० ए० में पढ़ने के लिए उसे फीस के रुपये का इन्तजाम करना होगा। वहाँ प्रिंसिपल मदद कर भी नहीं सकता।"

इसके बाद भाभी जी कहने लगीं, "मैंने पूछा, तुम्हारे पिता तुम्हारी शादी कराने की कोशिश क्यों नहीं की? [illegible]

जवाब दिया, जानते हो ? बोली कोशिश करने से ही क्या किसी की शादी हो जाती है ?"

यह सुनकर मैंने कहा, "फिर तुमने शादी के लिए खुद ही कोशिश क्यो नही की ?"

मैंने पूछा, "इसके जवाब मे सुनीति ने क्या कहा ?"

भाभी जी बोली, "क्या कहती ! कुछ भी नही बोली । रो दी ।"

"क्यो, रो क्यो पडी ?"

भाभी जी बोली, "यह बात तुम्हारी समझ मे नही आयेगी, देवर जी, तुम लोग इस बात को समझ नही सकोगे। चाहे मैं समझाने की लाख चेष्टा क्यो करूँ, पर समझ नही सकोगे ।"

"फिर आपने क्या किया ?"

'फिर मैं क्या करती ? बस, मौखिक सात्वना देती रही । मगर औरतो का मन कही सात्वना से भीगने वाला है ? मैं जितनी ही सात्वना देने लगी, वह उतना ही रोने लगी । अन्त मे मैंने कहा तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नही, हमारे घर पर रहो । खाने-पीने का खर्च तुम्हे नही देना है । साथ ही साथ तुम्हे महीने मे एक सौ रुपया दिया करूँगी ।"

मैं अवाक् हो गया । बोला, "खाने-पीने के अलावा महीने मे एक सौ रुपया ?"

भाभी जी बोली, "फिर भी मैं फायदे मे ही रहूँगी, देवर जी । मैं उतनी बेवकूफ नही हूँ । वीथि के लिए मुझे दो मास्टरनी रखना पडता । दोनो मिलकर कितना लेती ? कम से कम डेढ सौ रुपया । उस पर नागा । नागा करने पर आजकल टीचरो से कुछ कहना मुश्किल है । कहा जाये तो पढाना बन्द कर देगे । उससे तो बेहतर यही है कि वह हमारे घर पर रहे । इससे फिर नागा करने का कोई सवाल ही पैदा नही होता । जरूरत पडने पर सडक के मोड तक जाकर वीथि को स्कूल की बस पर बिठा आयेगी । सुबह शाम दोनो वक्त वीथि को पढायेगी । मास्टरनी घर पर रहेगी तो वीथि भी लिखाई-पढाई पर ध्यान देगी । बाकी रहा खाने और ठहरने का खच ! हम इतने आदमी इस घर मे रह रहे है, एक और आदमी खा ही लेगा तो खर्चा कौन-सा बढने जा रहा है ?

घर पर अगर कोई विधवा ननद होती तो उसका पालन करना ही पडता ! उसे हम घर से निकाल नही सकते थे । मान लो, वह भी उसी तरह की एक औरत है ।"

भाभी जी की युक्ति से सहमति प्रकट करने के अलावा मुझे कोई दूसरा उपाय नही सूझा ।

[तीन]

उसी महीने की पहली तारीख को सुनीति अपना विस्तर-पेटी वगैरह लेकर हमारे घर पर चली आयी। उसके रहने के लिए एक अलग कमरे का इतजाम हमने पहले ही कर दिया था। किसी को कोई असुविधा नही हुई।

भैया को जब मालूम हुआ तो वे बोले, "अच्छा ही हुआ, अब हम निश्चिन्त हो गये।"

उनकी बातें सुनकर भाभी हँस दी, "देखा न देवर जी, लगता है, तुम्हारे भैया लडकी की लिखाई पढाई की चिन्ता से इतने दिनो से परेशान थे।"

सबसे अच्छी बात यही हुई कि मेरी भतीजी को नयी मास्टरनी पसन्द आयी। अपनी दीदी जी को पाकर वह उसे छोडना नही चाहती है। दीदी जी भी कॉलेज से लौटते ही छाना को पढाने बैठ जाती हैं।

एक दिन जब मैं ऑफिस जा रहा था तो उससे सीढी पर मुलाकात हो गयी। सुनीति सीढियाँ चढ रही थी और मैं नीचे उतर रहा था।

मुझ पर नजर पडते ही सुनीति ठिठककर खडी हो गयी।

"कैसा लग रहा है ?" मैंने पूछा, "कोई असुविधा तो नही हो रही है ?"

सुनीति हँस दी—मीठी और सकोचहीन हँसी।

बोली, "असुविधा क्यो होगी ?"

"तुम्हारी छात्रा की लिखाई पढाई कैसी चल रही है ?"

सुनीति बोली, "बहुत ही अच्छा प्रोग्रेस हो रहा है। देखिए, परीक्षा का रिजल्ट कैसा होता है !"

"तुम अपनी लिखाई पढाई कब करती हो ? तुम्हारी छात्रा ही तो तुम्हारा सारा वक्त बरबाद कर देती है।"

सुनीति बोली, "उससे मेरी लिखाई-पढाई मे कोई हृज नही होता है। उसी बीच में अपना काम निबटा लेती हूँ।"

मैंने उसे सतक करने के उद्देश्य से कहा, "देखो, जिदगी भर लडकियो को पढाने से ही तुम्ह् कोई मुक्ति नही मिलने जा रही है। अपने आप पर भी ध्यान रखना। क्योकि तुम्हे अपने भविष्य के बारे मे भी सोचना है।"

सुनीति मुसकराती हुई बोली, "वीथि जब सो जाती हे तो मैं रात मे जगकर अपनी लिखाई-पढाई करती हूँ।"

"बहुत ही अच्छी बात है।" मैंने कहा।

यह कहकर मैं वहाँ रुका नही। अपने काम से बाहर निकल गया।

इसके बाद यथासमय भतीजी का परीक्षा-फल निकला। जैसा कभी नही हुआ था, इस बार वही हुआ। वीथि परीक्षा मे अव्वल आयी। उसने घर के हर आदमी के चरणो का स्पर्श किया।

शुरू मे मेरे विस्मय का कोई ओर-छोर नही रहा।

बोला, "क्यो क्या हुआ, एकाएक तुममे इतनी भक्ति क्यो उमड आयी। मैंने क्या किया है जो प्रणाम कर रही हो ?"

वीथि बोली, "मै परीक्षा मे अव्वल आयी हूँ, चाचा जी, अँग्रेजी मे मुझे एटी-एट नम्बर मिले हैं।"

मेने कहा, "वाह्-वाह, वेरीगुड गर्ल। अपनी दीदीजी को प्रणाम किया ?"

"दीदी जी को तो सबसे पहले ही प्रणाम कर चुकी हूँ।"

उन दिन घर मे उत्सव जैसी चहल-पहल छा गयी। भाभी जी ने बहुत तरह की रसोई का इन्तजाम किया। मास-मछली, अडा, खीर—कोई चीज बाकी नही रही। बिल्कुल शानदार इन्तजाम।

भैया बोले, "यह क्या ? आज एकाएक इतना आयोजन क्यो किया गया है ?"

भाभी बोली, "सुनो देवर जी, अपने भैया की बात सुन लो, लडकी परीक्षा मे अव्वल आयी हे, यह बात भी इन्हे याद नही है।"

भेया को तब बात याद आयी।

बोले, "ओह, यह बात हे। लगता है, इसीलिए सवेरे वीथि ने मुझे प्रणाम किया था। अब बात याद आयी। अच्छा ही किया है, उत्सव मनाना ही चाहिए। इतना अच्छा परीक्षा-फल कैसे हुआ ? लगता है, नकल की होगी।"

भाभी बोली, "वाप रे, सुन रहे हो, देवर जी ! अपने भैया का काड देखो। घर पर सुनीति को जो रखा गया है, तुम्हारे भैया को यह वात याद है ही नही। इतना भुलक्कड आदमी ऑफिस का काम कैसे चलाता होगा ? तुम्हारे भैया जैसे आदमी है इसीलिए आजकल दफ्तरो मे कोई काम नही होता है।"

भैया वोले, "नही नही, अभी मुझे सारी वातें याद आ गयी। अँग्रेजी मे एटी-एट—अट्ठासी नम्बर मिले है। अव मुझे सारी वातें याद आ गयी। हाँ, तो हम लोगो को तो चटपटा भोजन खिलाया, मगर वीथि को तुमने क्या दिया ?"

भाभी बोली, "इसके लिए तुम्हे चिन्ता करने की जरूरत नही।"

वीथि बोली, "मुझे माँ ने एक रेशमी फ्रॉक खरीद दिया है।"

"यह वात ! वस, एक फ्रॉक ? वाकी किसी ने तुमको कुछ नही दिया ? इतनी मेहनत से तुमने लिखाई-पढाई की और वदले मे बस एक फ्रॉक ही ?"

वात सुनकर वीथि का चेहरा बुझ गया।

भैया वोले, "खेर, तुम मन छोटा मत करो, मैं तुम्हे एक चीज दूँगा।"

"क्या ?"

भैया वोले, "तुम क्या लेना चाहती हो ?"

वीथि वोली, "मैं घडी लूगी।"

"घडी ? इतनी छोटी उम्र मे घडी लेकर क्या करोगी ?"

"मैं आपकी तरह हाथ मे वाधूगी।"

भैया वोले, "छि, इस उम्र मे लडकियाँ कही घडी लगाती हैं ? किसी को घडी लगाते देखा है ?"

वीथि कुछ देर तक सोचती रही, उसके वाद वोली, "फिर मुझे सोने का हार खरीद दीजिए।"

"सोने का हार ? ठीक है, वही ला दूँगा।"

कहकर भैया ने मुक्ति पा ली। वे वोलते हैं और फिर भूल जाते है। अन्त मे हार के वारे मे तकाज़े करते करते जव वीथि ने सभी का जीना हराम कर दिया तो भाभी वोली, "देवर जी, तुम उसके लिए हार वनवा दो। उसके तकाजे के कारण घर मे टिकना मुश्किल हो गया है।"

मैने कहा, "हार बनवा दूँगा, भाभी जी। मगर मेरा कहना है कि आपको सुनीति को भी कुछ-न-कुछ देना ही चाहिए। वीथि के लिए उसने वेहद मेहनत की हे—यहाँ तक कि उसकी पढाई मे भी हज हुआ है।"

भाभी वोली, "तुम सोचते हो कि मने सुनीति को कुछ भी नही दिया है? मुझे क्या उस तरह का आदमी समझते हो?"

"आप दे चुकी हें? अच्छा ही किया। सुनीति सचमुच ही वहुत अच्छी लडकी है। वीथि के लिए वहुत मेहनत की है।"

भाभी वोली, "हाँ, उसी दिन दे चुकी हूँ, जिस दिन वीथि का रिजल्ट निकला था। डेढ सौ रुपये की प्योर सिल्क की साडी खरीद दी है, साथ ही साथ उसकी तनख्वाह मे वीस रुपये की वढोत्तरी कर दी है।"

मैंने कहा, "मगर उसे कभी उस साडी मे नही देखा।"

भाभी वोली, "मैंने भी सुनीति से यही वात कही थी। पूछा था वह साडी तो तुम कभी पहनती नही हो। सुनीति ने वताया कि उतनी कीमती साडी पहनने मे उसे शम लगती हे।"

मैं तो अवाक् रह गया! कीमती साडी पहनने मे शम लगती है!

भाभी वोली, "कीमती साडी, कीमती गहना वगैरह पहनने मे उसे शम लगती है। सुनीति का कहना है, वह गरीव घर की लडकी है, उसे गरीव की तरह ही रहना अच्छा लगता है।"

मैंने कहा, "ऐसा भी तो हो सकता हे कि हमेशा गरीब न रहे। हो सकता हे, किसी दिन वडे आदमी के लडके से उसकी शादी हो जाये। फिर तो उसको कीमती साडी और गहना पहनना पडेगा।"

यह वात मैने एक दिन सुनीति से भी कही थी। उस दिन सुनीति के कॉलेज मे कोई उत्सव था। शायद नाटक या सगीत का कोई आयोजन था। मुझसे रास्ते मे उसकी मुलाकात हो गयी।

पूछा, "अभी कहाँ जा रही हो?"

सुनीति मुझे देखकर ठिठक कर खडी हो गयी थी। उत्तर मे वोली, "कॉलेज।"

"इस वक्त?"

"आज हम पुरानी छात्राओ के पुर्नमिलन का उत्सव है।"

"तुम इस तरह के सादे लिवास मे क्यो जा रही हो? थोडा-वहुत साज-सिगार करने मे हज ही क्या था?"

सुनीति ने इस बात का उत्तर नही दिया। सिर झुकाकर खडी रही।

मैंने कहा, "तुम्हारे पास कोई अच्छी साडी नही हे ?"

"हे।"

"फिर पहनी क्यो नही ?"

सुनीति ने इस बात का भी उत्तर नही दिया।

मैने कहा, "अच्छी साडी पहनने मे तुम्हें शम लगती है ?"

सुनीति ने इतना ही कहा, "हाँ।"

मेने कहा, "अच्छी साडी-ब्लाउज पहनना क्या शम की बात है ? इसके अलावा माथे पर बिन्दी नही लगायी हे, मुह पर पाउडर नही लगाया है। यह सब करने मे तुम्हे शम लगती हे ? यह सब तो हर औरत करती हे।"

सुनीति ने इस बात का भी कोई उत्तर नही दिया। मैं अब खडा नही रहा। मेरे रवाना होते ही सुनीति जिधर जा रही थी उधर ही चल दी।

घर आने पर मैने जब भाभी जी से सब कुछ कहा तो वे बोली, "म जानती हूँ, वह वेसी ही है। जानते हो देवर जी, मे कहूँगी तो तुम यकीन नही करोगे, वह बहुत ही कम खाती है। चिडिया जितना खाती है, उतना ही। बौथि जितना चावल खाती हे उससे भी कम। उस पर हर मगलवार उपवास करती हे।"

भाभी जी की बात सुनकर में आश्चर्य चकित रह गया। कहा, "इस उम्र मे उपवास ? उपवास क्यो करती हे ?"

"मगलवार को भात वगैरह कुछ भी नही खाती है। फरुही-चिउडा वगैरह खाती है। उसका कहना ह कि इससे तबीयत ठीक रहती है। और अगर उसके कमरे के अन्दर जाओगे तो हैरानी होगी।"

"क्यो ? कमरे मे क्या हे ?"

भाभी जी बोली, "देवी-देवताओ की तसवीरा से पूरा कमरा भरा है। कोई काली माँ की तो कोई शिव की।"

मैन पूछा, "और किसी दूसरे की तसवीर नही है ?"

"नही। उस दिन गहरी रात मे नीद टूटने के बाद मैं उसके कमरे की बगल से जा रही थी। देखा, पढना समाप्त कर, माँ काली की तसवीर के सामने खडी है और हाथ जोडकर प्रणाम करती हुई कुछ बुदबुदा रही है।"

मैंने कहा, "देवी-देवताओ को प्रणाम करना तो अच्छी बात है।"

"अच्छी तो है ही। मैं खराब थोडे ही कह रही हूँ? मगर तुम कल्पना नही कर सकते कि कब तक उसकी पूजा का सिलसिला चलता रहा! सोचा, देखू, कब तक पूजा करती है। उसकी पूजा खत्म होने का नाम ही नहीं ले रही थी, आधे घटे तक पूजा का सिलसिला चलता रहा। अन्त मे बहुत देर के बाद कमरे की रोशनी बुझाकर सोने गयी। मैं तो उसका काड देखकर हैरत मे आ गयी। किसी भी लडकी मे इतनी कम उम्र मे देवी देवताओ के प्रति मैंने ऐसी भक्ति नही देखी थी। उसकी जमी उम्र की आज की लडकियो का चरित्र देख ही रही हूँ। पूजा-भक्ति के प्रति उनमे कोई लगाव नही रहता है। बस, सजना-सँवरना और नाटक-सिनेमा के पीछे ही व्यस्त रहती है।"

भाभी की बातो मे कितनी सचाई है, इसका प्रमाण कुछ दिनो के बाद ही मिल गया।

उस दिन दफ्तर से में जल्दी-जल्दी वापस आ रहा था। देखा, सुनीति अकेली ही घर वापस जा रही है। उसके हाथ मे सखुए के पत्ते मे लिपटा अडहुल के फूलो का एक हार है। माथे पर सिंदूर की एक चौडी बिन्दी। सुनीति की दृष्टि मुझ पर नही पडी थी। अपने आप मे डूबी हुई वह तेज कदमो से घर की ओर जा रही है। मुझे मालूम था कि सुनीति उस तरह की लडकी नही है जो सडक पर चलते वक्त इधर-उधर निगाह दौडाती रहती है। मगर मने यह नही सोचा था कि वह इस तरह पूजा के लिए फूल ले आयेगी। मुझ पर नजर पडते ही वह अचकचा उठी। म उसके पास गया। पूछा, "क्या बात हे, आज तुम कॉलेज गयी नही?"

सुनीति बोली, "आज हमारा कॉलेज बन्द हे?"

"क्यो? बद क्यो हे?"

सुनीति बोली, "आज हितसाधिनी व्रत है। इसी से माँ के मदिर मे पूजा करने गयी थी।"

"हितसाधिनी व्रत? यह कौन सा व्रत है?"

सुनीति सिर झुका कर बातचीत कर रही थी। उसी स्थिति मे बोली, "हितसाधिनी व्रत करने से सभी की भलाई होती है।"

"सभी की क्या भलाई होती हे?"

सुनीति ने कहा, "पचाग मे जो लिखा है, वही बता रही हूँ।"

"मगर मैंने तो पूछा है कि क्या भलाई होती है ?"

सुनीति बोली, "इस व्रत का पालन करने से मनुष्य को सुख शांति मिलती है, उसकी अभिलाषा पूर्ण होती है।"

मैने कहा, "तुम्हे कौन-सी अशान्ति है जो इस व्रत का पालन करती हो ?"

सुनीति तत्काल इस बात का उत्तर नही दे सकी। उसके बाद उसी तरह माथा झुकाये बोली, "मैं क्या केवल अपनी ही भलाई के लिए पूजा करती हूँ। जिससे सभी की भलाई हो, इसी उद्देश्य से पूजा करती हूँ।"

"सब का मतलब ?"

"सबका मतलब दीदि, बडे भैया, भाभी जी "

"और किसकी ?"

"और मेरे माँ-बाप की।"

मैंने कहा, "और तुम्हारी अपनी नही ?"

इस बात का उत्तर देने मे सुनीति का माथा जैसे और भी झुक गया। उसके बाद बोली, सभी की भलाई होने से ही मेरी भलाई होगी। मुझ अकेली की कौन सी भलाई होगी ?"

मैंने कहा "देवी-देवताओ से लोग अपनी भलाई के लिए भी प्रार्थना करते है।"

सुनीति बोली, "मैं अच्छी तरह से हूँ ही। मुझे कोई कष्ट नही है।"

उसके बाद तनिक सकोच के साथ बोली, "आपने मेरी जो भलाई की है, मै उसे जीवन-भर भूल नही पाऊँगी। इससे अधिक मेरे जैसा गरीब आदमी और किस चीज की कामना कर सकता है ?"

इतना कहने के बाद वह वहाँ रुकी नही। हम घर पहुँच चुके थे, वह जल्दी जल्दी घर के अन्दर चली गयी।

रात मे भाभी जी से मैंने सुनीति के बारे मे बताया। भाभी जी को तनिक भी आश्चर्य न हुआ। बोली, "बाप रे, तुम्हे उस पगली का वाड मालूम नही है! वह पचाग देख देखकर हर व्रत-त्योहार का पालन करती है। महीने मे पद्रह दिन उसका उपवास करते ही बीतता है। मैं

बहुत समझा चुकी हूँ, मगर वह मानती ही नही। मैं कहती हूँ यह सब व्रत त्योहार करना ही है तो शादी के बाद किया करना। जब तक शादी नही होती है तब तक आराम करो। मगर वह ठहरी पगली लडकी, मेरी बात क्यो मानने लगी ?"

मैंने कहा, "शायद सुनीति के मन मे यह धारणा बैठ गयी है कि व्रत करने से उसे अच्छा पति मिलेगा।"

भाभी जी बोली, "नही, ऐसी बात नही है। उसका कहना है कि उसकी माँ ने उससे कहा है, नियमपूर्वक व्रत त्योहार का पालन किया करो और यही वजह है कि वह वैसा करती है।"

सोचा, ठीक ही है। आज के समाज मे आदमी जिस तरह रह रहा है, उसकी तुलना मे सुनीति का आचार-विचार चाहे जितना ही पुराना क्यो न हो, मगर स्थायी मूल्य उसी का है। खासतौर से भारतीय महिला समाज के लिए। अब भी हमारे इस ससार मे सुख का अगर लवलेश है तो उसका श्रेय मुट्ठी भर धमपरायण स्त्रियो को ही है। भारतीय नारी-समाज की उस धमपरायणता और सत्यबोध के कारण ही अब भी पुरुपगण टिके हुए हैं।

मैंने भाभी जी से कहा, "यह अच्छा ही काम है। आप इसके लिए उससे कुछ मत कहिए। वह जैसा कर रही है, करने दीजिए।"

उसके बाद वीथि की जिम्मेदारी सुनीति पर छोडकर भाभी जी जिस तरह निश्चिन्तता के साथ रहने लगी, मैं भी उसी तरह की निश्चिन्तता महसूस करने लगा।

[चार]

अब उस सोने के हार की बात बताता हूँ।

मेरी भतीजी को भैया ने सोने का जो हार खरीद कर दिया था, उसी सोने के हार की बात।

सोने का यह हार इस कहानी का अनिवार्य उपादान है। एक बात में यही कहा जा सकता कि भैया अगर सोने का हार खरीद कर अपनी लडकी को नही देते तो यह कहानी लिखने की जरूरत ही नही पडती।

सुनीति के आने के बाद हमारी गृहस्थी जिस निश्चिन्तता के साथ चलने की बात थी, उसी निश्चिन्तता के साथ चल रही थी। एकाएक एक मुसीबत आ गयी।

एक दिन, स्कूल के वार्षिक पुरस्कार-वितरण के उपलक्ष्य मे वीथि सालगिरह के मौके पर उपहार मे मिले अपने हार को पहनकर स्कूल गयी थी। मगर वह चोरी चला गया। किसने चोरी की, कब चोरी हुई, वीथि इसके बारे मे कुछ भी बता नही सकी।

उसकी माँ ने पूछा, "हार पहन कर तू कहा-कहाँ गयी थी? कब चोरी हुई?"

वीथि इन बातो का कोई जवाब नही दे सकी। उसकी आँखें छल छला आयी। इतना प्यारा उसका हार कहाँ गया?

वह कहने लगी, "मुझे एक दूसरा हार चाहिए। मुझे एक दूसरा हार खरीद दो।"

घर आने पर भैया को यह खबर मिली। सुन कर बोले, "ऐसी बात?"

बस, इतना ही। इससे ज्यादा कहने या सोचने का भैया के पास वक्त नही है। अपनी गृहस्थी के बारे म सोचने के बनिस्बत भैया को ॉ की ही ज्यादा चिन्ता रहती है।

भैया बीच-बीच मे सिर्फ यही कहते थे, "उतनी फिक्र मत करो, सब ठीक-ठाक हो जायेगा।"

भाभी जी कहती, "सुन रहे हो न देवर जी, अपने भैया की बात सुन रहे हो न। फिक्र किये बगैर कैसे चलेगा? मै अगर फिक्र नही करती तो गृहस्थी चल सकती थी? अगर मैं ठीक वक्त पर बाजार से सामान नही मँगवाऊँ, ठीक वक्त पर रसोई नही पकाऊँ, सभी को वक्त पर खाना नही दूँ तो तुम लोग स्कूल-दफ्तर ठीक समय पर पहुँच सकते हो?"

उसके बाद कभी-कभी कहती, "जी मे होता है, कुछ दिनो के लिए बाहर चली जाऊँ, फिर देखू, तुम लोगो की गृहस्थी कैसे चलती है। काश, ऐसा कर पाती तो सभी की समझ म यह बात आ जाती कि गृहस्थी चलाने के लिए चिन्ता-फिक्र करनी पडती है या नही।"

उसके बाद भैया की ओर ताकती हुई कहती, "तुम तो मुझे चिन्ता-फिक्र करने के लिए मना करते हो, फिर तुम अपने दफ्तर के बारे मे इतना क्यो सोचते रहते हो?"

उत्तर मे भैया मेरी ओर देखकर मुसकरा देते थे। कहते, "अपनी भाभी की बात सुन ली न? ऑफिस और गृहस्थी जैसे एक ही चीज है? ऑफिस का चलना और गृहस्थी का चलना क्या एक ही जैसा होता है? एक कहलाता है घर और दूसरा ऑफिस। घर से ऑफिस की तुलना हो सकती है? मेरे ऑफिस मे मेरे अधीन कितने आदमी काम करते हैं, इसके बारे मे तुम्हारी भाभी कुछ अनुमान लगा सकती है? अभी खाने बैठा हूँ, फिर भी मेरे दिमाग मे ऑफिस की बाते चक्कर काट रही है। कैसे नही चक्कर काटेगी? तुम भी ऑफिस मे ही काम करते हो, तुम्हारे दिमाग मे हर वक्त ऑफिस की चिन्ता नही रहती है? जो लोग किरानीगीरी करते है, उनकी बात ही अलग है। मगर यह तो कोई किरानीगीरी नही है। ये सब बाते तुम्हारी भाभी के दिमाग मे नही आयगी।"

भाभी जी को गुस्सा हो आता।

"अगर घर की बात तुम नही सोच सकते थे तो फिर शादी ही क्यो की? फिर गृहस्थी बसाने को किसने कहा था? मैंने क्या कसम दी थी कि मुझसे ही शादी कर लो। गृहस्थी बसाने के लिए तुम्हारी खुशामद की थी? क्या मैंने तुमसे यही कहा था कि अजी, मुझसे शादी कर

लो, तुम मुझसे शादी नही करोगे तो मैं जिन्दा नही रहूँगी, गले मे फदा डालकर मर जाऊँगी, यह सब तुमसे कहने गयी थी ?"

भैया कहते, "लो, मैंने क्या कहा और तुम्हारी भाभी क्या कह रही हैं ? अब तुम्ही बताओ, मै इस बात का क्या उत्तर दूँ ?"

भैया और भाभी दोनो के दोनो इस तरह की बातो मे मुझे गवाह के रूप मे स्वीकार लेते थे और मैं उन दानो का काड देखकर हँसा करता था। ये सब हमारे घर की अदरूनी तसवीरे हैं।

मगर अब की हार को चोरी के मामले मे मैंने सोचा था, भैया शायद थोडा-बहुत चिन्तित हो उठेंगे। जब ऐसा नही हुआ तो मुझे ही कदम उठाना पडा।

पुलिस-लाइन मेरा अपना ही क्षेत्र है। यद्यपि हमारा इस विभाग से सीधा सबध नही है, फिर भी सभी से मेरी जान पहचान है। हमारे दोस्त-मित्रो के बीच विजय को बहुत ही कम दिनो मे ऊँचा पद हासिल हो गया था। विजय सरकार लाल बाजार के चीटिंग डिपाटमेन्ट का इचाज था।

मैन विजय सरकार को सारी बातें बतायी।

विजय बोला, "फिक्र मत करो। देखो, मैं क्या करता हूँ।"

विजय पक्का आदमी है। दो बार उसे अच्छे काम के लिए पुलिस-मेडल मिल चुका है। जो कार्रवाई तुरन्त होनी चाहिए, उसने की। चारो तरफ आदमी भेज दिये। एक एस० आई० पर इस मामले की खोज-खबर की जिम्मेदारी सौप दी और बाकी पूरी जिम्मेदारी अपने आप स्वीकार ली।

मैंने बहुत-कुछ राहत की साँस ली।

[पाँच]

उन दिनो कलकत्ता शहर मे राहजनी का बाजार गर्म था। हर रोज कही न कही राहजनी की कोई-न कोई घटना होती ही रहती थी! हावडा स्टेशन के प्लेटफाम पर, सडको पर, गलियो और मुहल्ले मे शाम के वक्त औरतो के लिए सोने का गहना पहन कर निकलना खतरे से खाली न था। यही वजह है कि रोल्ड गोल्ड की ज्यादा पूछ होने लगी थी। रोल्ड-गोल्ड की गहने दुकानो मे खरीदने वालो की भीड लगी रहती थी।

तब इस बात की मैने कल्पना नही की थी कि शेर के घर मे ही लोमडी वास करती है, हालाँकि मैं भी पुलिस मे ही नौकरी कर रहा था। पुलिस के आदमी के घर की छोटी लडकी के गले के हार की चोरी होगी, यह बात मेरी कल्पना के परे की चीज थी।

मेरी भतीजी वीथि रोती-धोती रहती थी, "मुझे एक हार खरीद दो।"

भाभी जी उसको डाँटती थी, "तुमने हार क्यो खो दिया। अब मैं तुम्हे हार खरीद कर नही दूँगी।"

सुनीति का मन उदास रहने लगा था।

सुनीति कहती, "गलती मेरी ही है, भाभी जी, मैंने ही उसे हार पहनने को कहा था। मेरे ही कारण उसका इतना कीमती हार चला गया।"

भाभी जी कहती, "स्कूल के पारितोषिक के दिन हार पहनना कौन-सा गुनाह है। उसने जिद की, तुमने भी कहा और मैंने हार पहना दिया। मगर वह तो इतनी बडी लडकी हो चुकी है, हार छीना तो उसको पता ही नही चला?"

मैं कहता, "उसे डाँटने-फटकारने से फायदा ही क्या होने जा रहा है, भाभी जी? आज कल कितनी ही जवान औरतो के गले से गुडे हार

छीन लेते है। उन औरतो की तुलना मे यह निहायत बच्ची है। इसे अभी अक्ल ही कितनी है!"

सुनीति ने पहले दिन से ही रोना धोना शुरू कर दिया था। हमसे आँखे मिलती तो वह अपनी आँखें झुका लेती थी। पहले की तरह भर-पेट खाती भी नही थी। किसी तरह दो कौर निगल कर आँखो की ओट हो जाती थी, जैसे आँखो की ओट होने से ही उसे चैन मिलेगा। उसके बाद कॉलेज जाने के नाम पर या तो वह घर के बाहर चली जाती या अपने कमरे के अन्दर जाकर छिटकनी बन्द कर देती और छिप-छिपकर यातना से छुटकारा पाने की कोशिश करती रहती थी।

मगर वह यातना क्यो सह रही है, यह बात मेरी समझ मे नही आती थी।

भाभी जी ने एक दिन सुनीति को पकडा।

पूछा, "तुम इतना सोचती क्यो रहती हो, सुनीति? तुमने कौन सी गलती की है? मेरी लडकी के हार की चोरी हुई है, तुम्हे क्यो तक-लीफ हो रही है? इसमे तुम्हारा क्या दोष है? हमने कभी कहा है कि हार की चोरी के लिए तुम जिम्मेदार हो?"

सुनीति ने कहा, "गलती मेरी ही है, भाभी जी।"

"क्यो? तुम खुद को दोषी क्यो महसूस करती हो? तुमने कौन-सी गलती की है?"

सुनीति बोली, "मैंने ही सुनीति का साज-सिंगार करने को कहा था, भाभी जी। मैंने ही कहा था कि उसे हार पहना दीजिए, आज सभी देखेंगे।"

"इसमे तुमने क्या अन्याय किया? पारितोषिक के दिन लोग साज-सिंगार करते ही है। साल मे एक ही दिन ऐसा होता है जब पारि-तोषिक दिया जाता है। उसी दिन लोग बढिया खाते-पीते हैं, लडकिया बढिया साडी, ब्लाउज, फ्रॉक पहनती है, गहना पहनती है। उस पर परीक्षा मे उसने श्रम किया था, स्कूल के प्राइज फक्शन मे उसे प्राइज लेने के लिए जाना था, ऐसी हालत मे गहना पहनकर जाना ही उचित था। हमारी बदकिस्मती की वजह से ही हार की चोरी हुई है, उसके लिए व्यर्थ ही तुम तकलीफ झेल रही हो।

सुनीति बोली, "नही भाभी जी, गलती मेरी ही है।

"क्यो, तुम इसे अपनी गलती क्यों कह रही हो ?"

"गलती मेरी ही है" सुनीति ने कहा, "क्योकि में उसके साथ थी भाभी जी, अपने साथ मैं उसे ले गयी थी, इसलिए उचित यही था कि मैं उसे अपने साथ ही ले आती। मै उसके साथ क्यो नही आयी ? क्यो मैंने उसे अकेली छोड दिया ?"

भाभी जी बोली, "तो तुम यह कहना चाहती हो कि तुम रहती तो हार की चोरी नही होती ? बटमार लोग बडी-बूढी औरतो के गले से हार नही निकाला करते ? खेरियत यही कहो कि हार की ही चोरी हुई, तुम रहती तो जान पर भी खतरा आ सकता था। हो सकता है, तुम बाधा डालती और वे चाकू चलाकर तुम दोनो की हत्या कर डालते। इससे तो बेहतर यही है कि एक मामूली हार से ही खतरा टल गया।"

मगर सुनीति का मन उस दिन जो उदास हुआ, बाद मे फिर कोई परिवर्तन नही आया।

भाभी जी बोली, "जानते हो देवर जी, मुझसे ज्यादा तकलीफ तो सुनीति को ही पहुँची है।'

मैंने कहा, "यह बात है ?"

"हाँ, यद्यपि उसमें उसकी कोई गलती नही है।"

बात सही ही हे। सचमुच सुनीति का कोई दोष नही है। उसकी छात्रा के स्कूल मे पारितोषिक वितरण समारोह था। छात्रा ने परीक्षा मे अव्वल दर्जा पाया है। यही वजह है कि सुनीति उसे सजा-धजाकर ले गयी थी। सुना, लौटने के वक्त वीथि की सहेलियाँ दल बाँधकर घर लौट रही थी। आने के समय वीथि ने सुनीति से कहा था। दीदी जी, मै इन लोगो के साथ जा रही हूँ, ये लोग मुझे अपने साथ जाने को कह रही है।"

सुनीति ने सोचा, सहेलियो से मुलाकात हुई है, सभी मिलकर खुशियाँ मनाना चाहती हैं, तो मनाने दो। सोने का नया हार मिला है। बचपन मे सभी को दिखावे का चाव रहता है।

वीथि की सहेलियो ने कहा था, "आप चिन्ता मत करे, दीदी जी, हम उसे गाडी से ले जा रही है, गाडी से ही उसे घर पहुँचा देंगी।"

उसके बाद की घटना विचित्रताओ से भरी हे। सहेलियो के घर पर खान-पान चला था। इसी से वहाँ कुछ देर हो गयी। उसके बाद

वीथि जब अपनी सहेलियो के घर से लौटने लगी तो गाडी खराब हो गयी। कुछ दूर चल कर रुकी तो फिर रुकी ही रह गयी।

वीथि की सहेली का मकान उतना दूर नही था जहाँ से पैदल नही आया जा सकता। वह अपनी सहेली और उसकी दाई के साथ वापस आयी थी। बातचीत करते हुए पैदल आने मे उन्हे कौन-सी असुविधा हो सकती थी ? कुछ भी नही।

उसके घर आने के पहले सुनीति घर पहुँच चुकी थी।

भाभी जी ने सुनीति पर नजर पडते ही पूछा, "वीथि कहा है ? वह तुम्हारे साथ नही आयी ? कहाँ गयी है।"

सुनीति को भी आश्चय लगा। वह बोली, "वह अभी तक आयी नही ?'

"नही।"

सुनीति बोली, "वह अपनी सहेलियो के साथ गाडी से उनके घर पर गयी थी। मुझसे कह गयी कि ज्यादा देर नही लगायेगी, वे लोग वीथि को अपनी गाडी से घर पहुँचा देंगी। मैने हामी भर दी। सोचा, शायद वह अपना सोने का हार सभी को दिखाना चाहती है। मगर अब तक लौटकर आयी क्यो नही ?"

शुरु मे भाभी जी को उतनी चिन्ता नही हुई। मगर शाम ज्यो ही रात मे बदलने लगी, उनकी चिन्ता की मात्रा बढने लगी।

अन्त मे सुनीति ने कहा, "मैं वीथि की सहेली के घर पर जाकर एक बार देख आती हूँ, भाभी जी।"

भाभी जी बोली, "तुम उसका मकान पहचानती हो ?"

सुनीति बोली, "म लोगो से पूछ कर उसके मकान का पता लगा लूगी, आप चिन्ता मत करे।

सुनीति बाहर निकलने जा ही रही थी कि उसी वक्त वीथि घर आयी। उसके साथ उसकी सहेली और उसकी बूढी नौकरानी थी।

शुरू मे भाभी जी की ही नजर उस पर पडी। वे दौडती हुई आयी। बोली, "कहा थी इतनी देर तक ? हम तुम्हारे लिए चिन्तित थे।'

वीथि के बदले उसकी सहेली ने जवाब दिया, "हमारी गाडी एका-एक गडबडा गयी, मौसी जी, इसी वजह से आने मे देर हो गयी, आप अन्यथा मत सोचें।'

लडकी जब वापस आ ही गयी है तो इसमे चिन्ता की कौन-सी बात हो सकती है ? खैर, झझट से छुटकारा मिला। वीथि को पारितोषिक के रूप मे क्या मिला है, सभी उसे ही देखने की हडबडी मचाने लगे। गृहस्थी मे अक्सर इस तरह की झझटे आती है और फिर दूर भी हो जाती हैं। आमतौर से आगे चलकर इन झझटो की बाते याद भी नही रहती और कोई याद भी नही रखना चाहता है। क्योकि उसी समय एक नयी झझट की शुरुआत हो जाती है और पुरानी झझट आदमी के मन से दूर हो जाती है। इसीलिए किसी ने कहा है—आदमी के जीवन का अर्थ ही है कुछ झझटो का इकट्ठा होना। यह बात असत्य नही है। लोग-बाग अपने अतीत जीवन की यदि परिक्रमा करे तो इस बात की सचाई उनकी समझ मे आ जायेगी।

उस दिन वीथि के स्कूल से लौटने के पीछे इतनी बडी प्रतिकूल स्थिति जो छिपी थी, इसकी कल्पना किसने की थी ?

और उस विपयय के साँप ने कुछ देर बाद ही अपना फन फैलाया। तब वीथि की सहेली अपनी बूढी नौकरानी के साथ घर लौट चुकी थी।

"बाप रे, तुम्हारे गले का हार क्या हुआ ? तुम्हारे गले मे मैने नया हार पहना दिया था न ?"

बात तो सही है। वीथि ने भी हाथ से अपना गला छुआ। सचमुच, उसके गले मे हार नही है।

उसके बाद एक-एक कर जिरह होने लगी। उसने कही हार को गले के बाहर निकाला था या नही, किसी ने उससे हार देखने को मागा था या नही—इसी तरह के विविध प्रश्नो की झडी लग गयी। वीथि किसी भी प्रश्न का ठीक ठीक उत्तर नहीं दे सकी। इतने-इतने प्रश्नो से हतप्रभ होकर वह अन्त मे रोने लगी।

बोली, "कुछ भी मेरी समझ मे नही आ रहा है।'

सुनीति बगल मे ही खडी थी। भाभी जी ने उससे पूछा, "सुनीति जब तुम्हारे साथ गयी थी, उसके गले मे हार था ?'

सुनीति बोली, "उस वक्त तो था ही। उसके बाद वह जब प्राइज लेने मच पर गयी तो उस वक्त भी था। उसके बाद की बात मुझे मालूम नही है।

"कही उसकी नौकरानी ने तो नही निकाल लिया ?'

सुनीति बोली, "मै उनके घर से एक बार हो आऊँ, भाभी जी ?

"जाकर क्या करोगी ?"

उसकी नौकरानी से पूछूँगी कि उसने लिया है या नही। या जाकर देख आती हूँ कि कही उसने वही छोड तो नही दिया है।"

हम लोग तब घर पर नही थे—न तो भैया ऑफिस से लौटे थे और न मैं ही। इसलिए सुनीति अकेली ही वहाँ गयी।

वहाँ से एकाध घटे के बाद वापस आयी।

जब हम घर पर नही थे, सुनीति खुद वीथि की सहेली के घर पर गयी, जाकर इस अप्रिय प्रसग के सम्बन्ध मे बातचीत की। उसी दिन सुनीति के जीवन मे घनघोर अशान्ति ने डेरा डाल दिया था। जब वह घर वापस आयी, उसके चेहरे पर रुलाई की छाप थी। उसके मुँह से एक भी शब्द बाहर नही निकल रहा था।

भाभी जी ने सामने आकर पूछा, "क्या हुआ ? तुम इस तरह क्यो कर रही हो ? तुम्हे क्या हुआ ?"

सुनीति जैसे बात करने मे तकलीफ महसूस कर रही हो।

किसी तरह वह बोली, "नही, उन लोगो के घर मे नही मिला।"

भाभी बोली, "नही का मतलब ? उन लोगो ने क्या कहा ? वीथि ने वहा गले से हार उतारा नही था ?"

सुनीति बोली, "उन लोगो का कहना है कि उन्होने हार देखा ही नही था।"

"और उन लोगो की बूढी नौकरानी ने क्या कहा ?"

"उसने भी यही कहा कि हार पर उसकी नजर पडी ही नही थी ?"

सुनीति बोली, "नही, उसने भी नही देखा था।"

"फिर हार कहाँ गया ? वीथि स्कूल से हार पहने उन लोगो के घर पर ही गयी थी और उसके बाद नौकरानी के साथ घर वापस आयी है। इसी बीच क्या हार गले से खुलकर सडक पर गिर गया ?"

सुनीति के पास इसका कोई उत्तर नही है। वह अब वहाँ खडी नही रही। अपने अपराध भाव से अवसन्न होकर वह जैसे अपने पावो के बल खडी रहने मे अपने आप को असमर्थ पा रही हो। जल्दी जल्दी अपने कमरे के अन्दर चली गयी और दरवाजा बन्द कर लिया।

मैं जब घर लौटा तो भाभी जी ने मुझे सारी बातें विस्तारपूर्वक बतायी। मैंने पूछा, "सुनीति कहा है ?"

भाभी जी बोली, "अपने कमरे के अन्दर जाकर उसने सिटकनी बन्द कर ली है और रो रही है।"

"क्यो ? रो क्यो रही है ? आपने सुनीति से कुछ कहा था ?"

"मैं उस पर क्यो बिगड़ूगी, देवर जी ? वह ऐसी लड़की है कि भय से कॉप रही है, उस पर मैं उससे क्या कहती ? इसके अलावा उसका कोई दोष भी नही है । गलती है तो तुम्हारी भतीजी की ही। वह अपनी सहेली के घर क्यो गयी ? उचित तो यही था कि सुनीति के साथ लौट आती।"

इसके बाद मैं कह ही क्या सकता था ?

[छ]

उस दिन विजय सरकार ने एकाएक मुझे बुलावा भेजा ।

"समय निकालकर एक बार मेरे ऑफिस मे आ जाना।" उसने कहा।

मैंने पूछा, "कुछ पता चला ?"

"सब कुछ बताऊँगा। आओ तो सही।"

अपना काम छोड-छाडकर उस दिन उसके पास पहुँचा। ज्योही मैं पहुँचा, विजय बोला, "लगता है, अब तुम्हारी भतीजी के हार का पता चल जायेगा।"

"कैसे ?"

विजय बोला, "एक एप्रवर मिल गया है—यानी सरकारी गवाह।"

"वह कौन है ?"

"हम लोगो का वैरागी। वैरागी सामन्त।" विजय ने बताया।

वैरागी सामन्त हम लोगो की लाइन मे एक अजीब चरित्र है। वह मुझे भी काफी केस दे चुका है। ऐसा कोई काम नही जो वैरागी सामंत से नही हो सकता। ऐसी कोई जगह नही जहाँ उसकी पहुँच न हो। वह गरीब है। नशाखोरी करता है। यही कारण है कि उसे जब तब पैसे की जरूरत पडती है। चाहे वह लाख नशाखोरी क्या न करे, पैसे के लिए उसे बीच-बीच मे हमारे पास आना ही पडता है। मगर वह जिस काम को अपने हाथ मे लेता था उसे बिना पूरा किये छोडता नही था। अगर मैं कहता, "वैरागी, मेरे मित्र का मनीबैग चोरी हो गया है, तुम उसे खोजकर ला दे सकते हो ? बख्शीश मिलेगी।"

वैरागी तुरन्त तैयार हो जाता था।

वह कहता, "मनीबैग ? किस तरह का मनीबैग ? रग कैसा है ? उसके अन्दर कितने रुपये थे ? कब चोरी हुआ है ?"

जब मैं उसे मनीबैग के रग और उसके अन्दर मे पडे रुपये की तादाद की सूचना देता तो वह पूछता, किस मुहल्ले म चोरी हुई है ?"

मैं कहता, "चितपुर मे, चार नम्बर बस के अन्दर।'

वैरागी कहता, "ठीक है सर, आप चिन्ता मत करें।

यह कह कह वह जाने के पहले कहता, "मुझे एक रुपया पशगी के तौर पर दीजिए, सर, कुछ खच वगैरह करना है।"

वैरागी रुपया लेकर सलाम करता और चल देता था। फिर तीन-चार दिनो के बाद माल बरामद कर हाजिर होता था।

हँसते हुए बैग मेरी ओर बढाकर कहता, "अन्दर का माल देख लीजिए सर, जितना रुपया था, पहले मिला लें। उसके बाद बताइए।"

देखता, अन्दर मे जो-जो चीज थी, सभी सही-सलामात है। कागज का एक टुकडा तक गुम नही हुआ है।'

"ठीक है।' मै कहता।

उस समय वैरागी के चेहरे पर हँसी तिर आती थी।

वह कहता, "यह चूकि फटिकदा के दल का काम था, इसलिए मिल गया सर, वरना और भी परेशानी उठानी पडती।' कलकत्ते के तमाम गुडो और नशे के अड्डो से वैरागी का सम्पर्क था। वह जिस तरह उन जगहो मे जाता था, उसी तरह छिपकर हमारे पास भी आता था। वैरागी न होता तो हमारे लिए काम करना मुश्किल था।

वैरागी म एक गुण था और वह यह कि वह कम लालची था। वह गुडा के सरदार की तरह मालदार आदमी होना नही चाहता था। नशाखोरी के लिए पैसे मिल जायें तो वह खुश हो जाता है। मगर सगति-दोष के कारण उसके चरित्र मे एक काला धब्बा लग चुका था। उसी धब्बे के कारण उसे कही कोई नौकरी नही मिलती थी। उसे नौकरी दे और उस पर विश्वास रखे, ऐसा कोई भी नही था।

दो-चार बार उसे नौकरी न मिली हो, ऐसी बात नही है। नौकरी मिलने पर वह कुछ दिना तक काम करता था। मगर दो-चार दिनो के बाद ही उसके बारे म पता चल जाता था और तुरन्त वह नौकरी से हटा दिया जाता था। या ऐसा भी होता कि दल के किसी आदमी को जब पता चल जाता कि वह आराम कर रहा है, नौकरी कर दो पैसे कमा रहा है तो उसे वैरागी को किस्मत पर ... होती। पटठे, तुम साधु बनना चाहते हो, तुम भले आदमी बनना

हो ? लो, तुम्हे मजा चखाता हूँ। बस, या तो एक बेनामी चिट्ठी उसके मालिक के पास भेज देता या मालिक का कोई कीमती सामान किसी से चोरी करा देता। इस कुशलता से काम करता कि वैरागी को उसकी भनक तक नही मिलती। पुलिस आती है, दरोगा आता है, तलाशी चलती है और सारा दोष वैरागी के मत्थे मढा जाता है। वैरागी का पिछला रेकार्ड अच्छा नही है। सब कुछ मिलाकर देखने पर पता चलता है कि दो मे दो जोडने से चार होता है। तब पुलिस वैरागी को गिरफ्तार करती है। उसे कई सालो तक जेल की सजा भुगतनी पडती है।

इस तरह का है यह वैरागी।

वीथि का हार जब खोया था, वैरागी की बात तब मेरे ध्यान मे न हो, ऐसी बात नही। मगर मुझे पता नही था कि वैरागी आजकल जेल के बाहर है या अन्दर। क्योकि वैरागी साल मे नौ महीने जेल मे ही गुजारता है।

वैरागी नही है, यही सोचकर मैंने विजय सरकार को इसकी सूचना दी थी।

विजय ने मुझसे पूछा था, "कही यह तुम्हारे घर के दाई-नौकरो का काम तो नही है ?"

मैंने कहा, "दाई-नौकर का काम होता तो चोरी मेरे घर पर ही होती। मगर घर के बाहर हुई है।"

"तुम्हारी भतीजी प्राइज़ लेने किसके साथ स्कूल गयी थी ? स्कूल की बस से गयी थी ?'

"नही। उसकी मास्टरनी, जो उसे घर पर पढाती है, उसके साथ थी।'

"और लौटती बार ?"

"लौटते वक्त उसकी मास्टरनी उसके साथ नही आयी थी। वह अपनी एक क्लास-मेट के साथ उसके घर पर गयी थी और वहा से होकर वापस आयी थी। उसकी बूढी नौकरानी उसे घर पहुँचा गयी थी।"

"नौकरानी का चरित्र कैसा है ? कही यह उसी का काम न हो!"

मैंने कहा, "लगता तो नही कि वह इतनी हिम्मत करेगी। क्योकि वह उन लोगो की बहुत पुरानी नौकरानी है।"

विजय बोला, "फिर भी मै एक बार थाने मे बुलवाकर उमसे पूछताछ करूँगा।"

दो दिन बाद विजय ने वैसा ही किया। बूढी नौकरानी भय से कांपने लगी। बेवकूफ और ईमानदार आदमी रहे तो उसकी जैसी हालत होती है, उमकी भी वही हालत थी।

पुलिस के पूछने पर उसने बार-बार एक ही बात दुहरायी, "मुझे कुछ भी मालूम नही है, हुजूर, मेरी गृहस्थी मे और कोई नही है। मैं किसके लिए सोने की चारी करूँगी, हुजूर मे अब जिन्दा ही कितने दिनो तक रहूँगी? मुझे पैसे की क्या जरूरत हो सकती है? मैं कुछ भी नही जानती। मुझे छोड दीजिए।"

पुलिस के हाथ मे जितनी तरह की ताकत रहती है, विजय उन सभी ताकतो का अमल मे लाया।

बोला, "फिर तुम क्या यह कहना चाहती हो कि सोने का हार भूत चुरा कर ले गया?"

बूढी नौकरानी बोली, "मै यह बात कहा कह रही हूँ, हुजूर? मै पगली थोडे ही हूँ।"

"सडक पर उमके गले मे किसी ने हाथ लगाया था?"

"नही हुजूर, किसी ने हाथ नही लगाया था। हाथ से छूता तो मैं देखती ही।"

इसी तरह की बहुत सारी बातें पूछने के बाद विजय ने बूढी को छोड दिया।

उसके बाद मुझसे पूछा, "तुम्हारे घर पर जो मास्टरनी रहती है, जो तुम्हारी भतीजी को पढाती है, उसका चरित्र कैसा है?"

मैंने कहा, "बहुत ही अच्छा। एक तरह से उसे खालिस सोना कह सकते हो। या खालिस साने से भी बढकर, अगर कोई चीज हो सकती है तो उसकी तुलना उसी से की जा सकती है।"

"उम्र कितनी है?"

"पचीस या छब्बीस। या ज्यादा से ज्यादा पैंतीस।"

"शादी हो चुकी है?"

"नही।"

"क्यो नही हुई है?"

"न होने का कारण यही है कि शादी कराने वाला कोई नही है। जो लोग हैं—यानी माँ बाप—उनकी माली हालत ठीक नही है। लडकी जो कुछ कमाती है, मा बाप को भेज देती है, उसी से उन लोगो की रोटी चलती है। अभी वह एम० ए० म पढ रही है, इसके बाद नौकरी मिलेगी तो माँ-बाप के पास ज्यादा रुपया-पैसा भेज सकेगी। लडकी की शादी हो जायेगी तो उन लोगों का गुजारा कैसे होगा ?"

"तुम्हारे घर से उसे कितना दिया जाता है ?"

"खाने-पीने के अलावा भाभी जी बीच-बीच मे उसे साडी-ब्लाउज खरीद देती है। वह सब उसे खरीदना नही पडता है। इसके अतिरिक्त उस छोटी-सी लडकी को पढाने के लिए महीने मे एक सौ बीस रुपया देना पडता है। कॉलेज की फीस रखकर बाकी पैसा वह घर भेज देती है। गाव मे बूढे मा-बाप का खच उन रुपयो से मजे मे चल जाता है।"

सब कुछ सुनने के बाद विजय बोला, "मगर चोरबगान के उस केस की बातें तुम्हे याद हैं ?"

"किस केस की बात कह रहे हो ?"

"वही उस मा की जिसने अपनी सौत की छोटी लडकी की हत्या कर दी थी। सौतेली माँ होने के बावजूद वह बडी भली औरत थी। अपनी मा भी शायद किसी को इतना प्यार नही करती होगी। लडकी जब बीमार पडी थी तो सौतेली माँ ने तारकेश्वर जाकर बकरा चढाया था। म उन दिनो उसी थाने मे एस० आई० के पद पर था। मगर उसी मा ने अन्त मे उस लडकी की हत्या क्यो की ?"

मैंने कहा, "वह तो पति के साथ झगडा होने के कारण उसने वैसा किया। पति को हत्या के अपराध मे फासी पर लटकवाने के खयाल से किया था या कह सकते हो कि पति के हाथ से रिहाई पाने की उम्मीद मे ऐसा किया था।"

विजय सरकार बोला, "सो चाहे जिस चीज के लिए हो, मगर थी तो हत्या ही। यह भी तो उसी तरह की बात हो सकती है।"

मैंने कहा, "भाई, मैं भी तो इतने दिनो से पुलिस मे हूँ, लोगों के चरित्र के बारे मे थोडी बहुत जानकारी मुझे भी है। हमारी यह सुनीति और ही तरह की महिला है। मैं उसकी बहुत बार परीक्षा ले चुका हूँ। वह हमेशा कालीघाट मदिर जाती है और खास-खास दिन उपवास रखती है। इसके सिवा जब से मेरी भतीजी का हार चोरी हुआ है तब

से वह अच्छी तरह से खाती-पीती भी नही, सिफ रोती रहती है। अब उसने पूजा पाठ की मात्रा और भी ज्यादा कर दी है।'

"क्यो ?"

"उसकी धारणा है कि उसी के चलते यह नुकसान हुआ। वह अगर मेरी भतीजी को अपने साथ लेकर घर लौटती तो यह काड नही होता। अब यही कहती है कि उसने ऐसी गलती क्या की, क्यो उसने वीथि को उसकी सहेली के घर जाने दिया ?"

मेरा मित्र विजय सरकार कुछ सोचने लगा।

बोला, "मुझे इस मामले मे सोचने का वक्त दो। म वैरागी सामत को बुलवाता हूँ।"

मैंने कहा, "वैरागी सामन्त को ? वह जेल मे है या रिहा हो चुका है ? मुझे तो पता यही था कि वह जेल मे है।"

मेरा दोस्त बोला, "मुझे भी यही पता था। लेकिन उस दिन मेरे एस० आई० दत्त साहब ने बताया कि एक दिन वह थाने मे आया था।"

खैर, उस दिन मै वापस चला आया।

वैरागी सामन्त उसी दिन थाने मे आकर हाजिर हुआ। विजय के सामने आते ही उसे सेल्यूट किया। बोला, "मुझे आपने बुलाया है, हुज़ूर ?"

विजय ने पूछा, "जेल से तुम कब रिहा हुए, वैरागी ?"

"जी, परसा।"

"वहा किस तरह रह रहे थे ?"

वैरागी बोला, "बहुत ही खराब, सर। अब पहले की जैसी जेल नही रही, हुज़ूर। अब हालत खराब हो गयी है। पहले जेल जाता था तो सेहत सुधर जाती थी, अबकी कितना दुबला हो गया हूँ, देख ही रहे है। मेरा वज़न पाच सेर कम हो गया है, हुज़ूर।"

"चोरी क्या करते हो, वैरागी ? अब बन्द कर दो, अब तो दिन-दिन तुम उम्रदार होते जा रहे हो।"

वैरागी ने बडे बाबू के पैरो को छू कर कहा, "आप यकीन कीजिए हुज़ूर, मैं अब चोरी नही करता। मेरे दल के लोग ही झूठ-मूठ मुझे फँसा देते है।"

"झूठ मूठ फँसा देते हैं ? वे लोग तुम्हे झूठ-मूठ फँसा देते हैं और तुम भी उनकी बात मान लेते हो ?"

वैरागी बोला, "हाँ हुजूर, न मानने के सिवा कर ही क्या सकता हूँ ? हमारे दल के लोग रोना-धोना शुरू कर देते है, बहुत ही चिरौरी-विनती करने लगते हैं। कहते है तुझे कोई काम-काज नही है, हमारे बदले तू ही जेल चला जा। इसीलिए उनकी बात रखने की खातिर कोट मे जाकर उनका अपराध अपने ऊपर ले लेता हूँ और उनके बदले जेल की सजा भुगतता हूँ।"

उस लाइन मे इस तरह का रिवाज है, हम इस बात को जानते थे। मगर जानकारी रहने पर भी कोई उपाय नही दीखता था। हमारा काम है किसी न किसी को सजा दिलाना। सो राम के बदले श्याम ही क्यो न हो, इसमे कोई हानि नही। बस, हमे केस का इन्तज़ाम करना चाहिए। केस का इन्तज़ाम करने से ही हमारी पदोन्नति होती है। तब हा, जिस केस मे माल-असबाब के साथ मुजरिम पकडा जाये तो बात ही अलग है। ऐसे मामले मे असली मुजरिम के बदले नकली मुजरिम पेश करने से काम नही चल सकता है। उसमे प्रॉक्सी का सुयोग या सुविधा नही है।

अब विजय ने उसे असली बात बतायी।

"तुम्हे एक काम कर देना है, वैरागी," विजय ने कहा, "हमारी ही लाइन के मेरे एक मित्र है, उन्ही का काम है।"

"बताइए न, काम क्या है, हुजूर मैं तो हुजूर का खिदमतगार हूँ। हुजूर की खिदमत करने की खातिर ही जिन्दा हूँ।"

विजय ने कहा, "मेरे एक मित्र की भतीजी के गले से सोने का हार चोरी चला गया है। तुम्हे उस हार को खोजकर ला देना है।"

"मुझे ?"

अबकी वैरागी जैसे चिहुँक उठा।

थोडी देर तक खामोश रहने के बाद बोला, "कब चोरी हुई है ?"

विजय ने कहा, "चार दिन पहले—बुधवार को, और आज शनिवार है।"

"वैरागी ने कहा, "मुझे तो हुजूर बृहस्पतिवार को जेल से रिहाई मिली है, मैं उस हार की चोरी कैसे कर सकता हूँ ?"

"अरे, नही-नही, तुम क्यो चोरी करने लगे ! मैंने कब यह कहा कि तुमने चोरी की है ? मगर तुम बटमारा को पहचानते हो। उनके सरदार के पास जाकर पता लगाओ।"

वैरागी सामन्त ने शायद अपनी कीमत वढाने की कोशिश की। विजय ने एक ही डाँट मे उसे शान्त कर दिया। अव तक वह 'तुम' कहकर वैरागी का सम्मान कर रहा था।

वोला, "तू फिर जेल के कोल्हू मे जुतना चाहता हे ?"

"क्यो हुजूर, आप ऐसा क्यो कह रहे है। मैंने चोरी करना छोड दिया है।"

"चोरी करना बन्द करने से क्या होगा, असल मे दागी आसामी के रूप मे तेरा नाम हमारे खाते मे है। मैं चाहूँ तो तुझे किसी भी वहाने जेल भेज सकता हूँ।"

वैरागी के हाथ तत्काल भक्ति-भाव से जुड गये।

"हुजूर ही मेरे मालिक है," उसने कहा, "हुजूर ही मेरे माँ-वाप हे, आपकी मेहरवानी से खा-पी रहा हूँ और जिन्दा हूँ। हुजूर जो भी कहेगे, तामील करूँगा। कहिए, मुझे क्या करना है ?"

विजय ने कहा, "फिर सोने का हार खोजकर ला दे।"

"ठीक है, हुजूर, कोशिश करता हूँ।"

वैरागी सामन्त को हिम्मत नही हुई कि अव वह वहा खडा रहे। वडे वावू के कमरे से निकलकर सीधे सडक पर उतर आया।

[सात]

कलकत्ता एक ऐसी जगह है जहा साधु भी है और चोर-डाकू भी। सती-साध्वी भी है और वार-वनिताएँ भी। यह शहर जैसे एक बडी धर्मशाला है। धर्मशाला के दरबो मे जिस तरह धर्म-अधर्म का सह-अस्तित्व रहता है, यहाँ भी वैसा ही है। यहाँ रात जितनी छोटी होती है, गाँवो मे उतनी छोटी नही हुआ करती। रात के अँधेरे मे ही जैसे यहाँ के दिन की लम्बाई बडी होकर सूर्य को और भी अधिक स्थायी बना देती है। यही कारण है कि आदमी यहाँ सोता कम है और जागता ज्यादा है। यहाँ के आदमी रात और दिन को निचोडकर जीवन भोगना चाहते है, इसीलिए मृत्यु यहा बृहत् रूप धारण कर लेती है और जीवन बौना हो जाता है।

बडा बाजार की गद्दियो के दुकानदारो के दरवाजे के पल्ले कानून के मुताबिक ठीक समय पर बन्द हो जाते है, मगर खरीद-बिक्री के खाते को ठीक करते-करते रात गुजर जाती है। होटलो मे कैबरे नृत्य की मजलिस जिस समय खत्म होनी चाहिए, नियमत उसी वक्त खत्म हो जाती है। मगर वही कैबरे नृत्य होटल छोडकर विलासिता से पूर्ण फ्लैट के एक कमरे म फिर से नये सिरे से चालू हो जाता है। वहा नारी माँस की खरीद बिक्री के सिलसिले मे रात कब गुजर जाती है, किसी को इसका पता नही चलता। जब पता चलता है तो उस वक्त किसी के पास सोने का समय नही रह जाता। तब आकाश मे सूर्य उग चुका होता है। तब तुम लोग देर मत करो। तुम्हारे लिए रुपया कमाने का मौसम है। मिडिल-ईस्ट के चोर रास्ते से जहाज पर लदकर सोना आ रहा है, हाग-काग से चोर रास्ते स जापानी कैमरा आ रहा है, दुबाई से स्विट्जरलण्ड की घडी आ रही है, सिंगापुर से पेट की चादी आ रही है। और भी कितनी ही चीजें चोर रास्ते से आ रही है, जिनका हिसाब-किताब तुम्हे छिपाकर रखना है। तुम लोगो के पास समय

नही है, किसी के पास भी नही । दिन के चौबीस घंटा को अगर टुकडो मे बाँट दिया जाये तो भी तुम्हारे रुपया की सख्या से व कदम से कदम मिलाकर चल नही पायेंगे, थककर हाँफने लगेंगे। तब तुम्हे चाहिए विलासिता से पूर्ण फ्लैट की ह्विस्की से मिला हुआ आराम और कैबरे का एक कटाक्ष । उससे तुम्हारी सारी थकावट दूर हो जायेगी । निद्रा के अभाव की पूर्ति हो जायेगी । विनिद्र कलकत्ते का तमाम अवसाद उतने मे ही दूर हो जायगा ।

यह सब बात मुझे भी मालम थी और विजय सरकार को भी मगर हममे हिम्मत नही कि वहाँ पहुँच जाये । हममे भी जो ऊँचे पद पर थे यह उनकी भी शक्ति के बाहर की बात थी । शायद हिन्दुस्तान म किसी की इतनी ताकत नही थी कि उधर झाँकने जाये । क्योंकि उधर झाँकते ही दुनिया की तमाम बडी ताकतो का माथा ठनकने लगेगा । वह बडी ही कठिन जगह है ।

इसीलिए हमे वैरागी सामन्त जैसे एक मामूली आदमी से सहायता लेनी पडी ।

वैरागी सामन्त की पहुँच हर जगह है—पुलिस के थाने से लेकर विलासिता पूर्ण फ्लैट के अन्दर महल तक ।

विजय सरकार को यह बात मालूम थी कि उसने जिस आदमी को पकडा है, उसकी पहुँच हर जगह है । इसीलिए उस पर ही सारी जिम्मेदारी सौंपकर उसने निश्चिन्तता की साँस ली ।

बात झूठी नही है । वैरागी सामन्त थाने से निकलकर सीधे अपने पुराने अड्डे पर पहुँचा । रसेल स्ट्रीट, कमक स्ट्रीट और सदर स्ट्रीट के इलाके कलकत्ता कॉरपोरेशन के खाते मे पॉश एरिया यानी बडे आदमियो के वास करने लायक विलासिता से पूर्ण इलाके के नाम से विख्यात है ।

उनके बीच जो छोटी छोटी दुकाने या झुग्गियाँ है जिस ओर किसी की भी नजर नही जाती वहा वे लोग रहते है जो कलकत्ता कॉरपोरेशन को टैक्स नही देते और कॉरपोरेशन इसकी परवाह भी नही करता । वे लोग कलकत्ते मे वास कर रहे हैं, कलकत्ते के लिए यही सौभाग्य की बात है वरना कलकत्ते की सडको पर झाडू कौन लगाता, कलकत्ते के गृहस्थो के घर मे कौन दाई नौकर का काम कौन करता और रात दो बजे जरूरत पडने पर ठर्रे का इन्तजाम कौन करता ?

वैरागी सामन्त ने एक झुग्गी के सामने आकर पुकारा, "झगड़ू बाबू।"

ऊपर पान-सिगरेट-सोडा-लेमनेड की दुकान है और उसके नीचे, दो फीट गड्ढे के अन्दर झगड़ू का मकान। वही वह सोता है, वही रसोई बनाता है। एक तरह से वही जगह उसकी खुली दुनिया है।

मगर इस खुली दुनिया के बाहर उसकी एक विशाल छिपी हुई जो दुनिया है, आम लोगो को उसकी जानकारी नही है। वहाँ, वह और उसके कुछ शागिदनुमा दोस्त ही इस कलकत्ता शहर के भाग्य-विधायक है। जब कलकत्ते मे बस-ट्राम मे आग लगायी जाती है, या जब साम्प्रदायिक दगा छिडता है या कि जब पर्व-त्योहारो मे सडको पर भीड का सैलाब उमड आता है, झगड़ू प्रत्यक्ष रूप मे कुछ नही करता। मगर सूत्रधार वही रहता है।

ऐसे ही सूत्रधार के पास जाना उस दिन वैरागी को उचित प्रतीत हुआ।

झगड़ू बाबू ने सिर उठाकर देखा तो वैरागी को पहचान लिया।

"क्यो जी, क्या हाल-चाल है ? जेल से कब रिहा हुए ?"

वैरागी ने कहा, "बृहस्पतिवार को।"

"जेल मे बेचू से मुलाकात हुई थी ?"

वैरागी ने कहा, "बेचू से भी मुलाकात हुई थी और भागवत से भी। शशी से भी मुलाकात हुई थी। तब हा, आजकल वहा का हाल-चाल बडा खराब है।"

"क्यो ?"

वैरागी ने कहा, "जेल मे बहुत रद्दी खाना मिलने लगा है। वहाँ की दुनिया ही बदल गयी है।"

"यह बात ! ठीक है, मैं साहब मे कह दूगा। तुम लोग चिन्ता मत करो।"

थोडी देर तक चुप रहने के बाद पूछा "काम करेगा ?"

वैरागी ने कहा, "काम के लिए ही तो आया हूँ, झगड़ू बाबू।"

"लगता है, अब तुझमे सद्बुद्धि जगी है।'

वैरागी ने कहा, "तुम्हे मेरा एक उपकार करना है, झगड़ू बाबू, पुलिस के बडे बाबू का काम है। सोने का एक हार खो गया है। मुझे बुलाकर खोजने को कहा है।'

"हार की चोरी कहाँ हुई थी ? किस मुहल्ले मे ?"
"हम लोगो के मुहल्ले मे ।"
"किस रास्ते मे ?"
"फटिक सिकदार स्ट्रीट मे ।'
"कब ?"
"बुधवार को ।"
"कै बजे ?"
"शाम सात या आठ बजे ।'

झगड़ू बाबू मन ही मन हिसाब लगाने लगा । उसके बाद बोला, "ओह, समझ गया । यह कालू की करतूत है । वह तो कालू का ही एरिया है ।"

"कालू ? आजकल हम लोगो का मुहल्ला कालू के चाज मे है ? माल क्या साहब के पास जमा कर दिया होगा ?"

"जरूर ही जमाकर दिया होगा । बुधवार को बटमारी हुई है और अब तक साहब के पास जमा नही हुआ होगा ? ऐसा कही होता है ? जमा जरूर ही कर दिया होगा ।"

बैरागी ने कहा, "जमा कर दिया होगा तो मुश्किल ही है झगड़ू बाबू । अब मिलना कठिन है ।"

झगड़ू बाबू ने कहा, 'साहब को तू पहचानता ही है । एक बार साहब के हाथ मे पड जाये तो फिर मिलना मुश्किल ही है ।"

बैरागी ने दयनीय स्वर मे कहा, "झगड़ू बाबू, मेहरबानी कर उसे ला दो । नही तो बडा बाबू किसी दिन मुझ पर हमला बोल देगा ।"

झगड़ू बाबू ने अब ज्यादा बातें नही की । उसके चरित्र की यही विशेषता है । बात कम और काम ज्यादा । कम बोलने की कला के कारण ही वह अब तक कलकत्ते पर राज्य करता आ रहा है । कलकत्ते के बडे-बडे रईसो से लेकर बैरागी सामन्त जैसे झिंगी मछली तक उसके मुवक्किल है । उसके पास न तो गाडी है और न ही बैंक मे उसका पैसा जमा है । इनकम टैक्स नामक वस्तु का उसने कभी नाम तक नही सुना है । डाक्टर, वकील, जज, पशकार और मुहर्रिर क्या वस्तु होते हैं उसने अपनी आंखो से नही देखा है । वह सिर्फ पैसे को पहचानता है ।

पैसे को सिर्फ झगड़ू बाबू ही नही पहचानते हैं । दुनिया के तमाम आदमी रुपये के पीछे भाग रहे है । लेकिन उनका भागना और

बाबू का भागना अलग-अलग तरह का है। वे लोग आवश्यकता-पूर्ति के लिए भाग रहे हैं। भोजन, मकान के निर्माण, बाल बच्चों के लालन-पालन, बीमारी से छुटकारा पाने और भविष्य की विपत्तियों का मुकाबला करने के लिए वे रुपयों के पीछे दौड़ लगा रहे हैं। मगर झगड़ू बाबू को दूसरे ही कारण से पैसे की जरूरत है। वह पैसे के लिए पैसा चाहता है। उसे पैसे की जरूरत क्या है, पैसा किस काम में आयेगा, कितने रुपये में कितने आने होते हैं, यह सब समझना उसके लिए जरूरी नहीं है। बस, उसे पैसा चाहिए, सो चाहे किसी भी उपाय से क्यों न हो। एक बात में कहा जाये तो पैसा ही उसके लिए गति-मुक्ति सब कुछ है।

झगड़ू बाबू बचपन में भीख माँगने के लिए कलकत्ता आया था। भीख माँगकर पेट पालना ही तब उसका उद्देश्य था। भीख माँगते-माँगते एक दिन झगड़ू की मुलाकात एक उस्ताद से हुई।

उसी उस्ताद ने झगड़ू को सीख दी कि दुनिया में पैसा ही धर्म-कर्म-मोक्ष सब कुछ है।

"मगर धर्म कर्म-मोक्ष की प्राप्ति कैसे होगी?" झगड़ू ने पूछा था।

उस्ताद ने कहा, "टेढ़े-मेढ़े रास्ते से।"

"टेढ़े-मेढ़े रास्ते का मतलब?"

उस्ताद ने समझा दिया कि टेढ़े मेढ़े रास्ते का अर्थ है असत्य के रास्ते से। सत्पथ पर चलकर कोई आदमी आज तक अनगिनत पैसों का मालिक नहीं हो पाया है, बड़ा आदमी नहीं बन पाया है। दुनिया के इतिहास में ऐसी कोई घटना नहीं है। एम० ए०, बी० ए० पास कर और महीने में पाँच हजार कमाकर कोई बड़ा आदमी नहीं हो सकता है। बड़ा आदमी बनना है तो असत्य पथ पर ही चलना पड़ेगा। बड़ा आदमी बनने के लिए यही असली और अकृत्रिम पथ है।

फिर झगड़ू को क्या करना है।

उस्ताद ने कुल मिलाकर तब इस रास्ते पर चलना शुरू ही किया था। विलायत से लौटा हुआ साहब है। यहाँ के ऑफिस मुहल्ले में आयात-निर्यात का दफ्तर खोला है। उसे गरीबों का माँ बाप ही कहना चाहिए। दया और दान का उसे अवतार कहा जाये तो नाकाफी होगा। साहब ने कृपादृष्टि से झगड़ू की ओर देखा।

एक दिन साहव ने झगड़ू को उस समय अपने घर पर बुलाया जब वहाँ कोई नही था। कमरा भली-भाँति सजा हुआ था। खानसामा, वावर्ची सभी मौजूद थे।

साहव ने पूछा, "तू सचमुच पैसा कमाना चाहता है ? ऐसा कुछ करना चाहता है जिससे ढेर सारा पैसा कमा ले ?"

झगड़ू वोला, "पैसा नही कमाऊँगा तो खाऊँगा क्या, हुजूर ? रोज-गार के लिए ही तो दिहात से कलक्त्ता आया हूँ।"

"फिर एक काम कर। तू कुछ दिनो तक मेरे पास आया कर। जत्र रात गहराने लगे और मेरे कमरे मे कोई नही रहे तभी आना। मैं तुझे पेसा कमाने का तालीम दूगा।"

वस, वही से साहव ने तालीम देना शुरू किया। साहब जो काम प्रत्यक्षत नही कर सकता है, झगड़ू से वही सब काम कराता है। झगड़ू के इलाके के वहुत से आदमी कलकत्ता शहर मे रहते ह। और न केवल उसके इलाके के आदमी ही, वल्कि ऐसे वहुत से बेकार वगाली छोकरे भी है जिन्हे काम नही मिलता, हालाकि उनके लिए नौकरी करना जरूरी है। उसी तरह के वहुत से विश्वासी आदमी झगड़ू की जमात मे आ गये।

झगड़ू ने सभी से कहा, "रुपया ईमान के रास्ते पर चलकर कमाया नही जा सकता है।"

सभी ने पूछा, "फिर किस रास्ते से आयेगा ?"

"टेढे-मेढे रास्ते से।"

टेढे-मेढे रास्ते का अथ क्या होता है, झगड़ू ने यह बात उन लोगो को समझा दी। कलकत्ते मे कितने ही ऐसे पाक है ,जहाँ बच्चे खेलते रहते ह। वस-ट्राम ट्रेन से कितनी ही ऐसी औरतें आया-जाया करती हैं जिनके वदन पर गहना रहता है। उन गहनो को गायब कर देना है। इस तरह गायव करना है कि उन्हे पता ही नही चले।

"मगर उन गहनो को हम कहा वेचेंगे ?'

"उसकी जिम्मेदारी मुझ पर है, तुम लोग लाकर मुझे दे देना।'

"अगर पुलिस पकड ले ?"

"पकडे तो पकडने दो।"

"पकड कर जेल मे ठूस दे तो ?'

"जेल चले जाना। उसके लिए क्षति-पूर्ति के रूप मे मोटी रकम मिलेगी। और अगर माल-असवाब के साथ पकड मे नही आये तो मुकदमा लड़ने के लिए वकील रहेगा। खर्च जो होगा, मैं करूँगा और मामला संगीन हुआ तो नकली आसामी खडा कर दूगा। तुम्हारे बदले वही जेल की सजा भोग आयेगा।'

इसी तरह उस्ताद के बहुत से शागिद जुट गये। उस्ताद भी तब नये नये उपायो की तलाश कर रहा था। ऐसे ऐसे नये उपाय जिसमे चोरी का माल हिन्दुस्तान के बाहर भी खपाया जा सके।

बस, वही से उस्ताद ने चोरी के माल की खरीद-बिक्री का कारो-बार चालू कर दिया। छोटे रूप मे उसकी शुरुआत हुई, फिर कारोबार फलने फूलने लगा। उसके बाद उसके कारोबार की जडें दूर दूर तक फैल गयी।

वैरागी सामन्त भी मनुष्य की विपत्ति के स्रोत मे बहता हुआ एक दिन झगडू बाबू के घाट पर आकर खडा हुआ। अपने चगुल मे फँसते देखकर उसने वैरागी को पहचान लिया।

पूछा, "तेरा नाम क्या है?"

"वैरागी सामन्त।"

"तुम्हारे अपने कौन-कौन है?'

"कोई नही, झगडू बाबू।"

"फिर तू कौन सा काम करता है?"

वैरागी ने कहा, "कुछ भी नही।"

"बगैर कुछ किये तेरा गुजारा कैसे होता है?"

"हुजूर, गुजारा हो नही पाता है"

झगडू ने कहा, "गुज़ारा नही होना है तो फिर मरने के लिए कलकत्ते मे क्यो रह रहा है? कलकत्ते मे इतने-इतने आदमियो का गुजारा हो जाता है और तेरा होता ही नही?"

वैरागी ने कहा, "मेरा अपना कोई नही है, झगडू बाबू, फिर मेरी मदद करेगा ही कौन?"

झगडू ने कहा, "कोई नही है तो इससे क्या आता-जाता है? मैं हूँ, मेरा साहब है। हम तेरी मदद करेंगे।"

"मुझे कौन सा काम करना होगा?"

झगड्_वाबू ने कहा, "यह सब मैं वता दूँगा। आज तू ने क्या खाया है ?"

"क्या खाऊँगा, पैसा तो है ही नही। भीख मागने पर दो पैसे मिले थे, उनसे चना खरीद कर खा लिया।"

"ठीक है, तू ने खाना नही खाया है तो मैं तुझे खाना खिलाऊँगा।"

यह कहकर वगल की दुकान से एक रुपये का पूरी-हलुआ खरीद कर उसे भरपेट खाना खिलाया। वैरागी सामन्त वेहद खुश हुआ।

उसी दिन से झगड़ू से उसकी दोस्ती हो गयी। वह रिश्ता ठीक-ठीक दोस्ती का नहीं वल्कि नौकर, मालिक जैसा था। तभी से झगड़ू वावू के तमाम आदेशो का वैरागी सामन्त पालन करता आ रहा है। झगड़ू वावू ने उससे जव जो कहा है, उसने उसका पालन किया है। कभी 'ना' नही कहा है। स्वेच्छा मे भी किया है और अनिच्छा से भी। हँसते हुए जेल की सजा काट आया है। मगर पुलिस की हजारो वेत की मार पडने पर भी कभी झगड़ू का नाम नही वताया है। न तो झगड़ू का और न साहव का ही नाम जानने दिया है।

आश्चय की वात है कि झगड़ू वावू की जमात मे और भी जितने आदमी हैं, उनम से किसी ने कभी विश्वासघात नही किया है। विश्वासघात न करने के कारण उन्हे क्षति-पूर्ति के रूप म मोटी रकम मिलती रही है। उन लोगो के जेल चले जाने पर उनके बाल-बच्चे और पत्नी को खाने पहनने की कभी कोई असुविधा नही हुई है। उनकी गृहस्थी कैसे चलेगी उसकी चिन्ता उन्ह नही करनी है। साहव ने उन्ह सारी चिन्ताओ से मुक्त कर दिया है।

[आठ]

सुनीति मित्र की कहानी के सदभ मे माहव, झगड़ू और वैरागी सामन्त के बारे मे जो कह रहा हूँ, इसका भी कोई न कोई कारण है।

मैं पहले ही वता चुका हूँ कि आदमी का जीवन इतनी विचित्रताओ से भरा हुआ है कि उसका हिसाव लगाना एक ही जीवन मे सम्भव नही है। जिन्हे हम आँखो के सामने देख रहे है, आखो की ओट होते ही वह कितना विचित्र हो जाता है, यह वात शायद सृष्टिकर्त्ता से भी अगोचर रह जाती है।

वरना छोटी-सी एक लडकी के हार की चोरी की घटना से इतना वडा आविष्कार होता ही क्यो?

वही कहानी सुना रहा हूँ।

हम अपने दैनदिन जीवन मे हर चीज का पालन करते हैं। हावडा और स्यालदह स्टेशन पर गाडिया आकर रुकती है। उन्ही गाडियो से आदमियो का झुड उतरता है। उसके वाद लोग कोट-कचहरी, दुकान, ऑफिस की ओर दौड लगाते है।

यह सब हम लोगो के दैनदिन जीवन के कामो की तालिका है। यह सब हम रोजगार की खातिर करते हैं। बिना किये कोई दूसरा उपाय नही है, इसीलिए करते है। कभी-कभी हम पव-त्योहार पर काली-मदिर जाते हैं, होली दीवाली मे ढोल-ढाक बजाकर आनद मे मशगूल हो जाते है।

यह है कलकत्ते का वाहरी रूप।

इस बाहरी रूप के अन्दर जो अन्दरूनी रूप छिपा रहता है, वह आम लोगो की निगाह मे आता ही नही। उस समय अगर हम चाहे तो कलकत्ते का एक दूसरा रूप देख सकते है। उस कलकत्ते मे अस्पतालो से रोगियो के लिए निर्धारित दूध मछली मास चोरी हो जाते है, रात की ओट मे माँ अपनी लडकी को अपने साथ टैक्सी मे बिठाकर वडे

आदमी के विलासपूण फ्लैट मे पहुँचा आती है। उस कलकत्ते मे रात की शक्ल दिन जैसी होती है और दिन की शक्ल रात जैसी। यही वजह है कि उस कलकत्ते मे शाम होते ही भोर उतर आती है, सूर्योदय हो जाता है और भोर होने पर सूर्यास्त होता है। वहाँ के भूगोल का नियम यही है कि दिन मे काम करो और रात मे मौज मनाओ।

और नीद? वह बेकार का खर्चा है। इसीलिए उस भूगोल के वाशिन्दे बेवजह के खच के झमेले मे नही पडते।

भाभी जी कहती, "बहुत दिन हो गये, देवर जी, मुन्नी के हार का तुम अभी तक पता नही लगा सके।"

भैया खाते-खाते सिर उठाकर पूछते, "मुन्नी का हार? मुन्नी का हार क्या हुआ?"

"तुम चुप रहो।"

यह कहकर भाभी जी मुझसे कहती, "सुन लिया न देवर जी? इतने-इतने रुपयो का हार चोरी चला गया, उसके बारे मे कितनी ही बाते हो चुकी है, उसके बाद तुमने थाने मे खबर भेजी, फिर भी कह रहे है किसका हार! यह तो यही हुआ कि सातो काड रामायण पढने के बाद पूछे कि सीता किसका बाप था।" अधिकाश दिन, जब हम खाने की मेज पर बैठते, सुनीति भाभी जी की सहायता किया करती थी। उस दिन सुनीति पर नजर नही पडी।

मैंने पूछा, "आज सुनीति दिखायी नही पड रही है। वह कहा गयी है?"

भाभी जी बोली, "वह काली मदिर गयी है।"

"काली मदिर का मतलब? आज वहा क्या है?"

भाभी जी बोली, "तुम्हे मालूम नही? आज विपत्तारिणी व्रत है।"

"विपत्तारिणी व्रत? इस व्रत का पालन करने से क्या होता है?"

भाभी जी बोली, "सारी विपत्ति दूर हो जाती है।"

मैंने कहा, "सुनीति किस विपत्ति मे है कि उसे विपत्ति दूर करने की जरूरत पडी?"

भाभी जी बोली, मैंने भी उससे पूछा था। उसने बताया कि उसकी माँ ने उसे हर का व्रत पालन करने को कहा है। वह बचपन से ही व्रत का पालन करती आ रही है। उसने कहा तो फिर मैं बाधा क्यो पहुँचाती?"

सोचा, ठीक ही कह रही है। जिसका जैसा स्वभाव होता है उसका कम भी वैसा ही हुआ करता है। और सिर्फ स्वभाव नहीं, विश्वास भी। आदमी विश्वास के अनुसार ही काम किया करता है। उससे फल की प्राप्ति हो या न हो, लेकिन वह विश्वास का ही पकड़कर अपना काम करता जायेगा। सुनीति के स्वभाव का अर्थ खोजकर ही किसी ने उसका नाम सुनीति रखा था। सुनीति जिस दिन से हम लोगों के घर आयी है, उसी दिन से देखा है, उसके आचार-विचार, चाल-चलन सब कुछ में 'सुनीति चरित्र' की स्पष्ट छाप है।

हम लोगों के पड़ोसियों में से बहुतों ने हम से कहा है, "इसी तरह की किसी लड़की की तलाश कर दें, अपनी लड़की के लिए रखना है।"

भाभी जी कहती, "कहाँ मिलेगी दीदी, हमारे भाग्य से सुनीति हमें मिल गयी है।"

कोई-कोई पूछती, "शादी होने के बाद वह चली जायेगी न?"

भाभी जी कहती, "शादी के बाद क्यों, शादी होने के पहले भी जा सकती है। वह तो परायी लड़की ठहरी, हम उसे रोककर रख नहीं सकते, माँ बाप की लड़की है, उन्हीं के पास चली जायेगी या शादी होगी तो ससुराल चली जायेगी।"

सुनीति सुनती तो हँस देती। कहती, "मैं आपको छोड़कर नहीं जाऊँगी, भाभी जी। आप जब तक मुझे अपने चरणों के तले आश्रय देती रहेंगी, तब तक रहूँगी।"

भाभी जी कहती, "बापरे, फिर क्या तुम हमेशा अनब्याही रहोगी? विवाह नहीं करोगी? शादी-ब्याह हो जायेगा तो तुम्हें ससुराल जाना ही पड़ेगा।"

सुनीति कहती, "नहीं भाभी जी, फिर मैं शादी करूँगी ही नहीं। एम० ए० पास करके नौकरी करूँगी।"

भाभी जी कहती, "नौकरी करना हो तो शादी नहीं करनी चाहिए? कितनी ही ऐसी लड़कियाँ हैं जो नौकरी करते करते शादी कर लेती हैं।"

सुनीति कहती, "नहीं भाभी जी, मैं शादी नहीं करूँगी।"

"क्यों? किस दुख के चलते शादी नहीं करोगी?"

भाभी जी सुनीति की बातें सुनकर हैरत में आ जाती थी। वे कहती, "शादी ने कौन-सी गलती की है?"

सुनीति कहती, "नही भाभी जी, मुझे शादी करन का मन नही है।"

भाभी जी कहती, "अभी मन नही है, मगर शादी करने के बाद सब ठीक हो जायेगा।"

भाभी जी सुनीति की बाते मुझे बताती थी। दुनिया म कितनी किस्म की पगली लडकिया हो सकती है, उसी दृष्टान्त के तौर पर मैं सुनीति मित्र की जीवन-चर्या की बाते सुना करता था। दुनिया के सभी आदमी एक ही किस्म के नही हो सकते। आदमी के जीने का ढग अलग-अलग तरह का होता है। इसलिए सुनीति मित्र के कारण मेरे लिए चिन्ता की कोई बात नही थी। सुनीति मित्र भी विधाता पुरुष की ही सृष्टि है। दसियो और-और आदमी की तरह ही उसका नपा-तुला चरित्र होना चाहिए, इसका कोई मानी नही। विचित्रता ही यदि ससार का नियम है तो सुनीति मित्र भी उसी तरह की एक विचित्रता है। इसके लिए मुझे चिन्ता करने की कौन-सी बात हो सकती है?

विजय ने जिस दिन मुझे बुला भेजा था, उसी दिन से मै वैरागी सामन्त के बारे मे सोचने लगा था।

विजय ने कहा, "लगता है, अब मामले का सुराग मिल जायेगा।"

मैंने पूछा, "कैसे? वैरागी ने कोई सकेत दिया है?"

विजय ने कहा, "एक तरह से सकेत दे ही चुका है। वह बेहद डर गया है। समझ गया है कि अगर हार लाकर नही देना है तो मैं उसे किसी न किसी बहाने जेल भिजवा दूँगा। पट्ठा जेल के कोल्हू मे जुतते-जुतते इतना काबू हो गया है कि अब जेल के नाम से ही डर से काँपने लगता है।"

"उसके बाद?"

"मैंने सादे लिबास म अपना एक कॉन्स्टेबल उसके पीछे लगा दिया था। वह सादे लिबास मे उसका पीछा करने लगा।"

"फिर?"

"पीछा करने पर उसने देखा, वैरागी अपने डेरे पर नही गया। थाने से निकलकर सीधे रसेल स्ट्रीट की तरफ गया।"

"रसल स्ट्रीट क्यो?"

"वहाँ झगडू के घर पर। झगडू को पहचानते हो न? कम से कम उसका नाम तो अवश्य ही सुना होगा।"

सच कहने मे हर्ज ही क्या, झगडू नामक किसी व्यक्ति का नाम मैने नही सुना था, क्योंकि झगडू जैसे आसामियो के नाम से हमारे डिपार्टमेन्ट को कोई फायदा नहीं होता है। हम लोगा का काम कुछ और ही तरह का है और विजय का काम कुछ और तरह का। हर प्रकार के काम के लिए हर प्रकार के विभाग की व्यवस्था है ?

चूकि यह सब बात पाठको के लिए अनावश्यक है, इसलिए उचित यही है कि उसका यहाँ उल्लेख नही किया जाये। सिर्फ इतना ही कहना है कि हम हालाँकि पुलिस लाइन मे काम करते थे, मगर हमारा काम एक दूसरे से पूणतया भिन्न था। भिन्न रहने पर भी हम एक-दूसरे के परिपूरक थे और परिपूरक रहने के नाते ही मुझे अनिवार्यतया विजय की जरूरत पड गयी थी।

मैंने विजय की बात के उत्तर मे कहा, "नही भाई, मैंने झगडू का नाम नही सुना है।"

विजय बोला, "नही सुना है तो अच्छा ही किया है, सुनना तुम्हारे लिए कोई जरूरी नही है। मैं जो कुछ जानता हूँ, वही तुमसे कह रहा हूँ, और जो कुछ करना होगा, मैं ही करूँगा, तुम्ह कुछ भी नही करना है। मेरे द्वारा भेजे गये आदमी ने जब देखा, वैरागी झगडू के पास गया है, तो लगता है इसमे ब्लेक प्रिंस का हाथ है।'

"ब्लैक प्रिंस ? ब्लेक प्रिंस का मतलब ?"

विजय हँसने लगा।

बोला, "हम लोगो के डिपार्टमेन्ट के खाते मे उसके नाम की बगल मे ब्रैकेट मे लिखा हुआ है 'ब्लेक प्रिंस'। यानी काला राजकुमार। उस आदमी की देह का रग काला है मगर वह अपार सपत्ति का मालिक है। प्रिंस के जैसा ही उसका चाल-चलन है। इसीलिए उसका नाम ब्लेक प्रिंस है।"

मैंने पूछा, "उसका असली नाम क्या है ?"

विजय ने कहा, "वह एक अजीब ही कहानी है। सुनो।"

विजय से जब मैंने उस घटना के बारे मे सुना तो मुझे हैरानी इस बात पर हुई कि कलकत्ता शहर मे ऐसा भी आदमी है जो माथा ऊँचा-कर और सीना ताने चलता है।

विजय कहानी कहने लगा।

[नौ]

कालीपद दे ने एक दिन इस धरती पर जन्म लिया था। और-और साधारण आदमियों की तरह वह भी इस धरती की मिट्टी पर पैदा हुआ था। मगर उसके बाद ऐसा हुआ जो सोचा नही जा सकता।

और आश्चर्य की बात है कि वही कालीपद दे किसी दिन मेरे टयटर रह चुके है।

विजय ने आलमारी से उस फाइल को बाहर निकाला।

विजय ने कहा, "देखो, यह उसका फोटो है।"

फोटो पर नजर पडते ही मैं चिहुँक उठा।

"मैं इन्हे पहचानता हूँ।" मैंने कहा।

"कैसे ?"

"वे मेरे प्राइवेट टयूटर रह चुके हैं। बचपन मे मुझे पढाते थे। अच्छे-अच्छे उपदेश देते थे। जीवन मे उन्नति करने के लिए किन-किन बातो की जरूरत पडती है, मुझे सिखाते थे। वे तुम्हारी फाइल मे कैसे आये ? उनका नाम ब्लेक प्रिंस कैसे पडा ?"

विजय ने कहा, "पोर्तुगीज जहाज के एक कप्तान मिस्टर कॉस्टेलो ने उसे यह नाम दिया था। कॉस्टेलो ने ही के० पी० दे को ब्लेक प्रिंस कहकर रातो-रात नामी आदमी बना दिया।"

कहाँ वे मेरे प्राइवेट ट्यूटर कालीपद दे थे और कहा अब एक विदेशी ने आकर उन्हे ब्लेक प्रिंस बना दिया। भाग्य विधाता का यह सचमुच ही एक विचित्र परिहास हे।

मास्टर साहब की याद मेरे मन मे ताजा है। सिर के बाल सामने की ओर कघी किये हुए रहते थे। तब माग काढना उनके लिए विलासिता का सूचक था। पहनावे के रूप मे उनके वदन पर खादी की धोती और कुरता रहते थे। पाँवो मे मामूली चप्पल। पेसे की हमेशा तगी रहती थी। मगर इसके लिए उनमे कोई कुठा नही थी। तब वे आदश के लिए

[दस]

उस दिन बिस्तर पर लेटने के बाद मेरी आखो मे नीद ही नही आयी।

कालीपद दे। मनुष्य के चरित्र की नीव सम्भवत बचपन मे ही पड जाती है। उसी पर मनुष्य के जीवन की शानदार इमारत बनती है। याद आया, उसी कालोपद दे ने मेरे 'मैं' की इमारत उस दिन बना दी थी वरना आज जो मैं हूँ वह 'में' हो सकता ह, दूसरा ही 'में' हो जाता। गणित मेरे लिए यमराज के समान था और मैं था आलस का बादशाह। किसी भी दिन उनके दिये हुए सबक को तैयार करके नही रखता था। वह जैसे मेरे स्वभाव का अग ही हो गया था। उतने नियम के पाबद शिक्षक मे पढने के बावजद मेरा आलसी स्वभाव अब भी दूर नही हुआ है। मगर म उनकी नियम की पाबन्दी और निष्ठा देख चुका हूँ। मास्टर साहब इतिहास और गणित के छात्र रह चुके थे। इतिहास और गणित दोनो विषयो मे उनकी समान गति थी। किसी मकान के इकमजिले मे एक कमरा किराये पर लेकर रहते थे। वही वे सोते थे, खाना खाते थे और रसोई पकाते थे। प्रात काल चार बजे उठकर गीता का पाठ करते थे। उसके बाद आकाश का धुधलका जब हलका हो जाता तो वे टहलने निकलते। घर लौटकर रसोई बनाते। रसोई का मतलब चावल और भुर्ता। जरा सा मक्खन मिलाकर चावल खा लेते थे और स्कूल के मार्निग सेक्शन का क्लास लेने चले जाते थे। मार्निग सेक्शन मे छोटी छोटी लडकिया पढा करती थी। लडकियो की पढाई खत्म होते ही साढे दस बजे दिन से 'डे क्लास' शुरू हो जाता। उस वक्त हम पढते थे। तीसरे पहर चार बजे तक पढाकर वे घर लौट आते थे। उसके बाद रसोई वगैरह का काम समाप्त कर साढे सात बजे शाम को मुझे पढाने आते थे।

दिन भर मे बस दो बार ही खाना खाते थे। आहार भी बढा

प्राणो का भी न्याछावर कर सकते थे। इतना महान था उनका चरित्र। याद है, वे कहा करते थे, "आदमी का जीवन केवल भोग के लिए नही, त्याग के लिए भी होता है। भोग से कोई आदमी महापुरुष नही बन सका है। जो आदमी महापुरुष बना है उसने अपने त्याग के माहात्म्य से इस दुनिया को कई कदम आगे बढा दिया है।"

उसके बाद वे भगवान बुद्ध, शकराचाय, श्री चतन्यदेव, परमहस रामकृष्णदेव, स्वामी विवेकानद और नेताजी सुभाष चद्र का दृष्टान्त प्रस्तुत करते थे। साथ ही साथ वे और भी कितन ही महापुरुषा के नाम का उल्लेख करत थे। आज मुझे उन महापुरुषा का नाम याद नही है।

विजय से जब उन मास्टर साहब के जीवन के क्रमिक विकास की कहानी मैंने सुनी तो हैरत मे आकर मैने सोचा, क्या ऐसा भी होता है। इतने दिना से मै पुलिस की नौकरी करता आ रहा हू, इतने इतने लागा से मिल जुल चुका हूँ, इतना देख-सुन चुका हूँ, इतने देशो का भ्रमण कर चुका हूँ परन्तु वसे आदमी का, उस तरह के चरित्र का, ऐसा क्रमिक परिवत्तन मैन कभी नही दखा है।

भाभी जी ने पूछा, "इतना क्या साच रहे हो, देवर जी ?"

मैंने कहा, "आज कल दफ्तर का काम काज बहुत बढ गया है।"

"दफ्तर का काम-काज ? दफ्तर के काम-काज के चलते तुम्ह घर लौटने मे इतनी देर हो गयी।"

मन झूठी बात ही बतायी, "हाँ।"

भाभी जी ने पुन पूछा, "हार का कुछ पता चला ?"

"नही," मैंने कहा, "विजय अब भी कोशिश कर रहा है, देखिए क्या होता है।"

मैंने उनसे यह नही कहा कि विजय न वैरागी सामन्त को बुलाकर हार निकाल देन को कहा ह, या सादे लिबास म उसके आदमो न वरागी सामन्त को रसेल स्ट्रीट स्थित झगडू के मकान म जाते दखा है। यह भी नही बताया कि झगडू ब्लेक प्रिस का आदमी ह और ब्लेक प्रिस का नाम असली कालीपद द है और वे मरे बचपन क समय मर शिक्षक रह चुके है। नही कहने का कारण असल मे यह है कि हार का जब तक पता नही चलता, तब तक यह बात किसी का बताना खतरे स खाली नही।

[दस]

उस दिन बिस्तर पर लेटने के बाद मेरी आखो मे नीद ही नही आयी।

कालीपद दे ! मनुष्य के चरित्र की नीव सम्भवत बचपन मे ही पड जाती ह। उसी पर मनुष्य के जीवन की शानदार इमारत बनती है। याद आया, उसी कालोपद दे ने मेरे 'मैं' की इमारत उस दिन बना दी थी वरना आज जो मैं हूँ वह 'मे' हो सकता ह, दूसरा ही 'म' हो जाता। गणित मेरे लिए यमराज के समान था और मैं था आलम का बादशाह। किसी भी दिन उनके दिये हुए सबक को तैयार करके नही रखता था। वह जैसे मेरे स्वभाव का अग ही हो गया था। उतने नियम के पाबद शिक्षक से पढने के बावजूद मेरा आलसी स्वभाव अब भी दूर नही हुआ है। मगर म उनकी नियम की पाबन्दी और निष्ठा देख चुका हूँ। मास्टर साहब इतिहास और गणित के छात्र रह चुके थे। इतिहास और गणित दोनो विषयो मे उनकी समान गति थी। किसी मकान के इकमजिले मे एक कमरा किराये पर लेकर रहते थे। वही वे सोते थे, खाना खाते थे और रसोई पकाते थे। प्रात काल चार बजे उठकर गीता का पाठ करते थे। उसके बाद आकाश का धुधलका जब हलका हो जाता तो वे टहलने निकलते। घर लौटकर रसोई बनाते। रसोई का मतलब चावल और भुर्ता। जरा सा मक्खन मिलाकर चावल खा लेते थे और स्कूल के मानिग सेक्शन का क्लास लेने चले जाते थे। मानिग सेक्शन मे छोटी-छोटी लडकिया पढा करती थी। लडकियो की पढाई खत्म होते ही साढे दस बजे दिन से 'डे क्लास' शुरू हो जाता। उस वक्त हम पढते थे। तीसरे पहर चार बजे तक पढाकर वे घर लौट आते थे। उसके बाद रसोई वगैरह का काम समाप्त कर साढे सात बजे शाम को मुझे पढाने आते थे।

दिन भर म बस दो बार ही खाना खाते थे। आहार भी बडा

सात्विक रहता था। बाकी समय चाय, बीडी, सिगरेट, पान, सुँघनी किसी भी चीज का सेवन नही करते थे। सुनने म आता था, मुझे पढाने के बाद घर जाकर काफी रात तक धार्मिक ग्रन्थो का परायण करते रहते है।

उन दिनो, अपनी उस कच्ची उम्र मे, मैं मास्टर साहब को जितनी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था, उतना उनसे डरता भी था।

जब मेरी उम्र कुछ ज्यादा हुई, एक दिन सुना, मास्टर साहब ने नौकरी छोड दी है। सुनकर मुझे हैरानी हुई। क्योकि सबसे पहले इस बात का पता मुझे ही चलना चाहिए था।

उस दिन जैसे ही मास्टर साहब आये, मैंने पूछा, "आपकी तबीयत खराब है क्या सर ?"

देखा, मास्टर साहब का मन बडा ही बेचैन है। अनमना जैसा। लगा, दिन भर चहल कदमी करते रहते है। वे क्यो बेचैन है, यह बात मेरी समझ मे नही आयी। उन्होने भी बात खुलने नही दी और मुझे चूँकि उतना अधिकार नही था, 'इसीलिए मैंने भी दबाव नही डाला।

बस, वही उनका आखिरी पढाना था। अपने सहपाठियो से सुना, उन्हे जहाज मे कोई नौकरी मिल गयी है।

मेरे साथी और मैं यह सुनकर आश्चय मे खो गये। मास्टर साहब जहाज की नौकरी करेगे ? फिर जहाज म भी स्कूल हुआ करता है ? हो सकता है, हो। जो लोग जहाज मे बरसो तक रहते है, उनके बाल-बच्चो को पढाने के लिए, हो सकता है, मास्टर की जरूरत पडती हो।

सो जहाज भी न तो इगलिश कम्पनी का है और न अमरीकी कम्पनी का, बल्कि पातगीज कपनी का।

जीवन के हर क्षेत्र मे जिस तरह एक स्तर होता है, मनुष्य के मन का भी सम्भवत एक स्तर-विभाग हुआ करता है। यही वजह है कि शिशु-मन के लिए जो चरम सत्य है, यौवन के स्तर मे वह असत्य प्रमाणित हो जाता है। मेरे साथ भी यही बात हुई। पुराने मास्टर साहब की जगह नये मास्टर साहब आये। अतीत को पीछे ठेलकर तब वर्तमान ही मेरे लिए चरम सत्य बन गया। और भविष्य के आग्रह से एक दिन अतीत की छाप हमेशा के लिए मिट गयी।

इसके बाद बहुत दिनो तक मास्टर साहब के बारे मे कुछ पता नही चला।

कहा जा सकता है कि मास्टर साहब मेरे जीवन से घुल-पुँछ गये। परन्तु सयोगवश एक दिन उनसे भेट हो गयी।

वह एक अप्रत्याशित साक्षात्कार ही था।

कॉलेज से लौटकर मैं सिनेमा देखने गया था और अपने एक मित्र के साथ साहबी मुहल्ले से होता हुआ लौट रहा था कि एकाएक बारिश होने लगी। बारिश के पानी से बचने के लिए हम एक मकान के पोर्टिको के नीचे आकर खडे हो गये। अन्दर से पियानो की आवाज आ रही थी।

मित्र ने पीछे की तरफ मुडकर देखा। अब मैं भी उस स्थान के माहौल के बारे मे सचेत हुआ। देखा, घर साहबी मुहल्ले मे रहने पर भी वह एक पुराना मकान है। हरदिया दीवार से बालू का पलस्तर झड रहा है। मगर मकान की छत काफी ऊँची है। लगा, किसी जमाने मे कोई बडा साहब इस मकान का मालिक रहा होगा। अब ऐंग्लो-इडियनो के लिए छोड दिया है।

मित्र ने वहाँ के माहौल का मुआयना करके कहा, "ये लोग सच-मुच बहुत सुखी है।"

मैंने उसकी बात का विरोध नही किया। 'सुख' शब्द बडा ही सापेक्ष है। जो आदमी झोपडी मे वास करता है उसकी तुलना मे लकडी के बने मकान मे रहने वाला सुखी है। या जो आदमी धोती-कुरता पहनता है, उसकी तुलना मे टेरेलिन पहनने वाला सुखी है। आम धारणा यही है। मगर वास्तव मे सचाई क्या यही है?

इन बातो पर तर्क किया जा सकता है परन्तु तर्क से हम किसी निष्कर्ष पर नही पहुँचेगे, इसीलिए मैंने चुप्पी साध ली। बारिश होने की उम्मीद मे अँधेरे आसमान की ओर देखता हुआ अनुमान लगाने लगा कि कब तक हमे यहाँ कैदी की हालत मे रहना पडेगा।

और तभी किन्ही की बातचीत की फुसफुसाहट और हँसी की खिल-खिलाहट सुनकर मैंने पीछे की ओर देखा। देखा, दो मजिले से एक-मजिले पर उतरने वाले लकडी के बने, रग-उखडे जीने से उतर कर एक मर्द और एक ऐंग्लो इडियन-महिला सामने खडी एक गाडी की ओर तेज कदमो से बढ रहे है।

उन्हे रास्ता देने के खयाल मे हम हटकर एक किनारे खडे हो गये।

हवा मे एक मीठी गंध तैरने लगी। और वे दोनो ज्यो ही गाडी के अन्दर बैठे, गाडी धुआँ उगलती हुई बारिश के बीच खो गयी।

मगर यह सब एक क्षण के बीच ही हो गया।

और उस एक झलक में ही हम दानो के मुँह मे एक ही साथ निकल पडा, "मास्टर साहब हैं न ?"

पोर्टिको के ऊपर कम पावर की बिजली का बल्ब जल रहा था। उसी की रोशनी से जितना जा देखा जा सकता है, हमने उतना-भर ही देखा था। हो सकता है, हमने देखने मे गलती की हो। हो सकता है कोई दूसरा ही हो। यो कलकत्ता शहर मे मिलती जुलती शक्ल के आदमी अक्सर दीख जाते है। इसके अलावा मास्टर साहब ठहरे खादी धारी आदमी। वे तो पोतगीज जहाज मे नौकर होकर हिन्दुस्तान की सीमा के बाहर विदेश मे भ्रमण कर रहे है। फिर वे इस तरह का कीमती सूट क्यो पहनेंगे ? उनके साथ इस तरह की ऐंग्लो-इंडियन लडकी ही क्या रहेगी ? इसके अतिरिक्त वे इस तरह के स्थान मे क्यो आयेंगे ?

मित्र बोला, "कोट पैंट मे रहने पर भी मुझे लगा कि हम लोगो के मास्टर साहब ही है।"

मैंने भी हामी भरी, "मुझे भी वैसा ही लगा।"

मित्र बोला, "लगता है देखने मे गलती हुई।"

मैंने उसकी हाँ मे हाँ मिलाते हुए कहा, "हो सकता है। मुझे भी लग रहा है कि मैंने देखने मे गलती की है।'

इस घटना के बाद हम दोनो के ध्यान से वह प्रसग उतर चुका था। इतिहास के आवर्तन-प्रत्यावर्तन के कारण हमारे देश के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और भौगोलिक दृष्टिकोण मे भी एक परिवर्तन आ गया था। देश के आदमी और उनके मानदड मे रातो रात एक बदलाव आ गया था। पहले हमारे आदर्श थे स्वामी विवेकानन्द, परमहंस रामकृष्ण देव, महाप्रभु चैतन्य, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और राम मोहन राय। मगर देश मे आजादी आते ही हमारा आदर्श हिन्दु सिनेमा के स्टार या क्रिकेट के खिलाडी हो गये। समाज मे जिनके पास अनगिनत पैसे थे उन्ही के सम्मान मे वृद्धि होने लगी। सिनेमा-स्टारों के सूट, बाल और साटी-ब्लाउज के अनुकरण पर हम अपनी पोशाक की स्टाइल बदलने लगे। चरित्रवान या भक्त आदमी को छोडकर हम पैसे वालो

का गुणगान करने लगे। यानी जिनके हाथ मे ज्यादा वोट है, हम उन्हे नाना प्रकार के सम्मानो की उपाधि से विभूषित करने लगे। रातो रात हमारे मन मे यह धारणा बँध गयी कि स्वाधीनता पाकर हम अँग्रेज और अमरीकी जनता के स्तर पर पहुँच गये है, हम उनके समकक्ष हो गये है।

ऐसी परिस्थिति मे जैसी हालत होनी चाहिए, हमारी हालत वैसी ही हो गयी। हम आदर्शच्युत हो गये। हम मानव से अमानव बन गये।

[ग्यारह]

मैंने पूछा, "उसके बाद ?"

विजय ने कहा, "मगर इसके लिए सिर्फ कॉस्टेलो साहब ही जिम्मेदार नहीं हैं। कह सकते हो कि हम भी जिम्मेदार हैं। एक आदर्श आदमी हमारे समाज की आदर्श भ्रष्टता के कारण हमेशा के लिए आदर्श भ्रष्ट हो गया। उसके जैसे आदमी की पोर्तुगीज जहाज के कैप्टन से कैसे जान पहचान हुई, यह भी एक आश्चर्यजनक घटना है।"

दिसम्बर का महीना था। बड़े दिन की छुट्टी के दौरान हेडमास्टर ने एक दिन मास्टर साहब को बुला भेजा और कहा, "कालीपद बाबू आपको अपने साथ छात्रों को लेकर उन्हें जहाज दिखा लाना है।"

"जहाज ?"

कालीपद मास्टर साहब अवाक हो गये। वे छात्रों को जहाज दिखाने ले जायेंगे ?

उन्होंने पूछा, "जहाज देखने में क्या होगा ?"

हेडमास्टर साहब ने कहा, "अभी से सब कुछ अपनी आँखों से देख लेना चाहिए। सभी बातों का अभी से उन्हें सामान्य ज्ञान हो जायेगा बाद में अपना-अपना कैरियर बनाने में बहुतों को इस तरह का सहायता कर सकता है।"

इसके बाद कालीपद मास्टर साहब हमारे क्लास के लड़कों की जमात को जहाज दिखाने चाँदपाल घाट ले गये। वह जहाज जैसे नहीं था, बल्कि छोटी-मोटी एक दुनिया ही था। मानो हमारी का एक छोटा संस्करण हो। जहाज पर भी सूर्योदय होता है, होता है। जहाज पर भी चाँद उगता है और अमावस्या होती है। जहाज के कल-पुर्जे देखकर आश्चर्य में खोते जा रहे थे। जहाज का साहब हमें सब कुछ दिखा रहा था। साहब का नाम तब हमें नहीं था। मगर साहब बड़े ही सज्जन थे। हमें

चाय बिस्कुट, केक सब कुछ दिया। बडे दिनो की छुट्टी मे हमारा यह काफी मनोरजक भ्रमण रहा। सुना, जहाज और पन्द्रह दिनो तक चाँदपाल घाट मे रहेगा। जब हम वहा से रवाना हुए, साहब ने मास्टर साहब का हाथ पकड़कर हडशेक किया, "फिर कभी आना मिस्टर डे, आइ विल बी ग्लैड टु मीट यू अगेन।"

मास्टर साहब ने कहा, "हाँ-हाँ, जरूर आऊँगा। आइ टू वुड बी ग्लैड।"

उसके बाद हम दलबल के साथ घर लौट आये।

सडक पर ट्राम मे सवार होने के बाद मास्टर साहब से पूछा, "आप यहा फिर आइएगा, सर ?"

मास्टर साहब ने कहा, "धुत्, दुबारा क्यो आऊँ ?"

"फिर आपने क्यो कहा कि आप आयेगे ?"

मास्टर साहब ने कहा, "यह साहबी शिष्टाचार है। साहब ने शिष्टाचार के नाते कहा और मैंने भी शिष्टाचार का प्रदर्शन किया।"

हमे मालूम था कि इस प्रसग का अन्त यही हो गया। मगर उसका सिलसिला बहुत आगे तक बढा था, यह बात हमे कैसे मालूम होती ? हम कैसे यह जान सकते थे कि साहब के अनुरोध को ठुकराने मे स्वय को असमथ पाकर वे फिर एक दिन वहाँ जाकर साहब से मिल आये थे ?

विजय की केस फाइल मे उस दिन की तमाम घटना लिपिवद्ध है।

[ग्यारह]

मैंने पूछा, "उसके बाद ?"

विजय ने कहा, "मगर इसके लिए सिर्फ कॉस्टेलो साहब ही जिम्मेदार नहीं है। कह सकते हो कि हम भी जिम्मेदार हैं। एक आदर्श आदमी हमारे समाज की आदर्श-भ्रष्टता के कारण हमेशा के लिए आदर्श-भ्रष्ट हो गया। उनके जैसे आदमी की पोर्तुगीज जहाज के कैप्टन से कैसे जान-पहचान हुई, यह भी एक आश्चर्यजनक घटना है।"

दिसम्बर का महीना था। बड़े दिन की छुट्टी के दौरान हेडमास्टर ने एक दिन मास्टर साहब को बुला भेजा और कहा, "कालीपद बाबू आपको अपने साथ छात्रों को लेकर उन्हें जहाज दिखा लाना है।"

"जहाज ?"

कालीपद मास्टर साहब अवाक् हो गये। वे छात्रों को जहाज दिखाने ले जायेंगे ?

उन्होंने पूछा, "जहाज देखने से क्या होगा ?"

हेडमास्टर साहब ने कहा, "अभी से सब कुछ अपनी आँखों से देख लेना चाहिए। सभी बातों का अभी से उन्हें सामान्य ज्ञान हो जायेगा। बाद में अपना अपना कैरियर बनाने में बहुतों को इस तरह का ज्ञान सहायता कर सकता है।"

इसके बाद कालीपद मास्टर साहब हमारे क्लास के लड़कों की एक जमात को जहाज दिखाने चाँदपाल घाट ले गये। वह जहाज जैसे जहाज नहीं था, बल्कि छोटी मोटी एक दुनिया ही था। मानो हमारी दुनिया का एक छोटा संस्करण हो। जहाज पर भी सूर्योदय होता है, सूर्यग्रहण होता है। जहाज पर भी चाँद उगता है और अमावस्या होती है। हम जहाज के कल-पुर्जे देखकर आश्चर्य में खोते जा रहे थे। जहाज का एक साहब हमें सब कुछ दिखा रहा था। साहब का नाम तब हमें मालूम नहीं था। मगर साहब बड़े ही सज्जन थे। हमें भरपूर खाना खिलाया-

चाय विस्कुट, केक सब कुछ दिया। बडे दिनो की छुट्टी मे हमारा यह काफी मनोरजक भ्रमण रहा। सुना, जहाज और पन्द्रह दिनो तक चाद-पाल घाट मे रहेगा। जब हम वहाँ से रवाना हुए, साहब ने मास्टर साहब का हाथ पकड़कर हैंडशेक किया, "फिर कभी आना मिस्टर डे, आइ विल वी ग्लेड टु मीट यू अगेन।"

मास्टर साहब ने कहा, "हॉ-हाँ, जरूर आऊँगा। आइ टू वुड बी ग्लेड।"

उसके वाद हम दलबल के साथ घर लौट आये।

सडक पर ट्राम मे सवार होने के बाद मास्टर साहब से पूछा, "आप यहा फिर आइएगा, सर?"

मास्टर साहब ने कहा, "धुत्, दुबारा क्यो आऊँ?"

"फिर आपने क्यो कहा कि आप आयेंगे?'

मास्टर साहब ने कहा, "यह साहबी शिष्टाचार है। साहब ने शिष्टाचार के नाते कहा और मैंने भी शिष्टाचार का प्रदर्शन किया।"

हमे मालूम था कि इस प्रसग का अन्त यही हो गया। मगर उसका सिलसिला बहुत आगे तक बढा था, यह बात हमे कैसे मालूम होती? हम कैसे यह जान सकते थे कि साहब के अनुरोध को ठुकराने मे स्वय को असमथ पाकर वे फिर एक दिन वहाँ जाकर साहब से मिल आये थे?

विजय की केस फाइल मे उस दिन की तमाम घटना लिपिबद्ध है।

[बारह]

इसी तरह कितने ही आदमियो के जीवन मे कितने ही विचित्र परिवतन आते हैं। शुरू मे उनका अनुमान लगाना मुश्किल है। यह बहुत कुछ गगा के ज्वार की तरह है। गगा मे भाटे के बाद जब ज्वार आता है, गगा के पानी मे जो रहते हैं, उनको शुरू मे इसका पता नही चलता। वह एक अजीब ही अहसास, अजीब ही सिहरन जैसी हालत रहती है। उसके बाद जब पानी थोडा बढने लगता है तो उस वक्त महसूस होता है कि यह क्या है! यह तो मुझे बहाकर ले जायेगा। किले के रास्ते मे जब गाडी बढती है तो यह महसूस होता ही नही कि हम कितने नीचे उतर रहे है। गाडी से उतरकर ऊपर की ओर ताकने पर उसका अहसास होता है।

कॉस्टेलो साहब हालाकि पोतुगीज है परन्तु गोआ मे उसके जीवन का एक लम्बा अरसा व्यतीत हुआ है। वह हिन्दुस्तानियो को पहचानता है। हिन्दुस्तानियो से पोतुगीजो का शुरु मे जो सम्पक हुआ था, उसके बारे मे वह सुन चुका है। पहले दिन मास्टर साहब से जब उसकी बात चीत हुई थी, उसकी समझ मैं यह बात आ गयी थी कि मास्टर साहब को पोर्तुगाल की राई-रत्ती तक का पता है।

शायद इसीलिए कहा था, "फिर किसी दिन आना मिस्टर डे, आइ वुड बी ग्लेड टु मीट यू अगेन।'

यह बात कैप्टन कॉस्टेलो ने कही ता थी जरूर, मगर उसे विश्वास नही था कि मिस्टर डे आयेगा। खादीधारी हिन्दुस्तानियो को देखकर कॉस्टेलो को डर लगता था। एक तो गाधी के मुल्क का आदमी उस पर खद्दरधारी।

मगर कॉस्टलो की समझ मे यह बात आ गयी थी कि यह आदमी शिक्षित है। खुद कॉम्टलो पोर्तुगाल के बारे मे जितना नही जानता है, उससे अधिक जानकारी मिस्टर डे को है।

कॉस्टेलो ने हँसते हुए स्वागत किया। अपने हाथो मे मास्टर साहब का हाथ लेकर कहा, "गुड मॉनिंग, गुड मॉनिंग। मैंने सपने मे भी नही सोचा था कि तुम फिर आओगे, मिस्टर डे। आइ एम सो ग्लैड!"

मास्टर साहब बोले, "नो, नॉट दैट, कल मैंने तुम्हे एक गलत बात बतायी थी। गलती मेरी ही थी मिस्टर कॉस्टेलो।"

"गलती? मिस्टेक?"

मास्टर साहब बोले, "हा मैंने तुमसे कहा तो जरूर, मगर रात मे इतिहास की किताब पढने पर बडी शर्म महसूस हुई। सोचा, छि छि मैंने इतनी बडी गलती कर दी।"

"मिस्टेक क्या थी?"

मास्टर साहब बोले, "देखो मिस्टर कॉस्टेलो, मैंने तुम्हे कल बताया था कि मुगलो के गवर्नर फतेह खा से पोर्तुगीजो की लडाई १६७७ ई० मे हुई थी। असल मे मैंने गलत बताया था। लडाई १६७८ ई० मे हुई थी।"

साहब को आश्चर्य हुआ। इस मामूली वजह से स्कूल का यह मास्टर फिर से उसके पास आया? इस तरह की बात नही हुआ करती है।

मास्टर साहब ने कहा, "इसे तुम मामूली बात कहते हो, मिस्टर कॉस्टेलो? पूरे एक साल की गलती को तुम मामूली गलती कहते हो?"

उनकी बात सुनकर कॉस्टेलो को और भी ज्यादा हैरानी हुई। बोला, "एक साल की गलती कौन सी वैसी गलती है?"

"नो, मिस्टर कॉस्टेलो! मै अगर ऐसी गलती करूँ तो छात्रो की फिर क्या हालत होगी? अगर वे यही गलती इक्जामिनेशन मे करते हैं तो फिर? फिर तो मैं उन्हे शून्य दूँगा, जीरो दूँगा। मैं तो उन्हे माफ नही करूँगा। और मैं उनका टीचर होकर यही गलती करता हूँ तो मेरे छात्र भी मुझे शून्य ही देगे।"

कॉस्टेलो अपने जीवन मे बहुत से आदमियो को देख चुका है, मगर ऐसा अजीव आदमी इसके पहले उसने कभी नही देखा था।

मिस्टर कॉस्टेलो हाथ बढाकर मिस्टर डे को पकडते हुए बोला, "आओ, अन्दर चले आओ, मेरे केबिन के अन्दर चलो।"

मास्टर साहब ने कहा, "नो साहब, मै अन्दर नही जाऊँगा। मुझे जाना है।"

फिर ऐसी हालत हो गयी कि मास्टर साहब रुकना नहीं चाहते थे और कास्टेलो उन्हें छोड़ना नहीं चाहता था। साहब को जब ऐसा आदमी मिल गया है तो उसका वक्त मजे में कटेगा। जहाज से सारी दुनिया का चक्कर लगा आया है, मगर पोर्तुगाल के बारे में इतनी जानकारी रखने वाला आदमी उसने नहीं देखा है। यही नहीं, किस तरह अठारहवीं सदी के मध्यकाल में पोर्तुगीज आराकान और चटगाँव में आये, कब और कैसे मुगल बादशाह के सेनापति से लड़कर उसे हराया, १६०६ ई० में कब विम प्रायद्वीप पर कब्जा कर आराकान के राजा से हाथ मिलाकर १६१० ई० में बंगाल पर धावा बोल दिया—ये सारी बातें मास्टर साहब को जबानी याद हैं।

उस समय बातें करते-करते मास्टर साहब बिलकुल तल्लीन हो गये थे। उनका ध्यान कहीं और था ही नहीं। पोर्तुगालियों का इतिहास हिंदुस्तान के एक बंगाली मास्टर का जबानी याद है, यह देखकर कास्टलो साहब भी तन्मयता में डूब गये।

अचानक मास्टर साहब को कुछ संदेह हुआ। तब उनका गला सूखने लगा था।

अपने गिलास की ओर देखते हुए बोले, "यह क्या चीज है, मिस्टर कॉस्टेलो ?"

मिस्टर कॉस्टलो ने कहा, "तुम यह क्यों पूछ रहे हो ?"

मास्टर साहब बोले, "मेरा सिर चकराने लगा है।"

मिस्टर कॉस्टेलो ने बताया, "यह ब्लैक प्रिंस है।"

"ब्लैक प्रिंस ? ब्लैक प्रिंस का मतलब ?"

मिस्टर कॉस्टेलो ने बताया, "तुमने ब्लैक प्रिंस कभी नहीं पी है ? वर्ल्ड की बैस्ट ह्विस्की यही है।"

शराब !

उसी दिन रात में कॉस्टलो ने अपनी मेम साहब से कहा, "देखा न, यह मास्टर कितना सिम्पल है ! उसने कहा ब्लैक प्रिंस तो दूर की बात, कभी मैंने किसी भी किस्म की ह्विस्की नहीं पी है। कितना ऑनेस्ट है ! मैं उसके लिए कुछ करना चाहता हूँ।"

मेम साहब ने पूछा, "क्या करोगे ?"

"कुछ न कुछ करना चाहता हूँ। बडा ही पुअर आदमी है। जहाँ नौकरी करता है, महीने मे सिर्फ ढाई सौ रुपये मिलते है, हालाँकि लर्नेड आदमी है। पोर्तुगीज होने के बावजूद मैं पोर्तुगाल की हिस्ट्री उतनी नहीं जानता, इडियन होने पर भी जितनी वह जानता है।"

जिस जगह साहब और मेमसाहब के बीच बातचीत हो रही थी, उसकी बगल के केबिन मे मास्टर साहब नशे मे चूर होकर बेहोश पडे थे। बीच-बीच मे कुछ बुदबुदाते थे और फिर बेहोश हो जाते थे। ब्लैक प्रिंस ब्लैक प्रिंस।

कॉस्टेलो ने एक ठहाका लगाया।

मेमसाहब ने पूछा, "हँस क्यो रहे हो ?"

मिस्टर कॉस्टेलो ने कहा, "मास्टर की बात सुनकर। ब्लैक प्रिंस पीने पर भी वह समझ नही सका कि वह ब्लैक ह्विस्की पी रहा है। वेरी स्ट्रेंज! ड्रिंक नही करता हो, जिंदगी मे वैसा आदमी आज मैने पहले-पहल देखा। इण्डियन लोग सचमुच ही स्ट्रेंज क्रीचर होते है। यही वजह है कि हम इतने दिनो तक इण्डिया पर शासन करते रहे।"

मास्टर साहब वास्तव मे उस दिन जहाज पर रात नही गुजारना चाहते थे। वे जितना पीते जाते थे कॉस्टेलो साहब उतना ही कहते थे, "थोडी सी और लो, मिस्टर डे।"

मास्टर साहब ने कहा था, "नही नही, अब नही लूगा, मिस्टर कॉस्टेलो। मेरा सिर चकरा रहा है। मैं घर जाऊँगा।"

कॉस्टेलो ने कहा था, "घर कैसे जाओगे ? इस हालत मे मैं तुम्हे घर नही जाने दूँगा।"

मास्टर साहब ने कहा था, "घर नही जाऊँगा तो मैं खाऊँगा क्या ? मुझे अभी घर जाकर भात-दाल पकाना है।"

"तुम खाने के बारे मे सोच रहे हो ? मै यही तुम्हारे खाने की चीजें मँगवाता हूँ। ठहरो, मैं यही तुम्हारे लिए डिनर मँगाने का इन्तजाम करता हूँ। मै भी तुम्हारे साथ एक ही टेबल पर बैठकर खाना खाऊँगा।"

यह कहकर साहब ने खाना लाने का आदेश दिया। घण्टी बजते ही ढेर सारी तश्तरियाँ मे खाने की अजीब-अजीब चीजें वहाँ आ गयी।

मास्टर साहब ने पूछा था, "यह क्या मास है, साहब ?"

"हा, चिकेन। चिकेन रोस्ट।"

मास्टर साहब ने कहा था, "मगर मैं न तो मांस खाता हूँ और न मछली। आइ एम ए वेजिटेरियन—मैं शाकाहारी हूँ।"

"अरे मास्टर, तुम तो ड्रिंक भी नहीं करते थे। अब ड्रिंक कर चुके हो। ड्रिंक किया है और उसके साथ प्रोटीन नहीं खाओगे? ऐसा कहीं होता है? ड्रिंक के साथ प्रोटीन नहीं लेना बड़ा ही डेंजरस होता है। चिकेन बैस्ट प्रोटीन होता है। खाओ, खाओ, मुह में डालो।"

साहब ने जबरन रोस्ट मुर्गे का एक टुकड़ा मास्टर के मुंह में डाल दिया। तब मास्टर साहब को ज़ोरों में भूख लगी थी। पेट में भी तब ह्विस्की के कई पेग जा चुके थे उनमें जैसे राक्षसी भूख समा गयी हो। मास्टर को खाते हुए देखकर साहब को लगा, वह जैसे रो रहा हो।

"यह क्या, तुम क्या रो रहे हो मास्टर?"

मास्टर साहब तब सचमुच रो रहे थे।

साहब ने दुबारा पूछा था, "तुम रो क्यों रहे हो मास्टर? क्या हुआ है?"

मास्टर ने रोते-रोते कहा था, "अब मैं क्या करूँ, साहब?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो, मास्टर? तुम्हें कुछ भी नहीं हुआ है। चिन्ता मत करो। डोण्ट क्राई। तुम्हें क्या हुआ है?"

मास्टर ने कहा था, "अब मैं घर कैसे जाऊँ?"

"तुम्हें अभी घर जाने को कौन कह रहा है?"

"मैं यहां कहाँ सोऊँगा?"

"अरे मास्टर, तुम भी अजीब हो। जहाज में सोने की जगह की कोई कमी है? यहां इसी केबिन में बिस्तर पड़ा है। तुम इसी केबिन में सोओगे।'

"आज शाम के वक्त मुझे ट्यूशन पर जाना है। मुझे अपने छात्र को पढ़ाने के लिए जाना है। वह मेरे लिए इंतजार करेगा। उसकी परीक्षा करीब है। आज वहाँ नहीं जाऊँगा तो उसकी बहुत बड़ी हानि होगी।"

साहब ने कहा था, "एक दिन नागा करने से कौन सी बड़ी हानि जायेगी?"

मास्टर साहब ने कहा था, "होती है साहब, हानि होती है। तुम यह बात समझ नहीं सकोगे, साहब। तुम ही क्या, कोई नहीं समझ सकेगा। हम लोगों के स्कूल के हेडमास्टर की समझ में भी यह बात

गा। वह जहाँ नौकरी करता है वहा उसे महज ढाई सौ रुपये मिलते मैं उसे तीन सौ रुपया तनख्वाह दूँगा, उसके अलावा खाना-रहना रहेगा।"

मेम साहब ने कहा, "अगर वह जेण्टलमैन यहा की नौकरी मजूर ा?'

साहब ने कहा, "बिना मजूर किये उसके लिए कोई चारा नही है, ए मजूर करेगा ही। अब स्कूल जाकर छात्रो के बीच वह मुह ने लायक नही रह गया। इस नौकरी को स्वीकारने के अलावा लिए कोई उपाय नही है।"

दूसरे दिन जब सुबह हुई और साहब मास्टर के केबिन मे गया तो गहरी नींद मे डूबे पाया। घडी तब सुबह के सात बजा रही घडी की सुई जब आठ पर पहुँची, तब भी वह नींद म डूबा हुआ उसके बाद नौ फिर दस, फिर ग्यारह फिर बारह। तब भी मास्टर नही आया।

व घडी ने दिन के डेढ बजाये और लच का वक्त हो गया, तब ाने पर देखा कि मास्टर बिस्तर पर लेटा हुआ है और उसकी खुली हुई हैं।

हब ने मास्टर की आँखें खुली हुई देखकर कहा, "गुड मार्निंग ब्लैक प्रिंस।'

मास्टर साहब ने कहा था, "मगर मैं न तो मास खाता हूँ और न मछली। आइ एम ए वजिटेरियन—मैं शाकाहारी हूँ।"

"अरे मास्टर, तुम तो ड्रिंक भी नही करते थे। अब ड्रिंक कर चुके हो। ड्रिंक किया है और उसके साथ प्रोटीन नही खाओगे ? ऐसा कही होता है ? ड्रिंक के साथ प्रोटीन नही लेना बडा ही डेंजरस होता है। चिकेन बैस्ट प्रोटीन होता है। खाओ, खाओ, मुँह मे डालो।"

साहब ने जबरन रोस्ट मुर्गे का एक टुकडा मास्टर के मुँह म डाल दिया। तब मास्टर साहब को जोरो से भूख लगी थी। पेट मे भी तब ह्विस्की के कई पग जा चुके थे उनमे जैसे राक्षसी भूख समा गयी हो। मास्टर को खाते हुए देखकर साहब को लगा, वह जैसे रो रहा हो।

"यह क्या, तुम क्या रो रहे हो मास्टर ?"

मास्टर साहब तब सचमुच रो रहे थे।

साहब ने दुबारा पूछा था, "तुम रो क्यो रहे हो मास्टर ? क्या हुआ है ?"

मास्टर ने रोते-रोते कहा था, "अब मैं क्या करूँ, साहब ?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यो कर रहे हो, मास्टर ? तुम्हे कुछ भी नही हुआ है। चिन्ता मत करो। डोण्ट क्राई। तुम्हे क्या हुआ है ?"

मास्टर ने कहा था, "अब मैं घर कैसे जाऊँ ?"

"तुम्हे अभी घर जाने को कौन कह रहा है ?"

"मैं यहा कहाँ सोऊँगा ?"

"अरे मास्टर, तुम भी अजीब हो। जहाज मे सोने की जगह की कोई कमी है ? यहाँ इसी केबिन मे बिस्तर पडा है। तुम इसी केबिन म सोओगे।"

"आज शाम के वक्त मुझे ट्यूशन पर जाना है। मुझे अपने छात्र को पढाने के लिए जाना है। वह मेरे लिए इन्तजार करेगा। उसकी परीक्षा करीब है। आज वहा नही जाऊँगा तो उसकी बहुत बडी हानि होगी।"

साहब ने कहा था, "एक दिन नागा करने से कौन सी बडी हानि जायेगी ?"

मास्टर साहब ने कहा था, "हानी है साहब, हानि हानी है। तुम यह बात समझ नही सकोगे, साहब। तुम ही क्या, कोई नही समझ सकेगा। हम लोगो के स्कूल के हेडमास्टर की समझ म भी यह बात

नही आती है। मैं क्लास मे जब छात्रो को पढाता हूँ तो समझ नही पाता हूँ कि घटा कब बज चुका। कब टाइम ओवर हो चुका। मैं चलूँ साहब, घर चलूँ।"

"मगर तुम कैसे जाओगे ? अभी रात का एक बज रहा है।"

"एक ! रात का एक !"

यह कहकर मास्टर साहब खुलकर रोने लगे थे।

उसके बाद रात मे वे उठे नही। उस रात नशे मे चूर, बेहोशी का हालत मे उसी केबिन मे पडे रहे।

मास्टर साहब ने कहा था, "मगर मैं न तो मास खाता हूँ और न मछली। आइ एम ए वेजिटेरियन—मैं शाकाहारी हूँ।"

"अरे मास्टर, तुम तो ड्रिंक भी नही करते थे। अब ड्रिंक कर चुके हो। ड्रिंक किया है और उसके साथ प्रोटीन नही खाओगे ? ऐसा नही होता है ? ड्रिंक के साथ प्राटीन नही लेना बडा ही डेंजरस होता है। चिकेन बैस्ट प्राटीन होता है। खाओ, खाओ, मुह मे डालो।"

साहब ने जबरन रोस्ट मुर्गे का एक टुकडा मास्टर के मुँह मे डाल दिया। तब मास्टर साहब को जोरो मे भूख लगी थी। पेट मे भी तब ह्विस्की के कई पग जा चुके थे उनमे जैसे राक्षसी भूख समा गयी हो। मास्टर को खाते हुए देखकर साहब को लगा, वह जैसे रो रहा हो।

"यह क्या, तुम क्या रो रहे हो मास्टर ?"

मास्टर साहब तब सचमुच रो रहे थे।

साहब ने दुबारा पूछा था, "तुम रो क्यो रहे हो मास्टर ? क्या हुआ है ?"

मास्टर ने रोते-रोते कहा था, "अब मैं क्या करूँ, साहब ?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यो कर रहे हो, मास्टर ? तुम्हे कुछ भी नही हुआ है। चिन्ता मत करो। डोण्ट क्राई। तुम्हे क्या हुआ है ?"

मास्टर ने कहा था, "अब मैं घर कैसे जाऊँ ?"

"तुम्हे अभी घर जाने को कौन कह रहा है ?"

"मैं यहाँ कहाँ सोऊँगा ?"

"अरे मास्टर, तुम भी अजीब हो। जहाज मे सोने की जगह की कोई कमी है ? यहा इसी केबिन मे बिस्तर पडा है। तुम इसी केबिन मे सोओगे।'

"आज शाम के वक्त मुझे ट्यूशन पर जाना है। मुझे अपने छात्र को पढाने के लिए जाना है। वह मेरे लिए इन्तजार करेगा। उसकी परीक्षा करीब है। आज वहा नही जाऊँगा तो उसकी बहुत बडी हानि होगी।"

साहब ने कहा था, "एक दिन नागा करने से कौन सी बडी हानि जायेगी ?"

मास्टर साहब ने कहा था, "होती है साहब, हानि होती है। तुम यह बात समझ नही सकोगे, साहब। तुम ही क्या, कोई नही समझ सकेगा। हम लोगो के स्कूल के हेडमास्टर की समझ मे भी यह बात

नही आती है। मैं क्लास मे जब छात्रो को पढाता हूँ तो समझ नही पाता हूँ कि घटा कब बज चुका। कब टाइम ओवर हो चुका। मैं चलूँ साहब, घर चलू।"

"मगर तुम कैसे जाओगे ? अभी रात का एक बज रहा है।"

"एक ! रात का एक !"

यह कहकर मास्टर साहब फुलकर रोने लगे थे।

उसके बाद रात मे वे उठे नही। उस रात नशे मे चूर, बेहोशी की हालत मे उसी केबिन मे पडे रहे।

मास्टर साहब ने कहा था, "मगर मैं न तो मास खाता हूँ और न मछली। आइ एम ए वैजिटेरियन—मैं शाकाहारी हूँ।"

"अरे मास्टर, तुम तो ड्रिंक भी नहीं करते थे। अब ड्रिंक कर चुके हो। ड्रिंक किया है और उसके साथ प्रोटीन नहीं खाओगे ? ऐसा कहीं होता है ? ड्रिंक के साथ प्रोटीन नहीं लेना बडा ही डेंजरस होता है। चिकेन बैस्ट प्रोटीन होता है। खाओ, खाओ, मुह मे डालो।"

साहब ने जबरन रोस्ट मुर्गे का एक टुकडा मास्टर के मुह मे डाल दिया। तब मास्टर साहब को जोरो मे भूख लगी थी। पेट म भी तब ह्विस्की के कई पग जा चुके थे उनमे जैसे राक्षसी भूख समा गयी हो। मास्टर को खाते हुए देखकर साहब को लगा, वह जैसे रो रहा हो।

"यह क्या, तुम क्या रो रहे हो मास्टर ?"

मास्टर साहब तब सचमुच रो रहे थे।

साहब ने दुबारा पूछा था, "तुम रो क्या रह हो मास्टर ? क्या हुआ है ?"

मास्टर ने रोते-रोते कहा था, "अब मैं क्या करूँ, साहब ?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो, मास्टर ? तुम्हे कुछ भी नही हुआ है। चिन्ता मत करो। डोण्ट क्राई। तुम्हे क्या हुआ है ?"

मास्टर ने कहा था, "अब मैं घर कैसे जाऊँ ?"

"तुम्हे अभी घर जाने को कौन कह रहा है ?"

"मैं यहा कहाँ सोऊँगा ?"

"अरे मास्टर, तुम भी अजीब हो। जहाज मे सोने की जगह की कोई कमी है ? यहा इसी केबिन म बिस्तर पडा है। तुम इसी केबिन म सोओगे।"

"आज शाम के वक्त मुझे ट्यूशन पर जाना है। मुझे अपने छात्र को पढाने के लिए जाना है। वह मेरे लिए इन्तजार करेगा। उसकी परीक्षा करीब है। आज वहाँ नहीं जाऊँगा तो उसकी बहुत बडी हानि होगी।"

साहब ने कहा था, "एक दिन नागा करने से कौन-सी बडी हानि जायेगी ?"

मास्टर साहब ने कहा था, "होती है साहब, हानि होती है। तुम यह बात समझ नही सकोगे, साहब। तुम ही क्या, कोई नही समझ सकेगा। हम लोगो के स्कूल के हेडमास्टर की समझ मे भी यह बात

नही आती है। मैं क्लास मे जब छात्रो को पढाता हूँ तो समझ नही पाता हूँ कि घटा कब बज चुका। कब टाइम ओवर हो चुका। मैं चलू साहब, घर चलू।"

"मगर तुम कैसे जाओगे ? अभी रात का एक बज रहा है।"

"एक ! रात का एक !"

यह कहकर मास्टर साहब खुलकर रोने लगे थे।

उसके बाद रात मे वे उठे नही। उस रात नशे मे चूर, बेहोशी का हालत मे उसी केबिन मे पडे रहे।

मास्टर साहब ने कहा था, "मगर मैं न तो मांस खाता हूँ और न मछली। आइ एम ए वजिटेरियन—मैं शाकाहारी हूँ।"

"अरे मास्टर, तुम तो ड्रिंक भी नहीं करते थे। अब ड्रिंक कर चुके हो। ड्रिंक किया है और उसके साथ प्रोटीन नहीं खाओगे? ऐसा कहीं होता है? ड्रिंक के साथ प्रोटीन नही लेना बड़ा ही डेंजरस होता है। चिकेन वैस्ट प्रोटीन होता है। खाओ, खाओ, मुह मे डालो।"

साहब ने जबरन रोस्ट मुर्गे का एक टुकड़ा मास्टर के मुह मे डाल दिया। तब मास्टर साहब को जोरो मे भूख लगी थी। पेट म भी तब ह्विस्की के कई पग जा चुके थे उनमे जैसे राक्षसी भूख समा गयी हो। मास्टर को खाते हुए देखकर साहब को लगा, वह जैसे रो रहा हो।

"यह क्या, तुम क्या रो रहे हो मास्टर?"

मास्टर साहब तब सचमुच रो रहे थे।

साहब ने दुबारा पूछा था, "तुम रो क्यो रहे हो मास्टर? क्या हुआ है?"

मास्टर ने रोते-रोते कहा था, "अब मैं क्या करूँ, साहब?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यो कर रहे हो, मास्टर? तुम्हे कुछ भी नही हुआ है। चिन्ता मत करो। डोण्ट क्राई। तुम्हे क्या हुआ है?"

मास्टर ने कहा था, "अब मैं घर कैसे जाऊँ?"

"तुम्हे अभी घर जाने को कौन कह रहा है?"

"मैं यहा कहाँ सोऊँगा?"

"अरे मास्टर, तुम भी अजीब हो। जहाज मे सोने की जगह की कोई कमी है? यहा इसी केबिन मे बिस्तर पड़ा है। तुम इसी केबिन म सोओगे।"

"आज शाम के वक्त मुझे ट्यूशन पर जाना है। मुझे अपने छात्र को पढाने के लिए जाना है। वह मेरे लिए इन्तजार करेगा। उसकी परीक्षा करीब है। आज वहाँ नहीं जाऊँगा तो उसकी बहुत बड़ी हानि होगी।"

साहब ने कहा था, "एक दिन नागा करने से कौन सी बड़ी हानि जायेगी?"

मास्टर साहब न कहा था, "होती है साहब, हानि होती है। तुम यह बात समझ नही सकोगे, साहब। तुम ही क्या, कोई नही समझ सकेगा। हम लोगो के स्कूल के हेडमास्टर भी समझ म भी यह बात

नही आती है। मैं क्लास मे जब छात्रो को पढाता हूँ तो समय नहीं पाता हूँ कि घटा कब बज चुका। कब टाइम ओवर हो चुका। मैं चलू साहब, घर चलू।"

"मगर तुम कैसे जाओगे ? अभी रात का एक बज रहा है।"

"एक ! रात का एक !"

यह कहकर मास्टर साहब सुलकर रोने लगे थे।

उसके बाद रात मे वे उठे नही। उस रात नशे मे चूर, बेहोशी का हालत मे उसी केबिन मे पडे रहे।

[तेरह]

विजय सरकार की केस फाइल मे जिस गोपनीय रिपोर्ट की नकल थी, उसमे ये सारी बातें विस्तार के साथ लिखी हुई थी। लिखा हुआ था कि किस तरह वह ब्रह्मचारी स्कूल टीचर एक दिन के अध पतन की ग्लानि से आहत होकर अनुताप की भट्ठी मे जलकर खाक हो गया।

मगर उसके लिए जो असली आदमी जिम्मेदार था, उसकी क्या हालत हुई?

उसने भी तब भरपेट ब्लैक प्रिंस ह्विस्की पी थी। साथ ही मेम साहब ने भी। मगर वे लोग इस मामले म परिपक्व हो चुके थे। तब उन्हे नशा भी नही आया था। दो-चार पग ज्यादा भी पी लेते तो उन्हे कोई हानि नही होती।

मास्टर की हालत देखकर मेम को थोडी दया आयी।

वह बोली, "उस इन्नासेण्ट आदमी को तुमने इतनी ब्लेक प्रिंस क्यो पिलायी?"

साहब ने कहा, "तुम ठीक ही कह रही हो, मैं समझ नही सका। मैं समझ नही सका कि आदमी नशे मे इतना चूर हो सकता है। कल्पना भी नही की थी कि इडियन लोग इतने गुड होते है, हालाकि हम बचपन से सुनते आये थे कि इडियन बहुत ही बैड पीपल होने है—बहुत ही इम्मॉरल जात। झूठा, ठग, मक्कार"

एक क्षण चुप रहने के बाद फिर बोला, "ठीक है, मैंने मास्टर की जो हानि की है उसे कम्पेंसेट करूँगा। मैं उसे अपने जहाज मे नौकरी पर रख लूगा।"

"नौकरी दोगे? कौन-सी नौकरी?"

साहब ने कहा, "कोई न कोई नौकरी दूँगा ही। जहाज मे नौकरी की कौन-सी कमी है? वह इतना लर्नेड आदमी है, इतना ऑनेस्ट, इतना विश्वासी! तमाम दुनिया मे खोजने पर भी ऐसा आदमी नही

मिलेगा। वह जहाँ नौकरी करता है वहाँ उसे महज ढाई सौ रुपये मिलते है। मैं उसे तीन सौ रुपया तनख्वाह दूँगा, उसके अलावा खाना-रहना फ्री रहेगा।"

मेम साहब ने कहा, "मगर वह जेण्टलमैन यहा की नौकरी मजूर करेगा ?"

साहब ने कहा, "विना मजूर किये उसके लिए कोई चारा नही हे, इसलिए मजूर करेगा ही। अब स्कूल जाकर छात्रो के बीच वह मुह दिखाने लायक नही रह गया। इस नौकरी को स्वीकारने के अलावा उसके लिए कोई उपाय नही है।"

दूसरे दिन जब सुबह हुई और साहब मास्टर के केविन मे गया तो उसे गहरी नीद मे डूबे पाया। घडी तब सुबह के सात वजा रही थी। घडी की सुई जब आठ पर पहुँची, तव भी वह नीद मे डूबा हुआ था। उसके वाद नौ, फिर दस, फिर ग्यारह फिर वारह। तब भी मास्टर होश मे नही आया।

जव घडी ने दिन के डेढ बजाये और लच का वक्त हो गया, तब वहाँ जाने पर देखा कि मास्टर बिस्तर पर लेटा हुआ है और उसकी आँखें खुली हुई ह।

साहब ने मास्टर की आखे खुली हुई देखकर कहा, "गुड मार्निग मिस्टर ब्लेक प्रिस।'

उसके वाद अनेक बरसो तक मास्टर के० पी० डे का कोई पता ही नही चला। पुलिस की एक्सटर्नल इन्टेलिजेन्स ब्राँच की नोट बुक मे कुछ भी नही लिखा है। तब से १९६२ ई० मे हिन्दुस्तान से पोर्तगीजो के चले जाने तक उसका कोई अता-पता नही चला। उसके अतीत के कारनामो की वहुत तलाश की गयी है मगर के० पी० डे ने उसका कही कोई चिह्न नही रहने दिया है।

असल मे उस वीच मिस्टर के० पी० डे ब्लेक प्रिस के रूप मे वदल चुका है। भारत सरकार के खुफिया विभाग के न जानने पर भी कॉस्टेलो को मालूम है। कॉस्टेलो जानता है कि वह ईमानदार, सच्चा और पवित्र आदमी आहिस्ता-आहिस्ता किस तरह रसातल मे घँसता गया। कलकत्ता डॉक मे जो शुरुआत हुई तो उसका सिलसिला जहाज पर भी चलता रहा। वह फिर घर नही लौटा। घर लौटेगा ही क्यो ? और किसके लिए ढाई सौ रुपया माहवार पाने वाला स्कूल-टीचर कालीपद

डे लौटेगा ? मगर छात्र ? वे जहन्नुम मे जाये, उन्हे कोई आपत्ति नही है। तब वह मिस्टर कॉस्टेलो के जहाज मे तीन सौ रुपये माहवार पर स्टोर-क्लर्क के पद पर था। तनख्वाह के अलावा उसे मुफ्त मे रहने-खाने की सुविधा थी तथा पेसेज और ब्लैक प्रिंस भी बिना पैसे की मिल जाती थी।

तनख्वाह हालाकि तीन सौ रुपये ही है मगर काम बहुत ही हल्का है। एक तरह से काम है ही नहीं। काम के लिए दो-दो असिस्टेन्ट है। उनको आदेश देना ही उसका काम है। इसके अलावा उसे और एक काम करना पडता है। और वह शाम को नही, बल्कि रात मे। रात मे ही मिस्टर डे ब्लैक प्रिंस बन जाता है।

"गुड ईवनिंग, ब्लेक प्रिंस।'

जवाब मैं ब्लैक प्रिंस कहता, "गुड ईवनिंग सर।"

एक मालिक है, दूसरा नौकर। मगर ब्लैक प्रिंस ह्विस्की ऐसा जादू दिखाती कि मालिक-नौकर का रिश्ता बिलकुल खत्म हो जाता। तब वे दोस्त बन जाते। ब्लैक प्रिंस ऊँच-नीच, गोरे-काले को एक जैसा बना देती थी। ब्लैक प्रिंस बोतल से और एक पेग डिकेन्टर मे ढाल देता था। उसके बाद एक पेग और, उसके बाद फिर दूसरा पेग। इसी तरह कालीपद डे का नाम ही हो गया ब्लैक प्रिंस। जब जहाज अपने देश के बन्दरगाह पर पहुँचा तो हिन्दुस्तान का ब्लैक प्रिंस और-और लोगो के साथ नीचे उतरा। देखा, वह एक अजीब ही देश है। उस देश से और हिन्दुस्तान मे जमीन-आसमान का अन्तर है। जिस तरह आबोहवा अलग है, आदमी भी उसी तरह अलग हैं।

कास्टेलो तब भी उसे ब्लैक प्रिंस पिलाता था और ब्लैक प्रिंस के नाम से पुकारता था।

ब्लेक प्रिंस बीच-बीच मे पूछता, "तुम्हारा जहाज फिर कब रवाना होगा, कॉस्टेलो ?"

कॉस्टेलो ने कहा, "जल्दी ही रवाना होगा। क्या धरती पर रहना तुम्हे अच्छा नही लगता क्या ?"

ब्लैक प्रिंस ने कहा, "अच्छा ही लगता है। [illegible] जहाज [illegible] सैर करने से बहुत से देश देखने का मौका [illegible]
पर यह बात समझ मे आती है कि यह धर्[illegible]

कॉस्टेलो ने कहा, "ऐसा समझोगे तो तुम्हारा पेट तो नही भरेगा। असल मे तुम्हे अपना आदश बदलना है। तुम्हारे गाधी का जो आदश है तुम्हे उस आदश को बदलना है।"

"क्यो?" ब्लैक प्रिस ने अवाक् होकर पूछा।

इतने-इतने मुल्को का चक्कर लगा आये और इस पर भी तुम पूछ रहे हो—'क्यो'? तुमने खादी की धोती पहनना छोडकर यह जो सूट पहनना शुरू किया है, इससे तुम्हे कोई असुविधा होती है?"

ब्लेक प्रिस हँसा। "नही।" उसने कहा।

"तुमने वेजेटेरियन डिश छोडकर यह जो मटन-चिकेन खाना शुरू किया है, इससे तुम्हारी सेहत सुधरी है या बिगडी है?"

ब्लेक प्रिस ने कहा, "पहले के बनिस्बत सेहत बहुत ही अच्छी हो गयी है।"

"फिर? फिर तुम व्यथ ही हमेशा के लिए जहाज मे तीन सौ रुपये की नौकरी क्यो करना चाहते हो? तुम्हे बिजनेस करना है। ऐसा बिजनेस जिससे तुम्ह जल्दी से जल्दी ढेर सारा पैसा मिल जाये—लाखो-करोडो रुपये। तुम दुनिया का चक्कर लगा ही आये हो। दुनिया मे सबसे ज्यादा डिमाण्ड किस चीज की है? पैसा चाहने वालो की तादाद ज्यादा है या नीति चाहने वालो की? माडन दुनिया मे किस चीज की ज्यादा कद्र है?"

ब्लैक प्रिस ने कहा, "पैसे की।"

"हा, पैसे की ही है। पैसे से ही दुनिया चल रही है। पैसे से ही दुनिया का प्रोग्रेस हो रहा है। तुम्हारे गाधी की थ्योरी गलत है। वह थ्योरी आउट-डेटेड है। नाइटीथ सेंचुरी के आदश को गोली मारो। मै इगलेण्ड, अमेरिका, फास, रूस से हो आया हूँ। उन मुल्को म टेक्नॉलॉजी की बेहद तरक्की हो चुकी है। तुम लोगो का मजहब-मार्का आदश बहुत ही पीछे छूट गया हे। मैं यह नही कह रहा हूँ कि मजहब बुरी चीज है। हम क्या मजहब पर विश्वास नही रखते? रखते जरूर ह, मगर वह सिर्फ रविवार तक ही सीमित रहता है। रविवार को हम चच जाकर धार्मिक अनुष्ठान कर पवित्र होते ह और सप्ताह के बाकी दिन टेकनॉलॉजी की पूजा करते ह। टेक्नॉलॉजी की पूजा का मतलब है पैसे की पूजा। पैसा रहेगा तभी न धम कम हो सकेगा?"

गया, इस पर उसने ध्यान ही नही दिया था। कालीपद डे अब तक उससे ही चिपके पडे हे।

इतने दिनो मे आदमी की केंचुल ही नही वदली है, मन भी बदलकर और ही तरह का हो गया हे। दिमाग पूरी तरह धुल चुका है। इस बीच रुपया कमाने के उपायो की भी आदमी ने खोज कर ली है।

इस बात की चर्चा करते ही कॉस्टेलो उछल पडा।

बोला, "वेरी गुड आइडिया। फिर तुम हिन्दुस्तान जाओ। मैं यहाँ से तुम्हे हेल्प करता रहूँगा।"

तव गोआ से पोर्तुगीजो की पताका उखड चुकी थी। वहाँ का आखिरी जहाज भोंपू बजाता हुआ, हिन्दुस्तान की समुद्री सीमा छोडकर रवाना हो चुका था। ब्लैक प्रिंस जिसकी कल्पना करता है उसे कार्य के रूप मे भी परिणत करता है।

उसके बाद एक दिन न्यूयाक से एक काला साहव जेट प्लेन पर सवार हुआ। वह कहाँ जायेगा ? आर यू इण्डियन ? तुम क्या हिन्दुस्तानी हो।

"येस।"

पासपोर्ट के फोटो से चेहरा मिलाकर देखने पर उस आदमी के मन मे कोई सन्देह नही रह गया।

बोला, "यू मे गो।"

एक दूसरे कमरे मे कस्टम ऑफिस के लोगो ने बोरे-बिस्तरे की तलाशी ली, कोट की जेवो की तलाशी ली। कहीं कुछ आपत्तिजनक चीज नही मिली।

'यू मे गो।'

हवाई जहाज रवाना हो गया।

एक क्षण मौन रहने के बाद फिर बोला, "हाँ, एक बात और। मैंने बीच-बीच में देखा है कि तुम किताब पढते रहते हो।"

ब्लैक प्रिंस ने कहा, 'हाँ पढा करता हूँ। यह मेरी पुरानी आदत है।"

"तुम्हें किताब कहा मिल जाती है ?"

"जिन बदरगाहो पर उतरता हूँ, वहाँ किताब की दुकान देखकर रुक जाता हूँ। उसके बाद किसी अच्छी किताब पर निगाह जाती है तो खरीद लेता हूँ।"

"किस तरह की किताबे है ?'

ब्लैक प्रिंस ने कहा, "मेरा सब्जेक्ट हिस्ट्री है। इसीलिए हिस्ट्री की किताब मिलती है तो खरीद लेता हूँ। उसके बाद फिलॉसफी की किताबें खरीदता हूँ।"

कॉस्टेलो ने ऐसा मुँह बनाया जैसे उसने कोई कसैली चीज खा ली हो। बोला, "नही-नही ऐसा काम मत किया करो। उस तरह की किताबे गलती से भी नही छूना। फिर तुम्हारे लिए जिन्दा रहना मुश्किल हो जायेगा। दुनिया के बारे में तुम्हारे मन मे वैराग्य पैदा हो जायेगा। वैराग्य बुरी चीज होता है। उसी के कारण हिन्दुस्तान इतना पिछडा हुआ है। पढना है तो सिर्फ थ्रिलर और डिटेक्टिव उपन्यास पढा करो। उससे तुम्हारी चिन्तन-शक्ति डिसिप्लिण्ड होगी, तुम्हारो लाइफ रेगुलेटेड होगी।'

मास्टर साहब को उसकी बाते युक्तिसगत प्रतीत होती थी। इन देशो मे कितना वैभव है ! घर, गाडी, सौभाग्य के यहा जैसे पवत हो। वहाँ के शहरा के सामने कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली और बम्बई बौने जैसे लगते है। न्यूयाक, परिस और लन्दन के सामने सभी फीके लगते हैं। इन शहरो मे ऐसे भी नाइट क्लब हैं जहा एक प्याली चाय की कीमत दो सौ रुपये है। मगर उतनी कीमत चुका कर भी चाय पीने वाले आदमियो का वहाँ अभाव नही है। फिर इतने-इतने रुपये कहाँ से आते है ? आते हैं तो टेक्नॉलाजी की बदौलत। टेक्नॉलाजी का श्रेष्ठदान यह पैसा है। और पैसे का मानी है सुख, ऐश्वर्य, सौभाग्य, ब्लैक प्रिंस।

बात सुनते-सुनते कालीपद डे को महसूस होता कि कॉस्टेलो साहब ठीक ही कह रहा है। मजहब-मार्का आदश का युग कब का पीछे छूट

गया, इस पर उसने ध्यान ही नही दिया था। कालीपद डे अब तक उससे ही चिपके पडे हे।

इतने दिनो मे आदमी की केचुल ही नही बदली है, मन भी बदलकर और ही तरह का हो गया है। दिमाग पूरी तरह धुल चुका है। इस बीच रुपया कमाने के उपायो की भी आदमी ने खाज कर ली है।

इस बात की चर्चा करते ही कॉस्टेलो उछल पडा।

बोला, "वेरी गुड आइडिया। फिर तुम हिन्दुस्तान जाओ। में यहाँ से तुम्हे हेल्प करता रहूँगा।"

तव गोआ से पोर्तुगीजो की पताका उखड चुकी थी। वहाँ का आखिरी जहाज भोपू वजाता हुआ, हिस्दुस्तान की समुद्री सीमा छोडकर रवाना हो चुका था। ब्नैक प्रिंस जिसकी कल्पना करता है उसे काय के रूप मे भी परिणत करता है।

उसके बाद एक दिन न्यूयाक से एक काला साहव जेट प्लेन पर सवार हुआ। वह कहाँ जायेगा? आर यू इण्डियन? तुम क्या हिन्दुस्तानी हो।

"येस।"

पासपोट के फोटो से चेहरा मिलाकर देखने पर उस आदमी के मन मे कोई सन्देह नही रह गया।

बोला, "यू मे गो।"

एक दूसरे कमरे मे कस्टम ऑफिस के लोगो ने बोरे विस्तरे की तलाशी ली, कोट की जेबो की तलाशी ली। कही कुछ आपत्तिजनक चीज नही मिली।

'यू मे गो।'

हवाई जहाज रवाना हो गया।

उसके बाद वे कितनी रात मे वहा मे जाते है, किसी को इसका पता नही चलता ह और पता चल भी जाता है तो उसके लिए कोई अपना माथा नही खपाता है। क्योकि साहब के मामले मे माथा खपाना घनघोर अपराध है।

ठीक उसी समय थाने मे ब्लेक प्रिंस के बारे मे पहली शिकायत पहुँचती है और शिकायत यह कि ब्लैक प्रिंस के फ्लैट मे एक आदमी की हत्या हो गयी ह।

पुलिस के खाते मे पहली बार ब्लैक प्रिंस का नाम लिखा गया। पुलिस ब्लैक प्रिंस के फ्लैट की तलाशी लेने पहुँची।

हत्या!

'हत्या शब्द से थाने के अफसरो का जन्म मे ही परिचय हुआ करता है। यही वजह है कि वे आम लोगो की तरह इसमे विचलित नही होते।

मगर ड्यूटी तो करनी ही है। ड्यूटी के लिए वे प्राण तक न्यौछावर कर सकते ह।

विजय सरकार उन दिनो पाक स्ट्रीट थाने का ओ० सी० था। उसे दलबल के साथ ड्यूटी पर जाना पड़ा। उन्होने देखा, विलासिता किसे कहते हे।

बाहर से कॉल-बेल बजाते ही एक आदमी ने अन्दर से दरवाजा खोल दिया।

"आप लोग किससे मिलना चाहते हैं।"

"हम पाक स्ट्रीट थाने से आ रहे ह। मिस्टर डे से मिलना चाहते है।"

यह कहकर अनुमति की प्रतीक्षा बिना किये वे पार्टीशन को पारकर सीधे अन्दर की ओर चले गये। असल मे वह फ्लैट नही, सूट है। पालर, बैडरूम सब कुछ अलग-अलग है। सुसज्जित अपार्टमेन्ट।

विजय ने अन्दर जाते ही कहा, "मैं पाक स्ट्रीट थाने से आ रहा हूँ।"

मिस्टर डे ने कहा, "आइए, मैं आपकी कौन-सी सेवा कर सकता हूँ? ड्रिंक्स ?"

विजय सरकार के दलबल के साथ अन्दर प्रवेश करने के पहले से ही वहां काफी लोग गपशप करते अड्डेबाजी कर रहे थे। पुलिस को

[चौदह]

शुरू मे किसी को भी पता नही चला। विजय सरकार तो पुलिस डिपार्टमेन्ट का एक तुच्छ स्टाफ है, भारत सरकार के इन्टरनल इन्टेलिजेन्स विभाग के सबसे बडे पदाधिकारी को भी कुछ पता नही चला। कलकत्ते की पार्क स्ट्रीट के बाशिन्दो को भी पता नही चला था।

एक विलासपूर्ण फ्लैट के एक अपार्टमेन्ट मे एक काला साहब रहने के लिए आया। काला होने से क्या होगा, उसका चाल-चलन बहुत ही मार्जित है। लिफ्ट मे उतर कर सडक पर खडी अपनी गाडी मे बैठता है और उस मकान के सभी आदमियो की तरह वह भी कही अदृश्य हो जाता है। लिफ्टमैन, जमादार, क्लीनर, स्वीपर, इलेक्ट्रीशियन, मेकेनिक और दरबान दूसरे-दूसरे साहबो को जिस तरह सलाम करते हैं, नये साहब को भी निगाह पडते ही उसी तरह सलाम करते हैं। क्योकि साहब का मतलब साहब ही है। साहब का मतलब मालिक होता है। मालिक ही अन्नदाता होता है। अन्नदाता चाहे काला हो चाहे गोरा, उसे सलाम न करना अपराध है।

दो दिन बाद ही पता चल गया कि नये साहब का नाम ब्लैक प्रिंस है।

मगर उसका असली नाम ब्लैक प्रिंस नही है। असली नाम साहब के लेटर बॉक्स पर सफेद रग से अग्रेजी अक्षरो मे लिखा है—के० पी० डे। मगर कलकत्ते के बडे बडे वी० आई० पी० की जमात के बीच उसका पुकार नाम है ब्लैक प्रिंस।

साहब आयात-निर्यात का व्यवसाय करता है। इसीलिए कही से कई गाडिया आकर फ्लैट के सामने सडक पर खडी होती हैं और उनमे किस्म किस्म की पोशाक पहन, नाना जाति के लोग उतरते हैं। तब बाहर के होटल से खान पीने की सामग्री आती है, बेटर, बाय, बावर्ची आते हैं।

उसके बाद वे कितनी रात मे वहा से जाते हे, किसी को इसका पता नही चलता है और पता चल भी जाता हे तो उसके लिए कोई अपना माथा नही खपाता है। क्योंकि साहब के मामले मे माथा खपाना घनघोर अपराध हे।

ठीक उसी समय थाने मे ब्लैक प्रिस के बारे मे पहली शिकायत पहुँचती है और शिकायत यह कि ब्लैक प्रिस के फ्लैट मे एक आदमी की हत्या हो गयी है।

पुलिस के खाते मे पहली बार ब्लैक प्रिस का नाम लिखा गया। पुलिस ब्लैक प्रिस के फ्लैट की तलाशी लेने पहुँची।

हत्या !

'हत्या' शब्द से थाने के अफसरो का जन्म से ही परिचय हुआ करता है। यही वजह हे कि वे आम लोगो की तरह इससे विचलित नही होते।

मगर ड्यूटी तो करनी ही है। ड्यूटी के लिए वे प्राण तक न्यौछावर कर सकते ह।

विजय सरकार उन दिनो पाक स्ट्रीट थाने का ओ० सी० था। उसे दलवल के साथ ड्यूटी पर जाना पडा। उन्होने देखा, विलासिता किसे कहते हैं।

बाहर से कॉल-बेल बजाते ही एक आदमी ने अन्दर से दरवाजा खोल दिया।

"आप लोग किससे मिलना चाहते है।"

"हम पाक स्ट्रीट थाने से आ रहे हे। मिस्टर डे से मिलना चाहते हैं।"

यह कहकर अनुमति की प्रतीक्षा बिना किये वे पार्टीशन को पारकर सीधे अन्दर की ओर चले गये। असल मे वह फ्लैट नही, सूट है। पार्लर, बैडरूम सव कुछ अलग-अलग ह। सुसज्जित अपाटमेन्ट।

विजय ने अन्दर जाते ही कहा, "मैं पाक स्ट्रीट थाने से आ रहा हूँ।"

मिस्टर डे ने कहा, "आइए, मैं आपकी कौन-सी सेवा कर सकता हूँ ? ड्रिंक्स ?"

विजय सरकार के दलवल के साथ अन्दर प्रवेश करने से पहले से ही वहा काफी लोग गपशप करते अड्डेबाजी कर रहे थे। पुलिस को

"लडकी का नाम क्या है ?"

"कमलाबाला दासी।"

"चेहरा कैसा है ?'

लडकी की मा ने यथासभव ब्यौरा दिया।

"फोटो है ?"

"नही।"

पुलिस ने लडकी के माँ-बाप का पता लिख लिया। उसके बाद तमाम कलकत्ते मे तलाश होने लगी। कलकत्ते के बाहर भी खबर भेजी गयी। मगर उसके बाद एक-एक कर दो महीने बीत गये। फिर पूरा एक साल। आख़िर मे विजय सरकार को सूचना मिली कि उस तरह के चेहरे से मिलती-जुलती एक लडकी अमुक तारीख को पाक स्ट्रीट के उसी फ्लैट मे दिखाई पडी थी। वहाँ के स्वीपर, जमादार, नौकर चाकर और मैनेजर ने उसे देखा था। लडकी सिर्फ उसी तारीख को नही बल्कि और भी कई बार दिखायी पडी। अजनबी चेहरा देखकर सभी आश्चय मे खो गये थे। मगर चूकि वह फ्लैट है, इसीलिए किसी ने ज्यादा कौतूहल नही दिखाया। चेहरे का जो ब्यौरा दिया गया था उससे लडकी के चेहरे मे सादृश्य रहने पर भी उसका लिबास गाँव की लडकी के जैसा नही था। सिर के बालो का स्टाइल, साडी, गहनो और तौर-तरीको से वह बिलकुल आधुनिका जैसी लगती थी।

खबर मिलते ही विजय सरकार फ्लैट के अन्दर गया था। घटी बजाते ही एक अजनबी महिला ने दरवाजा खोल दिया था।

"आप किसमे मिलना चाहते हैं ?"

विजय सरकार ने वही उत्तर दिया जो इसके पहले एक बार दे चुका था।

उसके बाद विजय अपने दल-बल के साथ कमरे के अन्दर दाखिल हुआ। अन्दर पहले जैसा ही दृश्य था। एक जमात हँसी-ठहाके, शोर-गुल और गपशप मे मशगूल थी। उससे पुन शराब पीने का अनुरोध किया गया। विजय सरकार ने पहले की तरह ही विनम्रता के साथ अपनी अस्वीकृति जतायी। उसके बाद वह पुन बाथरूम के अन्दर गया।

अन्तत उस बार भी कुछ हाथ नही लगा।

मगर एक नयी महिला को देखकर विजय को आश्चर्य हुआ।

वही आयी। उस चीज को देखकर वह बोली, "यह लोहू का नहीं, महावर का दाग है। महावर का रग लाल हुआ ही करता है।"

"महावर ?"

जूली बोली, "हा। देखिए, आज ही मैंने महावर लगाया है। महावर लगाने के वक्त शीशी टूट गयी थी और मैंने इसी कपडे से उसे पोछा था। देखिए, टूटी शीशी के काच के टुकडे यही पडे है।"

यह कह कर उसने टीन का एक डिब्बा बाहर निकाला। उसके अन्दर टूटी हुई शीशी के टुकडे थे।

विजय ने देखा। फिर भी उसका सन्देह दूर नहीं हुआ। वह महावर से रँगे कपडे को अपने साथ थाने मे ले आया।

लौटने के समय उसने कहा, "आप अन्यथा नही सोचिएगा मिस्टर डे, मैं अपनी ड्यूटी पूरी कर यहाँ से जा रहा हूँ। आपको बेवजह तग किया, इसके लिए मैं दुखित हूँ।"

बस, उसी समय विजय सरकार की नोट बुक मे पहले-पहल के० पी० डे ब्लैक प्रिंस का नाम दर्ज हुआ।

मगर इसी घटना से इस बात का अन्त नही हुआ। ब्लैक प्रिंस के नाम पर एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा मामला दर्ज होने लगा।

कलकत्ते का चिडियाखाना देखने के लिए एक लडकी अपने मा बाप के साथ स्यालदह स्टेशन पर उतरी। भीड मे बस पर चढते वक्त लडकी एकाएक लापता हो गयी। लडकी की उम्र अठारह या उन्नीस साल की होगी, वह अभी तक कुवारी ही थी।

थाने मे खबर पहुँची। स्थानीय थाने से कलकत्ते के लाल बाजार मे खबर भेजी गयी जहाँ पुलिस का मुख्य कार्यालय है। विजय को भी खबर मिली। दो महीने तक कोई अता-पता ही नही चला। पुलिस चारो तरफ खोज करने लगी।

"नाम क्या है ?"

"कमला। कमलाबाला दासी।"

माँ बाप पुलिस के पैरो पर लोट-लोटकर रोने लगे। उनकी रुलाई से लाल बाजार गूज उठा। पुलिस के बडे बाबू ने उन्हे डाँटा।

उनकी बात सुन कर जो कुछ समझ मे आया वह यह कि भीड मे बस पर चढते वक्त लडकी दिखाई नही पडी।

"लडकी का नाम क्या है ?"

"कमलाबाला दासी।"

"चेहरा कैसा है ?"

लडकी की माँ न यथासभव ब्यौरा दिया।

"फोटो है ?"

"नही।"

पुलिस ने लडकी के माँ-बाप का पता लिख लिया। उसके बाद तमाम कलकत्ते मे तलाश होने लगी। कलकत्ते के बाहर भी खबर भेजी गयी। मगर उसके बाद एक-एक कर दो महीने बीत गये। फिर पूरा एक साल। आखिर मे विजय सरकार को सूचना मिली कि उस तरह के चेहरे से मिलती-जुलती एक लडकी अमुक तारीख को पाक स्ट्रीट के उसी फ्लैट मे दिखाई पडी थी। वहाँ के स्वीपर, जमादार, नौकर चाकर और मैनेजर ने उसे देखा था। लडकी सिर्फ उसी तारीख को नही बल्कि और भी कई बार दिखायी पडी। अजनबी चेहरा देखकर सभी आश्चर्य मे खो गये थे। मगर चूकि वह फ्लैट है, इसीलिए किसी ने ज्यादा कौतूहल नही दिखाया। चेहरे का जो ब्यौरा दिया गया था उससे लडकी के चेहरे मे सादृश्य रहने पर भी उसका निवास गाँव की लडकी के जैसा नही था। सिर के बालो का स्टाइल, साडी, गहना और तौर-तरीको से वह बिलकुल आधुनिका जैसी लगती थी।

खबर मिलते ही विजय सरकार फ्लैट के अन्दर गया था। घटी बजाते ही एक अजनबी महिला ने दरवाजा खोल दिया था।

"आप किससे मिलना चाहते हैं ?"

विजय सरकार ने वही उत्तर दिया जो इसके पहले एक बार दे चुका था।

उसके बाद विजय अपने दल-बल के साथ कमरे के अन्दर दाखिल हुआ। अन्दर पहले जैसा ही दृश्य था। एक जमात हँसी-ठहाके, शोर-गुल और गपशप मे मशगूल थी। उससे पुन शराब पीने का अनुरोध किया गया। विजय सरकार ने पहले की तरह ही विनम्रता के साथ अपनी अस्वीकृति जतायी। उसके बाद वह पुन बाथरूम के अन्दर गया।

अन्तत उस बार भी कुछ हाथ नही लगा।

मगर एक नयी महिला को देखकर विजय को आश्चर्य हुआ।

मिस्टर डे ने अपनी मिसेज कहकर ही उसका परिचय दिया था। ब्लैक प्रिंस क्या साल में एक बार अपनी स्त्री भी बदलता रहता है ?

पुलिस तलाशी का परवाना लेकर अन्दर आयी थी लेकिन उसके कारण किसी में भी भय, लज्जा या सकोच का कोई चिह्न तक न था। यह भी एक अजीब घटना है। मिस्टर डे ने हँसते हुए सारे सवालों का जवाब दिया।

बोला, "सड़क पर खोयी लड़की को मैं अपने फ्लैट में छिपाकर रखूंगा, इसकी आपने कल्पना कैसे की ? छि छि !"

शुरू में विजय को भी सकोच हुआ था। मगर उसे जिस तरह की सूचना मिली है, उसकी खोज खबर तो लेनी ही है। यही उसकी ड्यूटी है। इसी तरह छोटी-छोटी बातों से एक बड़े रहस्य का भडाफोड होता है। ऐसा बहुत बार हो चुका है।

उस बार भी वही घटना घटी।

अंतत उस कमलाबाला दासी का पता चला। कमलाबाला दासी खुद तो नही मिली, पर उसका पता चल गया।

विजय सरकार के लिए वह एक अजीब ही अनुभव था। विजय के इनफॉमर तमाम कलकत्ते मे बिखरे हैं। उन लोगों को हर सूचना के लिए थोडी-बहुत बख्शीश मिला करती है—कभी दस रुपये तो कभी पन्द्रह रुपये। ज्यादा गिडगिडाता है तो बीस रुपये मिल जाते है। लेकिन बदले में वे लोग जो खबर पहुँचाते ह, वह खबर बहुत ही कीमती हुआ करती है। यह नही कि कभी-कभी नमकहरामी न करते हो। सो वे करें उसमे विजय को आपत्ति नही है। उस तबके के आदमी कभी कभार ऐसा करते ही ह। उसके लिए उन्हें कभी सजा नही दी जाती है।

तब हाँ, बीच बीच मे विजय को उनका दुखड़ा भी सुनना पडता है। फिर कभी-कभी तकाजा भी करना पडता है। पुलिस की भाषा में इन्हें 'डेकॉय' कहा जाता है।

उसी किस्म के एक आदमी ने आकर सूचना दी, "कमलादासी का पता चल गया है, हुजूर।"

"कहाँ ?"

"रसेल स्ट्रीट मे।"

"नम्बर क्या है ?"

"नम्बर मालूम नही है, हुजूर, डेरा दिखा दे सकता हूँ।"

"डेरा है और डेरे का नम्बर नही ?"

"नही, वह डेरा नही सडक पर की एक दुकान है, फुटपाथ की दुकान।"

उसी आदमी ने पहले-पहल झगडू के बारे मे बताया। दुकान का ब्यौरा सुनकर विजय वहा तलाशी लेने गया। उस वक्त रात के दो बज रहे होगे। तमाम कलकत्ता नीद की बाँहो मे ऊँघ रहा था। दरवाजे पर धक्के की आवाज सुनकर झगडू ने शुरु मे सोचा, उसीके दल का कोई आदमी होगा। मगर दरवाजा खोलते ही, उसकी आँखे ज्यो ही पुलिस पर गयी, वह सन्न-सा रह गया।

"सलाम हुजूर!"

कोई सलामी ठोंके तो सलामी का जवाब देना नियम है, मगर पुलिस के पास उतना वक्त नही था। पुलिस के आदमी तुरन्त ही टार्च जलाकर जबदस्ती उसके कमरे के अन्दर चले गये। उसके बाद उसके घर की पूरी छान-बीन करने पर उन्हे बीयर की कुछ बोतलें और किसी औरत का एक जोडा सोने का झुमका मिला। खोयी हुई लडकी के बाप ने जैसा बयान दिया था, सोने के झुमके उसी तरह के थे।

विजय ने उसे डाटते हुए पूछा था, "झुमके का यह जोडा किसका है ?"

"मालूम नही, हुजूर।"

"मालूम नही है—कहने से काम नही चलेगा। बताओ, ये झुमके कहाँ से आये ?"

उस समय झगडू की जबान जैसे सिल गयी थी। तब वह इस लाइन मे नया नया ही आया था। थोडा बहुत डर भी गया था।

उसने चट से कहा, "हुजूर, मेरी घरवाली का है।"

"घरवाली का ? झूठ बोल रहे हो ? तुम्हारी घरवाली कहा है ?"

"हुजूर, गाव पर।"

"घरवाली गाव पर है और उसका गहना यहाँ तुम्हारे पास ? तुम झूठ बोल रहे हो।"

यह कह कर विजय सरकार ने उसे कसकर एक तमाचा लगाया। उसके बाद झगडू और बैरागी दोनो को थाने मे ले जाकर बद कर

दिया था। उस समय वैरागी ने ही स्वीकार किया था कि उसने स्याल-दह के मोड पर उस लडकी को लापता कर दिया था।

मामला अदालत मे गया था। अदालत मे भी उसने अफसर के सामने स्वीकार किया था कि लडकी को उसी ने लापता कर दिया था।

"तुमने उसे क्यो लापता कर दिया ?"

वैरागी ने कहा, "गहने के लालच मे।"

"उसके बदन पर क्या-क्या गहना था ?"

वैरागी ने कहा, "कान के झुमके के अलावा कुछ भी नही था।"

"लडकी का नाम क्या है ?"

"हुजूर, उसने अपना नाम कमला बताया था ?"

"अब वह कहा है ?"

वैरागी ने कहा, "हुजूर, मैंने उसे बेच दिया है ?"

"कहा बेचा ?"

"पजाब मे।"

"कितने रुपयो मे बेचा था ? जिसके पास बेचा था, उसका पता क्या है ?"

"पाच सौ रुपये मे। उन लोगो का पता मुझे मालूम नही है।"

उस बार वैरागी सामन्त को दो साल के कारावास की सजा मिली थी। लेकिन असल मे वैरागी ने लडकी को देखा तक नही था। लडकी को बेचने की बात तो दूर, उसके गहने तक को नहीं छुआ था। लेकिन उसे ही उस अपराध के कारण दो साल तक जेल की यातना भुगतनी पडी।

[पन्द्रह]

कहा जा सकता है कि जेल की सजा भुगतना ही वैरागी सामन्त की असली नौकरी थी। ब्लैक प्रिंस ने जितनी बार अपराध किया है, वैरागी सामन्त को उतनी ही बार जेल की सज़ा भुगतनी पड़ी है।

मगर एक दिन ऐसा भी आता है जब आदमी जेल जाते-जाते थक जाता है। वैरागी सामन्त भी आखिर आदमी ही है। उसके भी शरीर मे रक्त-मास है, उसके अन्दर भी मन नामक एक वस्तु है। यही वजह है कि एक दिन ऐसा आया कि वह भी थकावट महसूस करने लगा। इसके अलावा ब्लैक प्रिंस की जमात मे तब बहुत से नौजवान आ चुके थे। अभाव या स्वभाववश बहुत से आदमी ब्लैक प्रिंस की जमात मे शामिल हो चुके थे। झगड़ू उस जमात का सरदार था। मगर जमात का असली लीडर ब्लैक प्रिंस परदे की ओट मे रहता था। वह ऐसे परदे की ओट मे रहता था कि उसे पकड़ना हमारी सामर्थ्य के बाहर की चीज़ थी। पकड़ने का कही कोई सुराग रह जाये, वह ऐसा नही चाहता था। अगर कही कोई निशानी रह भी जाती तो वह उसे सावधानी से पोछ देता था। उसके बाद समाज के ऊँचे तबके का आदमी बनकर अय्याशी मे डूब जाता था। हम अगर कोई सुराग पाकर उसके विलासिता से पूर्ण फ्लैट मे जाते तो देखते वहाँ की अड्डेबाजी मे हँसी-ठट्ठा, गपशप और ह्विस्की का दौर चल रहा है।

सुनते है, पोर्तुगीजो ने ही हिन्दुस्तान की जमीन पर पहले-पहल पैर रखे थे उसके बाद डचो ने और सबसे आखीर मे अंग्रेजो ने। आज वे लोग सभी इस देश से विदा हो चुके है लेकिन हमारे देश की मिट्टी मे उनके पैरो की धूल का स्पर्श सभवत अब भी चारो तरफ फैला हुआ है। यही वजह है कि यहा ब्लैक प्रिंस जैसे लोग पैदा होते है। नही तो सुनीति जैसी लड़की ब्लैक प्रिंस के चगुल मे क्या फँसती? जो औरतें इतनी धर्म-परायण होती है उन्हे क्यो घनघोर कष्ट सहना पड़ता है?

मगर मेरे ही मास्टर साहब ब्लैक प्रिंस है या नही, मुझे इस पर सन्देह है क्योकि उनमे ऐसी दुर्बुद्धि भला आयेगी ही क्यो ?" मैं सोचता।

विजय कहता, "तुम नये-नये पुलिस की नौकरी मे आये हो, इसीलिए तुम्हे मालूम नही है कि आदमी का चरित्र कितना अद्भुत होता है। उतने दिनो तक मैं अगर पुलिस-लाइन मे नही रहता तो इसकी जानकारी मुझे भी हासिल नही होती। इसके अलावा आदमी का लोभ किस तरह की चीज होती है, इस लोभ के कारण आदमी कितना नीच हो सकता है, इसके इतने उदाहरण मेरे पास है कि क्या कहूँ। अगर मै इस नौकरी मे नही आता तो इसकी कल्पना करना भी मेरे लिए मुश्किल था।"

मैं कहता, "भेट हुई तो एक बार मास्टर साहब से कहूँगा मास्टर साहब आपने यह क्या किया ?"

विजय ने कहा, "मगर यही कालीपद डे तुम्हारे मास्टर साहब है, इस बात का पता तुम्हे कैसे चला ? यह ब्लैक प्रिंस कोई दूसरा ही काली पद डे भी तो हो सकता है। पहले से ही तुम इस तरह की धारणा क्यो बना रहे हो ?"

कुछ देर तक चुप्पी साधे रहने के बाद वह फिर बोला, "इसके अतिरिक्त मैंने खुफिया लगा ही दिया है। देखो, वह क्या खबरे लाता है। जिसको लगाया है वह बडा ही चतुर आदमी है।"

छात्री के गले का हार चोरी चले जाने से उन्हे इतना दुख क्यो होता है ?

उसी सुनीति की डवडवायी आखो को देखने पर मुझे बडा ही आश्चय सा लगता था ।

सीढिया उतरकर जब मै ऑफिस जाने के लिए एकमजिले की तरफ आने लगता, मुझे सुनीति का उतरा हुआ चेहरा दिखायी पडता। वह मेरे लिए खडी रहती ।

मै पूछता, "क्या हुआ, मुझसे कुछ कहना चाहती हो ?"

सुनीति कहती, "वीथी के हार का कोई पता चला ?"

सुनीति का चेहरा देखकर मैं अवाक् हो जाता था ।

"कोशिश कर रहा हूँ, देखो क्या होता है । पुलिस छानबीन कर रही है ।" मैं कहता ।

उसके बाद मैं खामोशी ओढ लता था । वह भी वहाँ खडी नही रहती थी, अपने कमरे की ओर चली जाती थी ।

मैं भाभी जी को बीच-बीच मे सुनीति की बाते बताता था । भाभी जी कहती, "सुनीति इतनी दुखित है जैसे उसका ही हार खो गया हो ।"

उसके बाद भाभी जी कहती, तुम अब इसके लिए चिन्ता मत करो, देवर जी, अब हार मिलने वाला नही है । मैं भी अब उसके बारे मे कुछ नही सोचूगी ।"

विजय मेरी उम्मीदो को जिलाये रखता था ।

"तुम इतना निराश क्यो हो रहे हो ?' विजय कहता, "अबकी मैं उसे छोड़ूगा नही । मैंने खुफिया लगा दिया है, देखें, वह क्या करता है ।"

"खुफिया ! तुम वैरागी सामन्त के बारे मे कह रहे हो ?"

विजय कहता, "नही, मैं वैरागी सामन्त के बारे मे नहीं कह रहा हूं । मैंने वैरागी के पीछे भी खुफिया लगा दिया है । झगड़ू के पीछे भी। वैरागी तो कुछ भी नही है, अब उसकी उम्र ढल चुकी है, वह जेल नही जाना चाहता है । झगड़ू ही असली कल्प्रिट है । उसकी जमात मे पचास आदमी हैं । अबकी मैं सभी को पकड़ूगा । दिल्ली से मैंने स्पेशल परमिशन ले लिया है । ब्लैक प्रिंस की पूरी केस-हिस्ट्री मैंने तयार कर ली है ।"

मगर मेरे ही मास्टर साहब ब्लैक प्रिंस हे या नही, मुझे इस पर सन्देह है क्योकि उनमे ऐसी दुर्बुद्धि भला आयेगी ही क्यो ?" मैं सोचता ।

विजय कहता, "तुम नये-नये पुलिस की नौकरी मे आये हो, इसी-लिए तुम्हे मालूम नही है कि आदमी का चरित्र कितना अद्भुत होता है । उतने दिनो तक मैं अगर पुलिस-लाइन मे नही रहता तो इसकी जानकारी मुझे भी हासिल नही होती । इसके अलावा आदमी का लोभ किस तरह की चीज होती है, इस लोभ के कारण आदमी कितना नीच हो सकता है, इसके इतने उदाहरण मेरे पास हं कि क्या कहूँ । अगर म इस नौकरी मे नही आता तो इसकी कल्पना करना भी मेरे लिए मुश्किल था ।"

मैं कहता, "भेट हुई तो एक बार मास्टर साहब से कहूँगा मास्टर साहब आपने यह क्या किया ?"

विजय ने कहा, "मगर यही कालोपद डे तुम्हारे मास्टर साहब है, इस बात का पता तुम्हे कैसे चला ? यह ब्लैक प्रिंस कोई दूसरा ही काली पद डे भी तो हो सकता हे । पहले से ही तुम इस तरह की धारणा क्यो बना रहे हो ?'

कुछ देर तक चुप्पी साधे रहने के बाद वह फिर बोला, "इसके अतिरिक्त मैंने खुफिया लगा ही दिया है । दखो, वह क्या खबरें लाता है । जिसको लगाया है वह बडा ही चतुर आदमी हे ।"

[सोलह]

खुफिया और कोई नही, वशी है।

वशी इस लाइन मे बहुत दिनो से है। बडे-बडे घाघो को पकडने के कारण जब-जब मुझ जैसे पुलिस अफसरो को सरकार ने पदक दिया है, सम्मानित किया है, पदोन्नति की है तो उसके पीछे वशीलाल जैसे आदमी हमेशा रहे हैं जिन्होने हमारी सहायता की है। लेकिन बाहर के आदमी उनका नाम नही जान पाते है और जान सकेंगे भी नही। वे लोग हमेशा परदे की ओट मे ही रहेगे। परदे की ओट मे रहने के लिए ही उनका जन्म हुआ है, अपने आपको छिपाकर, छद्मनाम से घूमना फिरना ही उनका काम है।

वैरागी सामन्त जिस दिन झगडू के घर पर गया था, उस दिन भी वशीलाल उसके पीछे पीछे चलकर उसकी गतिविधियो पर निगरानी रखता रहा था। उसके बाद उन दोनो मे क्या क्या बातें हुई, वह सुन नही सका मगर वह वैरागी सामन्त के प्रति चौकस बना रहा।

शायद आधे घट से कम अरसे मे ही उनकी बातचीत का दौर समाप्त हो चुका था। वशीलाल ने देखा, झगडू ने अपने झोपडे का दरवाजा बन्द कर दिया और वैरागी सामन्त धीरे-धीरे अपने घर की तरफ लौटने लगा।

वशीलाल का काम निगरानी रखना है और अगर बातचीत का कोई टुकडा कानो मे आये तो बडे साहब को उसकी रिपोट देनी है।

दूसरे दिन सुबह की ड्यूटी के पहले ही वशीलाल साहब के पास आया।

विजय ने पूछा, "कल क्या-क्या देखा ?"

वशी ने कहा, "हुजूर, वैरागी थाने से निकलकर सीधे झगडू के रसेल स्ट्रीट वाले मकान पर गया था।"

"झगडू के घर के अन्दर गया था ?"

"हाँ, हुजूर।"

"उस समय क्या वक्त हो रहा था ?"

"रात के बारह बज रहे थे। उस समय रसेल स्ट्रीट की तमाम इमारतो की बत्तियाँ बुझ चुकी थी। मुहल्ले मे सन्नाटा रेंग रहा था।"

"उसके बाद तूने क्या किया ?"

"उसके बाद मैं भी उसके पीछे-पीछे आया। वह अपने डेरे मे चला गया।"

विजय ने कहा, "अभी से ही झगड् पर तू कडी निगरानी रख। झगडू ही चोरो का सरदार है। असली बदमाश भी वही है।"

वशीलाल ने कहा, "अभी मं उसके झोपडे मे ही जा रहा हूँ।"

"झगडू तुझे पहचानता है ?"

"नही हुजूर, वह मुझे पहचानता नही है।"

"फिर तो बहुत ही अच्छी बात है। जाकर देखना कि झगडू कहा-कहाँ जाता है, क्या-क्या करता है। अगर उसे पाक स्ट्रीट मे ब्लैक प्रिंस के फ्लैट के अन्दर जाते देखना तो निगरानी रखना। माल मिल जायेगा तो तुझे बख्शीश मे मोटी रकम मिलेगी।"

वशीलाल ने कहा, "यह बात मुझ पर छोड दीजिए, हुजूर।"

विजय ने कहा, "यह ले, अभी इस रुपये को रख, बाद मे और दूँगा।"

उसी दिन तीसरे पहर वैरागी सामन्त थाने मे दुबारा आया। आकर बडे बाबू को सलाम किया।

विजय ने पूछा, "क्यो, कुछ पता चला ?"

"नही हुजूर।"

"नही का मतलब ? अगर हार नही मिला तो मैं तुझे फिर से जेल की हवा खिलाऊँगा।"

वैरागी ने कहा, "मुझ पर हुजूर इतना जुल्म क्यो कर रहे है ? क्या मैने हार छीना है ? मैने तो इस कारोबार से नाता ही तोड लिया है। आप को तो सब कुछ मालूम ही है, हुजूर।"

विजय ने कहा, "मैं हुजूर-वुजूर नही समझता, मुझे हार वापस मिलना चाहिए। माना तूने हार नही लिया है, मगर तेरे दल के ही किसी आदमी ने उसे गायब किया है। हर हालत मे हार मुझे मिल जाना चाहिए।"

वैरागी ने कहा, "मैं कोशिश कर ही रहा हूँ, हुजूर।"

"तूने क्या कोशिश की है, यही बता। हार किसने लिया है, पहले यही बात बता।"

"मैंने तो बताया ही कि खोज पड़ताल कर रहा हूँ।"

"कल तू खोज-पड़ताल करने कहाँ-कहाँ गया था?"

"मैं, हुजूर, यहाँ से बड़ा बाज़ार गया। बड़ा बाजार से पगेयापट्टी, पगेयापट्टी से कडेया। रात भर मैं चक्कर काटता रहा हूँ। हार का कहीं अता-पता नहीं चला। आज भी जाऊँगा।"

विजय ने कहा, "ठीक है, अब तू यहाँ से जा।"

विजय ने यह सब इन्तजाम पहले ही चुपके-चुपके कर लिया था। मुझसे भेंट होते ही वह कहता, "तुम फ़िक्र मत करो, मैं अपना काम ठीक से किये जा रहा हूँ।"

मैं कहता, "मगर देर होगी तो हार गुम हो जायेगा।"

विजय कहता, "गुम तो हो ही चुका है। कोशिश करके देख रहा हूँ कि कोई पता लगता है या नहीं।"

उसके बाद मैंने उसके बारे में सोचना ही छोड़ दिया। विजय पर सारी जिम्मेदारी सौंपकर मैं चैन की साँस लेने लगा।

[सत्रह]

उस वक्त ब्लैक प्रिंस के घर मे जश्न मनाया जा रहा था। जो आदमी कभी भारतीय आदर्श का पालन करता हुआ ऊँचाई पर पहुँच चुका था, वही केचुल बदलकर एक दिन घोर विलासी हो जायेगा, यह भी शायद ईश्वर की एक विचित्र लीला ही है।

केवल ब्लैक प्रिंस ही नही हम सभी आदमी क्रमिक विकास के नियम से बँधे है। आज जो ईमानदार है कल वही चोर हो जाता है। आज जो रत्नाकर दस्यु है कल वही वाल्मीकि कवि हो जाता है। आज जो राजकुमार सिद्धार्थ है, कल वह ध्यानमग्न तथागत हो जाता है। यह क्रमिक विकास चूंकि अस्तित्व मे है इसीलिए जीवन मे इतना वैचित्र्य है, साहित्य इतना फल फूल रहा है, शिल्प इतनी प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाता है। साहित्य और शिल्प मनुष्य की इन्ही विचित्रताओ के कारण आज भी सृजन मे रत है। इस क्रमिक विकास के रहने के कारण ही शिल्प से हमारा इतना गहरा रिश्ता है, साहित्य हमारे लिए प्राणो की सपदा है।

एक दिन ब्लेक प्रिंस ने इस कलकत्ता शहर मे आकर जब डेरा डाला, तब अग्रेज जा चुके थे, देश दो टुकडो मे बँट गया था। पोर्तुगीज और फ्रासीसी खेमा उठाने की तैयारी कर रहे थे। उनकी रिक्तता की पूर्ति के लिए तमाम दुनिया के भाग्यान्वेषी स्मगलर और जालसाजी करने वालो के दल हमारे देश के बम्बई और कलकत्ता शहरो मे आये। इन दोनो शहरो मे उन दिनो बहुत से नये नये कारोबारो की नीव पडी। कारोबार नया होने पर भी उनमे मुनाफा ज्यादा था। भले आदमी के सीधे सरल कारोबार की बनिस्बत उनमे बहुत ज्यादा मुनाफा होता था। दूसरे-दूसरे कारोबारो मे अगर तीस प्रतिशत है तो इन नये नये कारोबारो मे दो सौ प्रतिशत। उस पर टैक्स देने का भी झमेला नही। इनकम टैक्स, सेल्स टैक्स या वेल्थ टैक्स की झझटे नही। मसलन जाली पासपोट का

कारोबार। इस तरह के बहुत से बडे आदमी दिल्ली, बबई और कलकत्ते मे हैं जो मौज लूटने के लिए लन्दन, अमेरिका, पेरिस और जर्मनी जाना चाहते हैं। उन्हे पासपोर्ट की जरूरत पड़ती है, विदेशी मुद्रा की जरूरत पडती है, बहुत कुछ की जरूरत पड़ती है। मगर कानून का पालन करते हुए रिजर्व बैंक से कागज-पत्र वगैरह लाने मे बेहद झझटो का सामना करना पडता है। अगर उन झमेलो मे नही पडना चाहते हो तो सीधे हमारे पास चले आओ। हम तुम्हारी सारी समस्याओ का समाधान कर देंगे।

समस्या क्या सिर्फ पासपोर्ट की ही है? यहाँ के आदमियो को बहुत सी समस्याओ का सामना करना पड़ता है। गरीब लोगो के सामने खाने और रहने की समस्या के अतिरिक्त कोई दूसरी समस्या नही है। इन दोनो समस्याओ का समाधान होते ही वे सुखी हो जाते हैं। मगर बडे आदमियो की समस्याओ का कोई ओर-अन्त नही। उनके पास पैसा है परन्तु मौज मनाने के उपकरणो की कमी है। जगह भी उस लायक नही है। सीधे रास्ते से उन उपकरणो को पाने की कोशिश की जाये तो ढेरो झझटो का मुकाबला करना पड़ता है। सबसे बडी बाधा तो पुलिस है। तुम आराम के साथ 'ब्लू फिल्म' देख सको, पुलिस के जुल्म के चलते इसका भी उपाय नही है। होटल के कमरो म कही यह सब मजा मिलता है? उसके अड्डा का पता रहे तो भय की कोई बात नही। निश्चिन्तता के साथ वहाँ चले जाओ, गाठ से पैसे निकालकर बैठे-बैठे मौज करो और घर वापस चले आओ।

उसके बाद लडकियो के बारे मे समस्या है। कमलावाला दासी जैसी ही कितनी दासियाँ कलकत्ता शहर मे खो जाती है, इसका हिसाब कौन रखता है? कौन जानता है कि कहा किस अँधेरे तलघर मे उनकी क्या स्थिति है? कहा किन बस्तियो की झुग्गिया मे उन्हे मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह बात किसी समाचार-पत्र का सपादक भी नही जान पाता है।

उसके बाद है सोना। सोने की मांग क्या कम है? सोना ही दुनिया की सभ्यता का एकमात्र मानदड है। ब्रिटिश राज्य मे एक देश से दूसरे देश मे बेरोक-टोक सोना आता जाता था। मगर जब से देश स्वाधीन हुआ, यह अधिकार भी सीमित हो गया। अब वह चोर रास्ते का यात्री बन गया। सोने के आवागमन का सिलसिला तो जारी है, लेकिन यह

अब सर्वसाधारण की आँखो की ओट मे होता है। सवसाधारण को आँखो की ओट मे रहकर सोना मुट्ठी भर आदमियो के मुनाफे का जरिया हो गया है। मुनाफे का जरिया होकर वह विलासिता से पूण फ्लैटो मे, मल्टी-स्टोरिड इमारतो मे, बैङ्क के लॉकरो मे, ब्लैक प्रिंस की बोतलो मे, लडकियो के कारोबार मे अपने आप को छिपाने लगा है। कभी आदमी की सहूलियत के लिए हो सोने का आविष्कार हुआ था। मगर आज सोने की खरीद-बिक्री के लिए ही ब्लेक प्रिंस जेसे लोगो का आविष्कार होता है।

मिस्टर डे जब एकान्त मे रहता है तो बीच-बीच मे उसे कॉस्टेलो की याद आती है। कॉस्टेलो ने ही उसे रास्ता बताया था। उसी के कारण आज मिस्टर डे इतना बडा आदमी है। आज उसे इतना आराम मिल रहा है, आज वह इतनी विलासिता का मालिक है। कॉस्टेलो ने ही उसे जासूसी उपन्यास पढना सिखाया था। उसी ने कहा था यह घम का नही, रुपये का युग है, ब्लेक प्रिंस। हिन्दुस्तान के बादशाह, इजिप्ट की क्लियोपेट्रा और रोम का जूलियस भी अपने जीवन मे जिस आराम और विलासिता को नही जी सके, पैसा रहने पर आधुनिक युग मे तुम उससे भी अधिक आराम से रह सकोगे। उसी पेसे को जिससे तुम प्राप्त कर सको, वह रास्ता भी मैं तुम्हे बता दूँगा।"

ब्लैक प्रिंस ने पूछा था, "क्या है वह रास्ता ?"

"मैं तुम्ह सिफ रास्ता ही नही बताऊँगा, उसकी खुराक का भी इन्तजाम कर दूँगा। तुम इडियन सिटिजेन हो, अब इडिया इडिपेन्डेन्ट हो चुका है, अब तुम इडिया लौट जाओ। तुम्हे कुछ भी नही करना है। हमारा आदमी कैलकटा मे है, वह जैसा कहे, वैसा ही करना।"

"मगर मैं हिन्दुस्तान लौट सकू इसका खर्चा ?"

कॉस्टेलो ने कहा था, "उसके लिए तुम्हे नही सोचना है। पैसा हम देंगे। और न सिफ पेसा ही, बल्कि मेरा आदमी तुम्हे उपाय भी बतायेगा। वह जैसा कहेगा, तुम्हे वेसा ही करना है। अब मैं तुम्हे नया नाम दे रहा हूँ— ब्लैक प्रिंस।"

और उसी दिन से गौतम बुद्ध तथागत रातो-रात राजकुमार सिद्धार्थ हो गया, महाकवि वाल्मीकि रत्नाकर दस्यु हो गया। क्रम-विवत्तन की धारा बीसवी शताब्दी के युद्धोत्तर काल मे पहुँचकर अप-सस्कृति के प्रभाव मे विपरीत पथ पर प्रवाहित होने लगी।

एक दिन रात मे मिस्टर डे का खास खानसामा महावीर उसके पास आया और उसने अनुरोध किया, "हुजूर"

मिस्टर डे उस समय ब्लैक प्रिंस के नशे मे चूर था।

थकी पलकों को उठाकर उसने कहा, "क्या है ?"

"आपने कहा था कि एक नये आदमी की ज़रूरत है। मैं ले आया हूँ। बडा ही सज्जन है।"

"कहाँ है ?"

"यह रहा।"

इतना कहकर महावीर ने जिस आदमी को लाकर सामने खडा किया, ब्लैक प्रिंस ने उसकी ओर देखा। धुंधली, अर्धनिंदायी आँखो से जो कुछ दिखाई पडा, उससे वह आदमी उसे बुरा नही लगा।

"आदमी तेरा विश्वासी है न ?"

"जी हा हुजूर, मेरे देश का आदमी है। बहुत ही काम का आदमी है।"

"शराब तो नही पीता है ?"

"जी नही। शराब तो दूर की बात, किसी भी तरह के नशे का सेवन नही करता है। यहा तक कि बीडी भी नही पीता है। बहुत ईमानदार आदमी है।"

हुजूर ने कहा, "हा, नशेडी-भँगेडी को कभी मेरे घर के अन्दर मत लाना। वैसा आदमी मुझे सुहाता नही है। और हा, ह्विस्की की बोतल का ढक्कन खोल सकता है या नही ?"

"हा हुजूर, यह आदमी एक विलायती साहब के घर पर काम करता था। साहब विलायत चला गया, इसीलिए अब बेकारी का शिकार हो गया है। खाना तक नसीब नही हो रहा है।"

हुजूर ने पूछा, "वेतन कितना लेगा ?"

आदमी ने कहा, "हुजूर, खाना-कपडा के अलावा आप जितना चाहे, दे सकते है।"

"ठीक है, नाम क्या है ?"

"ठगनलाल। ठगनलाल कहार।"

हुजूर ने कहा, "ठीक है, आज से ही उसे बहाल कर ले। तू तो कह रहा था न, कि तुझे एक महीने के लिए देश जाना है ? उसे काम-काज समझा दे और तू देश हो आ।"

आश्चय है कि दो दिन के अन्दर ही ठगनलाल कहार साहब का चहेता खानसामा हो गया। ठगनलाल न हो तो साहब का मन सतुष्ट नही होता है। साहब जब तक दोस्त मित्रो के साथ शराब का दौर चलाता रहता है, ठगनलाल दरवाजे की ओट से सब कुछ देखता रहता है। कब किसका गिलास खाली होता है, यह देखना ठगनलाल की ड्यूटी है। वह तुरन्त खाली गिलास मे ह्विस्की और सोडा डाल देता है। किसी को कुछ भी कहने की जरूरत नही पडती है, इसीलिए कोई किसी चीज़ की कमी महसूस नही करता है। सब कुछ हाथ के पास रख देता है। ठगनलाल दो ही दिनो के बीच साहब के जीवन की एक अनिवाय वस्तु के रूप मे परिणत हो गया।

किसी चीज़ की ज़रूरत होते ही साहब पुकारता है, "ठगनलाल "

ठगनलाल हर क्षण साहब की खिदमत मे हाज़िर रहता है। वह कहता, "हुजूर !"

साहब सोते सोते पुकारता, "ठगनलाल, ऐ ठगनलाल !"

ठगनलाल आकर देखता, साहब नीद मे खो गये हैं। ऐसा कहना भी जैसे एक नशा ही था। ठगनलाल को पुकारना भी साहब के नशे मे शामिल हो गया था।

ठगनलाल का काम साहब के हाथ मे मनीबैग ही थमाना नही है, सिगरेट के डिब्बे से लेकर उन सारे सामानो को उनके पास लाकर देना है, जो उनके हाथ के पास नही हो। साहब के मन की बातो को जानना ही ठगनलाल की ड्यूटी है—साहब को किस चीज़ की जरूरत है, उसका पहले ही पता चला लेना उसका काम हे। खानसामा तो उसी को कहते है जो इशारा करने के पहले ही समझ ले। जब वहाँ झगडू आता है, वैरागी सामन्त आता है, उस समय भी ठगनलाल वहा मँडराता रहता है। वे लोग साहब से क्या-क्या कह रहे हे, साहब उनसे क्या-क्या पूछता है, ठगनलाल यह सब सुन भी ले तो कोई दोप नही, क्योकि ठगनलाल नशे का सेवन नही करता है। ठगनलाल ईमानदार है।

विजय ने वशीलाल से कहा था कि वह वहा कभी अपना असली नाम जाहिर न होने दे। ठगनलाल के नाम से ही वह वहा अपना परिचय दे।

जब रात गहरा जाती है और साहब नीद मे खो जाते है तो ठगनलाल जानता है कि अब दो घटे तक उसकी पुकार नही होगी। तब वह

बाहर निकलता है, फ्लट के दस मंजिले से सीढियाँ उतरकर नीचे आता है और फिर सडक पर। पार्कस्ट्रीट में तब सन्नाटा रेंगता रहता है, फुटपाथ पर ही जिनका घर-द्वार है, वे सिकुडकर किसी कोने मे या पोर्टिको के बरामदे पर लेटे रहते है। उसके बाद वह कई गलियो का चक्कर काटता हुआ थाने मे विजय सरकार के पास जाता है।

विजय सरकार ने यह आदेश दे रखा था कि चाहे जितनी भी रात क्या न रहे, वशीलाल अगर जरूरत महसूस करे तो उसे जगा सकता है। अगर कोई खबर हो तो विजय सरकार को उसकी सूचना पहुँचा जाये।

उस दिन भी वह आया। आवाज सुनते ही विजय उठकर बैठ गया।

"कौन है ?"

"मैं वशीलाल हूँ, हुजूर।"

विजय ने पूछा, "क्या खबर है ? कुछ पता चला ?"

वशीलाल ने कहा, "जी हाँ।"

"क्या ?"

वशीलाल ने कहा, "झगड़ू कल भी आया था। आकर देन-लेन की बात की। कलकत्ते के बडा बाजार मे जिन जिन चीजो की बटमारी हुई थी, साहब के पास जमा किया। साहब ने कीमत चुकायी।"

"साहब ने कितना रुपया दिया ?'

"तीन सौ।"

विजय ने कहा, "और लडकी ? वह लडकी कहा गयी ? कुछ खबर मिली ?"

वशीलाल ने कहा, "साहब ने उसे राजस्थान चालान कर दिया है। जोधपुर से एक व्यापारी आया था, उसने साहब को तीन हजार रुपया दिया।"

विजय तीन दिनो से योजना बना रहा था। वशीलाल लगभग हर रोज आता था और खबर पहुँचा जाता था।

विजय ने पूछा, "साहब किस वक्त घर से बाहर निकलता है ? कब वापस आता है ?"

वशीलाल ने कहा, "लच के पहले ही दस बजे दिन मे निकलता है और शाम छह-सात बजे के बीच वापस आता है।"

"उस बीच तू हमे किसी दिन साहब के फ्लैट के अन्दर घुसा सकता है ? लेकिन हाँ, किसी को मालूम नही होना चाहिए।"

"क्यो नही ?"

विजय ने कहा, "साहब के फ्लैट मे कोई ऐसी जगह है जहाँ हम दो तीन आदमी छिपकर रह सकें ?"

वशीलाल ने कहा, "हाँ, है हुजूर, दो-तीन आदमी जिसमे छिप सकें, वैसी जगह का मैं इन्तजाम कर दूँगा। साहब के फ्लैट की बगल मे एक स्टोर रूम है, वही आप लोगो को छिपा दूँगा। दोपहर मे ही आप लोग वहाँ छिपकर बैठ जाइएगा। उस कमरे मे मेरे सिवा कोई दूसरा आदमी नही जाता है।"

विजय ने पूछा, "फिर हम कब चलें ? बृहस्पतिवार को सुविधा होगी ?"

"नही हुजूर, वह ड्राइडे है। उस दिन शाम के वक्त बहुत से आदमी शराब पीने आते हैं।"

"ठीक है, फिर हम लोग कब चले ?"

वशीलाल ने कहा, "मौका देखकर एक दिन पहले ही आपको सूचना दे जाऊँगा।"

इतना कहकर वह वहाँ रुका नही। तब सुबह होने होने को थी। साहब के नीद से जगने के पहले ही उसे वहाँ जाकर उपस्थित होना है।

वशीलाल जिस तरह चुपचाप आया था, उसी तरह वापस चला गया। पाक स्ट्रीट मे ठगनलाल बनकर उसने वहाँ प्रवेश किया।

इस बात की सूचना विजय सरकार ने मुझे भी दी। विजय ने कहा, "मेरे साथ तुम्हे भी स्पॉट पर चलना है।"

"मुझे उसमे क्यो घसीट रहे हो ?" मैंने कहा, "यह तो तुम्हारे डिपार्टमेन्ट का मामला है।"

विजय ने कहा, "फिर भी एक बार चलो, उससे मुझे भी मदद मिलेगी। अपना रिवॉल्वर अपने साथ ले लेना, मैं भी अपना साथ लेता जाऊँगा। ब्लैक प्रिंस के बारे मे बहुत कुछ सुन चुका हूँ, प्रोटेक्शन की पूरी तैयारी करके ही वहाँ जाना चाहिए—इतना जरूर है कि मैं सच वारन्ट अपने साथ लेकर जाऊँगा।"

मुझे थोडी दुविधा हो रही थी।

विजय ने मुझे असमजस मे देखकर कहा, "अरे, इस तरह का कैरेक्टर देखना तुम्हारे लिए भी जरूरी है। तुम्हारा वह मास्टर साहव किस घटना-चक्र मे फँसकर कैसे ब्लैक प्रिंस वन गया, उसका रहस्य जानने की तुम्हे इच्छा नही होती क्या ? हम आमतौर से बुरे आदमी के सुधरने की ही कहानी जानते है। जैसे, रामायण मे है कि रत्नाकर दस्यु किस तरह ऋषि वाल्मीकि हो गया, राजपुत्र सिद्धार्थ किस तरह बुद्धदेव हो गया। चोर आगे चलकर साधु हो गया है, यह तो हम वहुत देख चुके हैं। मगर साधु चोर हो जाये वैसी घटना बहुत ही कम दीखती है। इसलिए चलो, चलकर इसे भी देख लो।"

मैंने ने कहा, "मगर यही ब्लैक प्रिंस अगर मेरे मास्टर साहब निकले तो वह मुझे मुह कैसे दिखाएँगे और मैं ही उन्हे अपना मुह कैसे दिखाऊँगा ? '

विजय ने कहा, "अगर उसे मुँह दिखाने मे शर्म लगे तो वात ही अलग है। मगर मान लो,,वह अगर लज्जित नही तो हुआ ? क्या ऐसी हालन मे भी तुम्हे शर्म लगेगी ?"

मैंने कहा, "फिर चलो, मेरे जाने से तुम्हे अगर सुविधा हो तो मैं चलने को तैयार हूँ। स्वार्थ तो मेरा ही है। हो सकता है, मेरी भतीजी का हार भी मिल जाये।"

विजय ने कहा, "तुम्हारी भतीजी का हार अगर चोरी नही जाता तो यह मामला ही शायद यहा तक न वढता।"

"दर असल भतीजी के हार की उतनी चिन्ता नही थी, जितनी कि सुनीति के वारे मे थी।"

"ओह, वह जो तुम्हारी भतीजी की मास्टरनी है ?"

"हा, हम उसी के कारण हम ज्यादा परेशान है।"

"इतनी परेशानी क्यो है, यह बात मेरी समझ मे नही आती है।'

मैंने कहा, "क्योकि वह गरीव वाप की लडकी है। मेरी भतीजी को पढाती है और बदले मे वह हमारे घर मे रहकर अपनी लिखाई-पढाई कर रही है, खाने रहने के लिए उसे कुछ भी खच नही करना पडता है और उस पर तनख्वाह भी मिलती हैं। इसके अलावा यह भी तो कहा जा सकता है कि उसी के कारण ही मेरी भतीजी का हार खो गया। वह सोचती है, इस चोरी के लिए घूम फिरकर वही ज़िम्मेदार है।"

विजय ने कहा, "ठीक है, तुम उससे कह देना कि जैसे भी होगा, मैं हार खोज दूँगा या चोर को माल सहित पकड़वा कर ही छोड़ूगा।

विजय से यह सूचना पाकर मैं जब घर लौटने लगा तो काफी देर हो चुकी थी। देखा, सभी खाना खाने बैठ चुके है। मैं भी जल्दी-जल्दी तैयार होकर सबके साथ खाना खाने बैठ गया। भैया भी वही थे।

भाभी जी ने पूछा, "क्या हुआ देवर जी, आज भी तुमने इतनी देर लगा दी ? लगता है, ऑफिस मे काम बढ गया है।"

मैंने कहा, "नही आज मैं विजय के ऑफिस से आ रहा हूँ। अब असली कल्प्रिट पकड मे आ जायेगा, लगता है, अब हार मिल जायेगा।"

मेरी भतीजी वही बैठी हुई खाना खा रही थी। वह भी खुशियो से झूम उठी।

'मिल जायेगा, चाचा जी ?" उसने कहा।

भाभी जी ने पूछा, "सचमुच ही मिल जायेगा ?"

भैया ने खाना खाते-खाते सिर ऊपर की ओर किया और कहा, "किस चीज के बारे मे बातें हो रही हैं ? क्या मिल जायेगा ?'

भाभी जी ने भैया को टोका, "तुम चुप रहो, तुम्हे जिस चीज की याद नही रहती है, उसके बारे मे बडबड क्यो करते हो ?"

उसके बाद मेरी ओर देखती हुई बोली, "इतने दिनो के बाद हार का पता कैसे चला, देवर जी ?'

मैंने भाभी जी से खोलकर बातें कही, उन्हे बताया कि पाक स्ट्रीट के फ्लैट मे कौन रहता है, कि लोग उसे ब्लैक प्रिंस क्यो कहते ह, कि उसका कारोबार क्या है, कि वह पहले क्या करता था। यह भी बताया कि जब मैं छोटा था, वे मुझे पढाया करते थे और एक दिन अचानक लापता हो गये। मैंने कुछ कहना बाकी नही रखा।

उसके बाद मेरे मास्टर साहब के सम्बन्ध मे बहुत देर तक बाते चलती रही। सभी छुटपन से सम्बन्धित बाते थी। मास्टर साहब मुझे क्या-क्या उपदेश देते थे, वे उपदेश बाद मे मेरे लिए कितने उपयोगी सिद्ध हुए, लेकिन फिर ? वही आदमी क्यो इस तरह का हो गया।

भाभी जी ने कहा, "यह वही आदमी है, इसका पता तुम्हे कैसे चला ? यह कोई दूसरा आदमी भी तो हो सकता है।"

मैंने कहा, "सारी बात विजय के पुलिस-केस-हिस्ट्री खाते मे दर्ज है। उन बातो से मेरे मास्टर की सारी बाते मिलती-जुलती है।"

बात करते-करते खाने का दौर समाप्त हो चुका था, भैया और वोथि कब मेज़ से उठ चुके थे, हमे इसका ध्यान भी नही रहा। समझ नही सका कि कितनी रात बीत चुकी है। जब ध्यान आया तो घडी की ओर देखने पर पता चला कि रात के ग्यारह बज रहे हैं।

भाभी जी उठ कर खडी हुई और बोली, "जाओ सुनीति, तुम यहा क्यो बैठी हुई हो ? जाकर सो रहो।"

इसके बाद सुनीति उठकर चली गयी, भाभी जी भी उठकर अपने कमरे मे चली गयी। मैं भी अपने कमरे के अन्दर चला गया और बिस्तर पर अपने आपको निढाल छोड दिया।

[अठारह]

तब भी मुझे मालूम नही था कि कल कितना अधिक विस्मय मेरी प्रतीक्षा मे खडा रहेगा। जीवन जीने के लिए है या जीवन के लिए ही आदमी जीता है या जीने-मरने के परे की एक अभूतपूर्व अनास्वादित-पूर्व उपलब्धि के लिए जीवन-धारण करना पडता है, यह बात आज भी मेरी समझ मे नही आती है। सौ पैसे का एक रुपया होता है—यह जानना ही उपलब्धि नही है। परन्तु रुपये-पैसे से परे, सभी की दृष्टि-सीमा के बाहर, जीवन का एक जो दूसरा स्वतन्त्र अस्तित्व है, उसी को ही जानने का नाम सभवत वास्तविक उपलब्धि है।

नही तो इसकी कल्पना मैने उस घटना के एक क्षण पहले भी क्या कभी की थी कि उस दिन मुझे उतने बडे सत्य के सामने खडा होना होगा ?

अभिनय करना कितना कठिन होता है इसका अहसास मुझे पहले-पहल उसी दिन हुआ। अभिनय यदि यथाथ का विकल्प है तो उससे महान् और कोई कला नही। लेखक भी लिखते ह। लेकिन लेखन-कम कमरे के अन्दर, सर्वसाधारण की दृष्टि के परे, खिडकी-दरवाजा बन्द करके किया जाता है। कहा जा सकता है कि इसमे सकोच का कोई अवसर ही नही आता। उसके बनिस्बत और उसके ही क्या, सबके बनिस्बत आसान काम है राजनीति करना। क्योकि उसम, भीड के दरबार मे तालियो की जो गडगडाहट होती है और वोट के लोभ मे जो वादे किये जाते हैं—उनकी सचाई की परीक्षा की आशका नही रहती। और हम लोगो की पुलिस की नौकरी ? इसमे जीवन का खतरा रहने पर भी रोमाच की जो उपलब्धि होती है, वह दूसरे पेशे मे नही मिल सकती है।

पार्क स्ट्रीट मे ब्लेक प्रिस के फ्लेट मे दूसरे ही दिन जाने की बुलाहट आयेगी, इसकी मैने कल्पना नही की थी। इसीलिए जब इसी आशय' का विजय का टेलीफोन आया तो मै अवाक् हो गया।

"आज ही जाना है ?" मैंने पूछा।

विजय ने कहा, "हा, अभी तुरन्त चले आओ। थोडी देर पहले वशीलाल खबर पहुँचा गया है।"

अत अब देर नही कर सका। ऑफिस के तमाम कामो को छोड-छाडकर मैं सीधे विजय के दफ्तर मे पहुँचा। पहले से ही सारा बन्दो-बस्त हो चुका था। पुलिस को गाडी के बदले हमने टेक्सी ली। उसके बाद हम कुछ मिनटो मे ही ब्लेक प्रिंस के फ्लैट मे पहुँच गये।

जब हम फ्लैट के अन्दर पहुँचे तो उसकी सजावट देखकर जैसे भौचक रह गये। विलास और ऐश्वर्य की ऐसी प्रचुरता भी हो सकती है। विजय इसके पहले भी इस फ्लेट मे आ चुका है। लेकिन तब आराम के इतने-इतने उपकरण वहा नही थे। समूचे फ्लैट का अन्दरूनी हिस्सा प्लास्टिक से ढँका हुआ हे। प्लास्टिक की उस चादर की ही कीमत लाखो रुपये होगी। सब देखकर मैं सोचने लगा, हम लोग कहाँ चले आये! यह हिन्दुस्तान है या स्विटजरलैंड ?

वशीलाल हमे चुपचाप अन्दर ले गया और पीछे के एक स्टोर रूम मे विठा दिया।

विजय ने पूछा, "फ्लेट मे और कोई नौकर-चाकर नही है ?"

वशीलाल ने कहा, "हे, मगर मैंने चालाकी से उन्हे काम सौपकर बाहर भेज दिया हे। रात मे वे काफी देर से लौटेंगे।"

"और तुम्हारा साहब ?"

"साहब को लौटने मे अभी दो-तीन घटे की देर है। कल सुबह के हवाई जहाज से साहब बैङ्काक जाने वाला है। साहब सबेरे पाच बजे घर से बाहर निकलेगा।"

"अगर कोई यहा अचानक आ जाये तो ?"

वशीलाल ने कहा, मैं फालतू आदमी को अन्दर ही नही आने दूँगा। कौन काम का आदमी है और कौन फालतू है, मने इन कई दिनो के दरमियान यह सब जान लिया है। इसके अलावा साहब चूकि कल सबेरे पाँच बजे ही निकल जायेंगे, इसलिए आज कोई नही आयेगा।"

"झगड़ू हर रोज आता है ?"

"हाँ, हर रोज। मगर वह रात बारह बजे के बाद आता है। रात बारह के बाद ही झगड़ू के साथ कभी-कभी और भी दो-चार आदमी आते हैं।"

"और वैरागी ? वेरागी सामन्त ?"

"वह भी कभी-कभी आता है। सभी के चले जाने के बाद वह सोने के एक हार के बारे मे साहब को ताकीद करता रहता है ?"

"तुम्हारा साहब क्या उत्तर देता है ?"

"साहब उसे डाँटने लगता है। साहब कहता है, वह सभी को महीने महीने खाने का खच क्यो देता है ? काम करता है तो खाने का खच देता है, नही करता हे तो भी देता हे। उसके बाद साहब कहता है तुम्हे पुलिस के बडे बाबू के प्रति अगर इतनी ही ममता है तो उसी से खाने का खच लिया करो, फिर तुम मेरे पास क्यो आते हो ? यह सब कहने पर वैरागी को चुप हो जाना पडता है। वह माथा झुकाकर यहाँ से चला जाता है।"

हम बहुत ही आहिस्ता-आहिस्ता बातचीत कर रहे थे ताकि उसकी भनक किसी भी बाहरी आदमी के कान मे नही पहुँचे।

वशीलाल ने कहा, "आप लोग कुछ खाइएगा, हुजूर ? आप लोगो को इस कमरे मे बहुत देर तक रहना है। अगर जरूरत समझ तो बताइए, मैं इस तख्त पर दो तकिये रख जाता हूँ, आप लोग लेट जाइए। मैं दरवाजे को खटखटाऊँ तो उठ जाइएगा। साहब घर आयेगा तो उसकी आवाज सुनकर आप लागो को पता चल जायेगा। साहब जब तब घर पर रहता है, चिल्लाता रहता है, वह खामोश बेठकर रहने वाला आदमी नही है।"

वशीलाल ने हमे जिस कमरे के अन्दर लाकर रखा था, वह स्टोर रूम ही है। भडार घर ही है, मगर नमक-तेल-मसाले का भडार घर नही, ह्विस्की और सोडे की बोतलो का भडार घर। इतनी-इतनी ह्विस्की और सोडे की बोतलें भी किसी के स्टोर रूम मे रह सकती हैं, बिना देखे इसकी कल्पना करना मुश्किल हे। चारो तरफ आँख दौडाते हुए मुझे अपने मास्टर साहब के उस समय के कमरे की याद आ गयी। तब मास्टर साहब के पास एक ही कमरा था। सोने, बैठने, रसोई बनाने का आदि सारे काम वे उसी कमरे मे करते थे।

मैं अकसर उनसे कहता था, "यहाँ इस तरह रहने मे आपका तकलीफ नही होती है, मास्टर साहब ?"

मास्टर साहब हँसते हुए कहते थे, "आदमी के लिए ज्यादा आराम ठीक नही होता है, उसमे आदमी अपनी आदमियत खा देता है '

तब हममे हिम्मत नही थी कि मास्टर साहब की बातो का विरोध करें। वे जो कुछ कहते थे, मैं उस पर विश्वास कर लिया करता था।

मास्टर साहब का खादी का पहनावा, ब्रह्मचय-पालन और साधु प्रकृति मुझे प्रभावित तो जरूर करते थे, परन्तु मन ही मन मैं तकलीफ महसूस करता था। मास्टर साहब की कठोर साधना हालांकि मेरे मन को तकलीफ पहुँचाती थी, लेकिन मास्टर साहब उस ओर ध्यान ही नही देते थे।

मास्टर साहब कहते थे, "जहाँ आराम दीखता है, विलासिता दीखती है, समझ लो वहा धोखेबाजी है।"

मास्टर साहब और भी बातें बताते थे, "यह जान लो कि आराम और विलासिता से जीवन को मुक्ति प्राप्त नही हो सकती है। आदमी के जीवन की सार्थकता भोग नही, त्याग है "

मास्टर साहब के मुह से इसी तरह की बहुत-सी बातें सुना करता था। मैं उनकी बातो को समझने की कोशिश करता था मगर उन दिनो मैं कच्ची उम्र का था और उनकी बातें मेरे दिमाग म समाती नही थी। मैं बस इतना ही समझ पाता था कि उन्होंने ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाधी जैसे महापुरुषो के आदर्श को ही मनुष्य-जीवन के आदश के रूप मे स्वीकारने का सिद्धान्त बना लिया है।

कच्ची उम्र मे जो चीज़ अच्छी लगती है और उम्र बढ जाने पर जो चीज़ अच्छी लगती है—इन दोनो की अच्छाइयो म काफी अन्तर रहता है। ज्यादा उम्र म जो चीज अच्छी लगे, उस पर हमेशा विश्वास नही करना चाहिए। उसकी परीक्षा कर लेने के बाद ही उस पर विश्वास करना चाहिए। मगर कच्ची उम्र मे जो चीज़ अच्छी लगती है, वही खालिस होती है। क्योकि उसमे किसी तरह की खोट नही रहती है।

उन दिनो मास्टर साहब मुझे इसलिए अच्छे लगते थे कि उनम किसी तरह की कोई खोट नही थी। आमतौर से उस उम्र मे लडके लिखाई-पढाई के मामले मे मन मे एक तरह का डर पाले रहते हैं। मगर मुझम वह डर नही था। न होने का कारण यही था कि मास्टर साहब ने उस डर को मेरे मन से दूर भगा दिया था।

याद है, मास्टर साहब ने एक दिन मुझसे कहा था, "आदमी को

जीने के लिए एक ही जीवन मिलता है, उस जीवन को लेकर व्यथ का खिलवाड नही करना चाहिए। उस जीवन को बहुत ही यत्न, परिश्रम और निष्ठा से यथासम्भव साथक बनाना चाहिए "

मैंने पूछा था, "जीवन को किस तरह साथक बनाया जाये ?"

मास्टर साहब ने कहा था, "तो फिर सुनो, मैं अपनी बात बताता हूँ।"

यह कहकर उन्होने एक दिन अपनी जिन्दगी की कहानी का एक अध्याय सुनाया था। मास्टर साहब के बचपन मे ही उनके माता-पिता का देहान्त हो चुका था। कहा जा सकता है कि दूसरे के घर पर ही उनका लालन-पालन हुआ था। वे जिन लोगो के घर मे रहते थे, वे बहुत बडे आदमी थे। गाँव के बडे आदमी जिस किस्म के होते हैं, वे भी उसी तरह के थे। परिवार के सदस्यो के अतिरिक्त वहाँ कुछ ऐसे भी लोग थे जो उन्ही के घर पर रहते थे, खाते थे और खर्राटे भरते रहते थे। बहुत ही लम्बा-चौडा चडीमडप था जहाँ वे सोते थे और खाना खाने के लिए अन्दर जाते थे। एक तो दूसरे के घर का मामला, उस पर माथे का भार। इसके अलावा उस समय उनकी उम्र बहुत ही कम थी। भूख लगती तो किसी से कह नही पाते थे। कहने से अगर डाँट पडने लगे तो! इसीलिए पट की भूख को पेट के अन्दर ही दबाकर रखते थे।

एक दिन पढते-पढते थकावट के मारे कब नीद मे खो गये, उन्हे याद ही नही रहा। जब आँखें खुली तो काफी रात हो चुकी थी। फड-फडा कर उठ बैठे। देखा, आस-पास जितने आदमी थे, सभी नीद मे खोये हैं और खर्राटे भर रहे हैं। चैतन्य चाचा बगल मे ही सोये हुए थे।

वे धीमी आवाज़ मे उन्हे ही पुकारने लगे, "चैतन्य चाचा, ओ चैतन्य चाचा।"

चेतन्य चाचा खाने मे जितने बहादुर है। सोने मे भी उतने ही बहादुर।

कालीपद ने पुन पुकारा, "चैतन्य चाचा, मुझे भूख लगी है, चेतन्य चाचा।"

मगर उतनी रात मे कौन किसकी बात सुनता है! सभी दिन भर जी तोड मेहनत करते हैं। खेत-खलिहान मे उन्हे बेहद परिश्रम करना पडता है। खटते खटते उनकी साँसें अटकने लगती है। सवेरे घर की शक्ल देखने लायक थी। कोई पुआल काटता था, कोई गुहाल साफ

करता था और कोई ढोरो को मैदान मे चराने के लिए ले जाता था। सभी को खाने के लिए वासी भात मिलता था।

"तू कौन है जी ?"

एक दिन सभी पगत मे खाने बैठे थे। वासी भात और बैगन का भुर्ता। जल्दी-जल्दी खाना खाकर सभी अपने अपने काम पर चले जायगे। बडे मालिक आँगन से होकर कचहरी की तरफ जा रहे थे। उस वक्त उनकी निगाह कालीपद डे पर पडी। पूछा, "तू कौन है रे ?"

बडे मालिक सभी को पहचानते थे। बडे ही दवग आदमी थे। पक्के हिसावी। एक रुपये का अगर बीस पाई ब्याज हो तो तिरासी रुपये का कितना ब्याज होगा—इसका हिसाब लगाने मे उन्हे देर नही लगती थी। एक तो दो हजार बीघा जमीन के मालिक, उसके बाद साढे चार सौ बीघ के एक फाम को इजारे पर लिए हुए थे। साथ ही साथ तिजारत भी करते थे। बडा आदमी कहने से जो बात समझ मे आती है, उनके साथ विलकुल सही उतरती थी। हर पैसा उनके लिए छाती की पसली के जैसा था। कही कुछ वरवादी हो रही हो तो यह उनके वरदाश्त के बाहर की बात थी।

उनकी इस छोटी-सी बात से ही कालीपद का कलेजा डर से दहल उठा।

वह कुछ जवाब दे, इसके पहले ही बडे मालिक ने दुबारा पूछा, "क्यों, जवाब क्यो नही दे रहा है ? तू किसका बेटा है ? यहा खाना क्यो खा रहा है ?"

चैतन्य चाचा भी खाना खा रहे थे।

वे बोले, "वह कालीपद है, बडे मालिक। जात का कायस्थ है, नाम है कालीपद डे।"

"कालीपद ! कालीपद डे ! वह यहा खाना क्यो खा रहा है ?"

चैतन्य चाचा ने कहा, "वह इसी मकान मे रहता है, मालिक। मँझली बहू उसे यहाँ ले आयी हैं। वह मँझली बहू के देश का रहने वाला है।"

"मँझली बहू के देश का आदमी है !"

इस बात ने बडे मालिक को हैरत मे डाल दिया। बिना कहे-सुने किसी को घर पर ले आयी है !

यह बात सभवत चैतन्य चाचा की समझ मे आ गयी। इसीलिए

इस बात को नायब सरकार ने जवाब मे कहा, "मँझली बहू के मायके में उनका बाप मुहर्रिर का काम करता था। जब मुहर्रिर की मौत हो गयी तो मँझली बहू ने सोचा, वे लोग का नाबालिग लड़का कहाँ रहेगा, और यही सोचकर इसे यहाँ ले आयी। अब इतना जरूर है मालिक, कि कालीपद लिखने-पढ़ने मे बहुत तेज है, परीक्षा मे वह अव्वल आया है।"

बडे मालिक इस बात की जानकारी से ही गुस्से मे आ गये थे, इसके बाद जब उन्होंने सुना कि वह परीक्षा मे अव्वल आया है तो उनके क्रोध की मात्रा दुगुनी हो गयी। "अव्वल आकर मुझे स्वर्ग मे दीया दिखाएगा ?" उन्होंने कहा।

यह कहकर वे बाहर की ओर चले गये।

शाम के वक्त बडे मालिक ने अपनी पत्नी को बुलवाया। गृहिणी के आते ही बोले, "इस घर की मालकिन कौन है—तुम या तुम्हारी मँझली बहू ?"

गृहिणी बोली, "क्यो ? यह बात क्यो पूछ रहे हो ?"

बडे मालिक ने कहा, "अगर मालकिन तुम हो तो फिर मँझली बहू को अपने मायके के मुहर्रिर के लडके को यहाँ लाने का अधिकार किसने दिया ?"

गृहिणी बोली, "अरे, मँझली बहू के मायके के मुहर्रिर का लडका इस घर मे रहता है ! मुझे कुछ भी मालूम नही है।"

बडे मालिक ने कहा, "तुम्हे कैसे मालूम होगा ? तुम इस घर की कोई नही हो। तुम भी कोई नही हो और मैं भी इस घर का कोई नही हूँ। यह बात अभी से गाँठ मे बाँध लो।"

इससे ज्यादा कहने का वक्त बडे मालिक के पास नही है। इसीलिए इससे ज्यादा कुछ बोले बिना वे वहाँ से चले गये।

उसके बाद से कालीपद ने अपने आपको समेट लिया। क्योंकि खुद को ओट मे रखने म ही उसका कल्याण है। नैतन्य काका उसके मन की बात समझते थे। बीच बीच मे वे पूछ बैठते, "आज त खाया है या नही रे, कालीपद ?"

वह कहता, "मैं खा चुका हूँ।"

"कब खाया ? आज मैंने तुझे खाने की पंगत मे नही

कालीपद कहता, "मैं आप लोगो से पहले ही खाना खा चुका हूँ, चाचा जी।"

"ओह, यह बात है!"

मामूली दो कौर भात खाने मे जब उसकी इतनी फजीहत होती है तो न खाना ही बेहतर है। मगर भोजन चाहे जितनी ही साधारण चीज हो, जब भूख का प्रश्न खडा होता है तो वही साधारण चीज असाधारण के रूप मे बदल जाती है। तब लगता है, दुनिया की एकमात्र आवश्यक वस्तु सभवत भोजन ही है। उस वक्त एक अदद अमरूद या आवला ही रसना के लिए अमृत बन जाता है। उस घटना के बाद से बडे मालिक के घर के अन्दर खाना खाने के लिए जाते मे उसे लज्जा और भय का अहसास होने लगा। कही बडे मालिक की निगाह फिर उस पर न पड जाये।

कालीपद अब घर के अन्दर खाने नही जाता था, इस पर किसी ने ध्यान नही दिया। स्कूल जाने के रास्ते मे वह किसी के पेड से दो अमरूद या दो आँवले तोडकर खा लेता था या फिर उसका कोई दोस्त अगर उसे एक कटोरा फरुही और थोडा-सा गुड दयाकर खाने को दे देता था तो वह वही खाकर रह लेता था।

इसी तरह उसने दो-चार दिन बिताये। मगर तीन दिनो की भूख की कुलबुलाहट से वह अपने पेट मे अजीब ही तरह की बेचैनी महसूस करने लगा। एक ओर स्कूल की पढाई और दूसरी ओर भूख की तीव्र ज्वाला—दोनो ने मिलकर जैसे लडाई छेड दी। उसके बाद कब वह नीद मे खो गया, पता नही। जब उसकी आँखें खुली तो काफी रात हो चुकी थी। देखा, सभी आदमी एक कतार मे सोये हुए हैं और खर्राटे भर रहे है। लगा, अगर अभी उसे खाना न मिला तो निश्चय ही वह मौत के मुँह में समा जायेगा।

उसकी बगल मे ही चैतन्य चाचा गहरी नीद मे सोये हुए थे। कालीपद पुकारने लगा, "चैतन्य चाचा, ओ चैतन्य चाचा!"

उसके बाद उसे खटका, वह चैतन्य चाचा को क्यो पुकार रहा है? चैतन्य चाचा के पास है ही क्या जो उसे खाने के लिए दे देंगे? इसके बाद तो चैतन्य चाचा को सारी बातें मालूम हो जायेंगी। फिर वे पूछ बैठेंगे उसने खाना क्यो नही खाया है, क्यो वह बिना खाये ही खाना खाने का ढोंग रचता है?

अन्तत उसने चैतन्य चाचा को पुकारना छोड दिया। बिस्तर छोडकर आहिस्ता-आहिस्ता घर के बाहर आया। पूरे ग्राम मे सन्नाटे का आलम है। चडीमडप के सामने ही एक विशाल घना केंदु का पेड है। उसके ऊपर चांद का टुकडा चमक रहा है। एकाएक उसे दुर्गा दीदी की याद आ गयी।

दुर्गा दीदी जब इस घर की वहू बनकर आने लगी थी तो कालीपद रो पडा था। उसने दुर्गा दीदी से पूछा था कि वह कब वापस आ रही हैं।

दुर्गा दीदी ही तब कालीपद की एकमात्र शुभाकाक्षिणी मित्र थी। दुर्गा दीदी के मायके मे उसने जितने वर्ष व्यतीत किये है, वे सुख और आनन्द से भरे-पुरे थे। उसी दुर्गा दीदी का व्याह दूर रसूलपुर गाँव मे हो गया। दूल्हा आया, भोज-भात मे वहुत से आदमी शरीक हुए। वरातियो की चहल-पहल से पूरा मकान मुखरित हो उठा। रसूलपुर के वडे मालिक दूल्हे को लेकर आये। रसूलपुर के बडे मालिक को देखकर कालीपद उस दिन भी डर गया था।

मौका मिलने पर कालीपद एक वार दुर्गा दीदी के पास गया था। उस समय दुर्गा दीदी दुलहन के वेश मे सजी हुई घर के एक कोने मे चुपचाप बैठी थी।

दुर्गा दीदी ने कालीपद को देखकर पूछा, "क्या वात है ? तुमने खाना खा लिया ?"

कालीपद ने कहा, "हाँ।'

"पेट भरा ?"

कालीपद ने उस बात का जवाब न देकर दूसरी ही बात छेड दी, "दुर्गा दीदी, तुम्हारे ससुर की तो बडी-वडी मूछे है।"

दुर्गा दीदी ने कहा, "चुप रहो। यह बात नही कहनी चाहिए, कुछ भी हो, आखिर बडे-बुजुर्ग ही है न।" कालीपद ने कहा, "तुम्हारे ससुर तुम्हारे लिए बडे-बुजुग हो सकते है, मेरे लिए वे कौन हैं ? तुम तो अपनी ससुराल चली जाओगी और मैं यही रहूँगा।"

दुर्गा दीदी ने कहा, "चाहे जो हो, बडे-बुजुर्गों की निंदा नही सुननी चाहिए।"

उस दिन बस इतनी ही बाते हुई थी। उसके बाद कोई घर के अन्दर चला आया था और फिर विशेष बाते करने का मौका

मिला था। दूसरे ही दिन दुर्गा दीदी बरातियो के साथ अपनी ससुराल चली गयी।

उनके जाने के बाद ही कालीपद के जीवन मे एक बहुत बडी दुघटना घटी। कई दिनो के बाद दुर्गा दीदी जब रसूलपुर से मायके आयी तो कालीपद की इच्छा नही हुई कि उनसे भेट करने जाये। मगर दुर्गा दीदी उसे भूल नही सकी थी। खबर मिलने पर उसके पास बुलावा भेजा था। उस वक्त कालीपद बिना किनारी का कपडा पहने था।

दुर्गा दीदी के सामने जब वह खडा हुआ तो अपने आपको सयत नही रख सका। पिता की मृत्यु के बाद कालीपद आसुओ के जिस बाँध को रोके हुए था, दुर्गा दीदी को सामने पाते ही वह बाँध टूट गया। दुर्गा दीदी अपने आँचल से उसके आँसू पोछने लगी।

"मत रो, रोने से चाचा जी लौटकर नही आयगे। तेरे लिए चिन्ता की कौन-सी बात है, मैं तो हूँ ही।" दुर्गा दीदी ने कहा था।

'मैं तो हूँ ही', यही बात कालीपद के लिए काल साबित हुई। दुर्गा दीदी ने उस दिन क्यो कहा—'मैं तो हूँ ही ?' मगर कालीपद को ही तब कहाँ मालूम था कि दुर्गा दीदी भी उसके पिता की ही तरह ज्यादा दिनो तक इस दुनिया मे रुकने वाली नही है। कालीपद किसी एक अप्रसिद्ध गाँव के एक गृहस्थ के घर के एक बिलकुल मामूली मुहर्रिर का लडका था। बिना सोचे-समझे उस लडके को इतना बडा आश्वासन दे देना उसी के हक मे अच्छा नही हुआ, वरना उस दिन वह पितृविहीन बालक पिता की मृत्यु के बाद अपने अन्तर मे उतनी आशाएँ तो न पालता और न ही जब सारी आशाओ पर पानी फिर गया तो उस तरह निराश ही होता।

[उन्नीस]

मैं मास्टर साहब से कहानी सुनते-सुनते तल्लीनता मे डूब जाता था। वे ज्यो ही चुप होते, मैं कहता, "उसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ मास्टर साहब ?"

मास्टर साहब का जीवन विचित्रताओ से भरा था। एक मामूली गाँव के एक छोटे जमीदार के मुहर्रिर के वे लडके थे और बचपन से ही दूसरे के माथे का बोझ बन गये। वे कहते, "जीने के लिए आदमी को एक ही जीवन मिलता है, उस जीवन से खिलवाड नही करना चाहिए। उस जीवन को घोर परिश्रम और निष्ठा से साथक बनाना चाहिए।"

मैं कहता, "उसके बाद क्या हुआ, यही बताइए। आपके पिताजी की जब मृत्यु हो गयी तो आपने क्या किया ?'

मास्टर साहब कहते, "उसके बाद दुर्गा दीदी ने एक दिन आदमी भेजा और मुझे अपनी ससुराल मे बुलवा लिया। कितना विशाल था वह मकान ! उस मकान मे अनगिनत आदमी रहते थे, मकान-मालिक के खेत-खलिहान का कोई अन्त नही था। उन अनगिनत लोगो के बीच मुझे भी ठौर मिल गया। मैं रसूलपुर मे रहने लगा और दुर्गा दीदी मेरी पढाई का खर्च चलाती रही।"

कहानी को बीच मे ही रोक कर मास्टर साहब कहते, "अब कहानी नही, लिखना पढना शुरू करो।"

मैं कहता, "नही मास्टर साहब, उसके बाद क्या हुआ, यही बताइए। आपकी नीद आधी रात मे खुल गयी, आप भूख की कुलबुलाहट से बेचैनी महसूस करने लगे उसके बाद ?"

मास्टर साहब कहते, "उसके बाद ? उसके बाद मुझे लगा, बिना खाये इस तरह कब तक चलेगा ? सोचा, आत्म-सम्मान बडा है या

जीवन ? दुर्गा दीदी मुझे रसूलपुर ले आयी है। वह इस घर की मँझली बहू है। दुर्गा दीदी के पिताजी ने उस ज़माने मे दस हजार रुपया खच कर अपनी लडकी की शादी रसूलपुर के वडे जमीदार के घर मे की थी। रसूलपुर की जमीदारी कोई साधारण जमीदारी नही है और उस घर की वह होना भी कोई साधारण वात नही है। दुर्गा दीदी जव ससुराल जाने लगी तो उसकी बदन पर गहनो की चमक-दमक देखकर हम दग रह गये थे।

तब मुझे मालूम नही था कि रसूलपुर की जमीदारी के वडे मालिक जितने वडे आदमी है, उतने दवग भी। किसी को वताये विना ससुराल मे एक अनाथ लडके को लाकर रखना, इतना वडा अपराध हो सकता है, यह बात न तो मैं जानता था और न ही दुर्गा दीदी।

यही वजह है कि उस दिन वडे मालिक ने गृहिणी को बुलाकर कहा था, "इस घर की मालकिन कौन है ? तुम या मँझली वहू ?"

गृहिणी ने अवाक् होकर कहा था, "क्यो ? इस तरह की वात क्यो कह रहे हो ?'

वडे मालिक ने कहा था, "अगर मालकिन तुम हो तो फिर मँझली वहू को किसने अधिकार दिया कि वह अपने मायके के मुहर्रिर के लडके को यहाँ लाकर रखे ?

"वापरे, यह वात ! मँझली वहू के मायके के मुहर्रिर का लडका यहा है ? कहाँ, मुझे क्हा कुछ मालूम है ?"

वडे मालिक ने कहा था, "तुम्हे पता चले तो कैसे ? असल म तुम इस घर की कोई नही हो। न तो तुम हो और न मै ही। यह बात आज से गाठ मे बाँधकर रख लो।"

इतना कहकर वडे मालिक ने अपने क्त्तव्य से छुटकारा पा लिया था। मगर मामला वही दबक्र नही रह गया। जब मामला खत्म हुआ तो बहुत कुछ हो चुका था। सास उस समय वहा एक क्षण भी रुकी नही। सीधे मँझली बहू के क्मरे की तरफ गयी।

सास क्मरे के अन्दर नही गयी। कमरे के दरवाजे के सामने खडी होकर पुकारा, "मँझली वहू ! ओ मँझली बहू।"

सास की पुकार सुनते ही मँझली वहू का माथा चकराने लगा। कमरे से बाहर आकर बोली, "मुझे पुकार रही हैं, माँ ?"

"हाँ। तुमने क्या सोच लिया है ? क्या समझ लिया है ?"

मँझली वहू जैसे आकाश से नीचे गिर पडी हो ।

बोली, "आप क्या कह रही हैं, मैं समझ नही पा रही हूँ ।"

"समझोगी कैसे ? समझोगी तो सास-ससुर के अधीन रहना पडेगा। वात अगर समझ मे आ ही जायेगी तो ससुर के लोहू-पसीने की कमाई का सदुपयोग क्यो करोगी ? अच्छा यह तो बताओ, यह क्या तुम्हारे वाप की बनवायी हुई धर्मशाला है ?"

मँझली बहू बोली, "मेरे बाबू जी गरीब आदमी है, अपनी सामथ्य भर उन्होने दिया है। आप लोग मुझे अपने घर की बहू बनाकर ले आये हैं, इसके लिए वे आपका एहसान मानते है ।"

सास बोली, "तुम्हारा बाप गरीब है और तुम्हारे ससुर अमीर— यही न ! लगता है, इसीलिए तुमने लगर खोल दिया है । शिशिर कहा है, यह तो बताओ ।"

मँझली बहू ने कहा, "वे सुनामगज की हाट करने गये हैं। आज वहाँ हाट लगती है न ।"

साम बोली, "ठीक है, वह आ जाये तो उसी से पूछकर देखती हूँ, वह क्या कहता है ! मैंने खुद गृहस्थी का सारा इन्तजाम किया, लडके को पाला-पोसा, अब शायद देखने को मिलेगा कि वही लडका पराया हो गया है ।"

उस बीच बडा लडका मा की आवाज सुनकर वहा पहुँच चुका था।

उसने कहा, "क्या वात है, माँ ? तुम किससे क्या कह रही थी ?"

जेठ पर नजर पडते ही मँझली बहू चुपचाप कमरे के अन्दर चली गयी ।

मा बोली, "देखो भैया, अगर हम दोनो बूढा बूढी को इस तरह वेइज्जत करना है, तो तुम लोग हमे घर पर रख ही क्यो रहे हो ? क्यो ? इससे तो अच्छा यही है कि हमे काशी भेज दो, हम वहा शान्ति से रहेगे, तुम लोग यहा क्या कर रहे हो, यह देखने का हमे मौका नही मिलेगा ।"

"एक छोटी सी घटना ने कैसे इतना विकराल रूप धारण कर लिया, यह बात मुझे भी मालूम नही थी। लगता है, मेरे जीवन के लिए इस घटना की जरूरत थी, वरना मेरी समझ मे यह बात आती ही नही कि पैसा किसे कहते हैं, किसे पैसे का अभिशाप कहा जाता है।

जब मुझे इस बात की जानकारी हुई तब काफी देर हो चुकी थी। एक तरह से सब कुछ समाप्त हो चुका था।"

उन दिनों चैतन्य चाचा ही एक ऐसा व्यक्ति था जो कालीपद का शुभैषी था। चैतन्य चाचा ही दुर्गा दीदी की बात पर उसे रसूलपुर ले आया था।

चैतन्य चाचा ने कहा था, "मँझली बहू ने मुझसे कहा है कि तुम्हें लेता आऊँ। तुम वहीं रहकर स्कूल में पढ़ोगे, तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं।"

कालीपद ने कहा था, "दुर्गा दीदी अब तक मुझे भूली नहीं है?"

चैतन्य चाचा ने कहा था, "भूल जाती तो मुझे रसूलपुर से यहाँ क्यों भेजती?"

रसूलपुर आने के बाद दुर्गा दीदी से कभी मुलाकात नहीं हुई। कोई बाहरी आदमी घर की बहुओं से मिल सके, वैसा नियम नहीं था। दुर्गा दीदी जब से रसूलपुर के जमींदार की बहू बनकर वहाँ आयी, उसके बाद किसी बाहरी आदमी को उसका चेहरा देखने का मौका नहीं मिला।

दुर्गा दीदी की नौकरानी चैतन्य चाचा के पास आकर खबर पूछ जाती थी। वह पूछती कि कालीपद की लिखाई-पढ़ाई किस तरह चल रही है, उसे कोई असुविधा होती है या नहीं।

चैतन्य चाचा कहते, "जानते हो, आज मँझली बहू ने तुम्हारे बारे में पूछताछ की थी।"

"आपने क्या कहा?"

"मैंने बता दिया कि तुम अच्छी तरह से हो। इस बार तुम परीक्षा में जो अव्वल आये हो, इसकी भी सूचना दे दी।"

"दुर्गा दीदी और क्या-क्या पूछ रही थी?"

"यह कि तुम्हें कुछ असुविधा तो नहीं होती है।"

"आपने क्या कहा?"

"मैंने खबर भेज दी कि कुछ भी असुविधा नहीं हो रही है। मैं जब तक हूँ, कालीपद को कुछ भी असुविधा नहीं होगी। मैं कालीपद की सुविधा-असुविधा का ध्यान रखे रहता हूँ।"

जब तक वह रसूलपुर में था दुर्गा दीदी से कभी भेंट-मुलाकात नहीं हुई मगर एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध सूत्र हमेशा बना रहता था। मगर ईश्वर

को शायद मजूर नही था कि यह सम्बन्ध-सूत्र कायम रहे, या उसे इतना स्नेह मिलता रहे।

"इसीलिए चैतन्य चाचा जब कहते कि तुम कई दिनो से कुछ भी नही खा रहे हो, तुम्हे क्या हुआ है, तो में उनसे कहता कि मैंने खाना खा लिया है।

"चैतन्य चाचा जमीदार के दफ्तर के काम मे इतना व्यस्त रहते थे कि उन्हे हमेशा यह देखने का मौका नही मिलता था कि मैंने खाना खाया है या नही। मगर मेरा मन कहता था, यह अपराध है। घर के बडे मालिक की अनुमति के बिना मुझे अपनी ससुराल मे रखना दुर्गा दीदी के लिए अपराध है। वे कुछ दिन कितनी तकलीफ के दौर से गुजरे थे, इसकी तुम लोग कल्पना भी नही कर सकते। तुम लोग मा-बाप के लाड-दुलार के बीच पालित-पोषित हो रहे हो, भोजन कहाँ से आना है, कहा से स्कूल की फीस के पैसे आते हे, इन बातो पर सोचने की जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर नही है। मगर मेरी बात ही अलग थी। मैं पराये के सिर का बोझ बनकर जी रहा था, पराये की मोह-ममता के बल पल रहा था। एक तरह से बचपन मे मुझे भीख पर ही निर्भर रहना पडा है।

"उस दिन जब भूख की कुलबुलाहट से मेरी नीद उचट गयी तो मैंने चेतन्य चाचा को एक दो बार पुकारा। मगर चेतन्य चाचा को दिन भर भैसे की तरह खटना पडता था, इसलिए रात मे उन्हे होश नही रहता था। यही कारण है कि मेरे पुकारने पर उन्होने कोई उत्तर नहीं दिया।

मगर मैं उस समय क्या खाऊ? भूख के लिए मैं किससे कहने जाऊँ?

मेरी समझ मे कुछ भी नही आ रहा था। चडीमडप के पीछे बेल का एक दरख्त था। सोचा, वहाँ जाने से हो सकता है, एकाध बेल जमीन पर गिरा हुआ मिल जाये। चडीमडप से उतरकर मैं रास्ते पर आया। घर के जाने का रास्ता यही से है। चारो तरफ अँधेरा बिछा था। फिर भी रात का चूकि आखिरी पहर था इसलिए अँधेरा बहुत कुछ हल्का हो गया था। सोचा था, सभी की निगाहो से बचता हुआ अन्दर चला जाऊँगा। बाहरी मकान के पूरब म एक तालाब है। रास्ता उसी तालाब के किनारे से होकर घर के भीतर की ओर जाता है। थोडी

दूर गया हूँगा कि एकाएक लगा, घर के भीतरी भाग में कुछ लोग जगे हुए है। उनकी बातचीत के टुकड़े कानों में आने लगे। सोचा, रात के आखिरी पहर में कौन बातचीत कर रहे हैं और उनकी बातचीत का मुद्दा क्या है ! मुझे डर लगने लगा। अगर कोई मुझे इस हालत में देख ले !

मैं आगे जाना चाहता था, पर पीछे की तरफ लौट आया। उस बात के रहस्य को जानने के खयाल से मैं तालाब के दूसरे किनारे पर जाकर खड़ा हो गया। वहाँ रहूँगा तो मुझ पर किसी की भी निगाह नही पड़ेगी। मगर तब मुझे एक भी शब्द सुनायी नही पड़ा। मैं वहाँ बहुत देर तक खड़ा रहा। देखा, आकाश का पूरबी हिस्सा तनिक साफ हो गया है। मगर वहाँ कब तक खड़ा रहूँ ? कब तक इस तरह इन्तजार करता रहूँ ? मुझे लगा, कुछ आदमी इसी ओर आ रहे है।

मैं ज्यों ही घुमावदार रास्ते से चंडीमंडप के पास आया, वहाँ लोगों की एक बहुत बड़ी भीड़ देखी। जो लोग अन्दर सोते हैं, सबके सब जाग गये हैं।

मुझे बड़ा ही अचम्भा लगा। इतनी भोर में, जब कि रात भी ठीक से समाप्त नही हुई है, सभी बिस्तर छोड़कर क्या उठ गये है ? ऐसा तो कभी होता नही था।

मुझ पर नज़र पड़ते ही चैतन्य चाचा आगे बढ़ आये। उनके चेहरे पर गंभीरता की छाप थी।

चैतन्य चाचा ज्यों ही सामने आये, मैंने पूछा, "क्या बात है, चैतन्य चाचा, इतनी भोर मे आप लोग क्यों जग गये है ?"

उस बात का उत्तर दिये बिना चैतन्य चाचा ने कहा, "अब तक तुम कहाँ थे ?"

"मुझे नींद नही आ रही थी।" मैंने बताया।

चैतन्य चाचा ने कहा, "तुम्हें कुछ पता चला ?"

मैंने अवाक् होकर कहा, "क्यों ? क्या हुआ ? मुझे किस बात का पता चलेगा ?"

चैतन्य चाचा ने कहा, "मँझली बहू ने अपने गले में फंदा लटका लिया है।"

यह बात सुनते ही मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरे पैरों के तले से ज़मीन खिसक गयी है। स्वार्थी आदमी की तरह जो बात पहले-पहल

मेरे ध्यान मे आयी, वह यह कि अब मैं बिलकुल निराश्रय हो गया। दुर्गा दीदी क्यो गले मे फदा लगाकर मौत के मुँह मे समा गयी, उसे कौन-सा दुख था, यह सब मुझे याद नहीं आया। याद आयी तो सिफ अपनी ही बात। मैं तब उतना स्वार्थी था।'

[बीस]

यह सब एक जमाने पहले की बात है। मास्टर साहब पढाते पढाते मुझे यह सब सुनाया करते थे। एक तरह से वे दूसरे की दया पर पले बढे है। मास्टर साहब को अपने तमाम अनुभवो से यह बात समझ मे आयी थी कि जीवन मे अर्थ का कोई मूल्य नही है। रसूलपुर के जमींदार के पास पैसा या ऐश्वर्य की कोई कमी नही थी। फिर वहाँ की मँझली बहू को इस तरह की दुर्बुद्धि ने अपना शिकार क्यो बनाया? उसे किस बात का दुख था?

आज इतने दिनो के बाद उसी मास्टर साहब के घर मे छिपकर मैं सोच रहा था, उसी आदमी का जीवन-भर का अनुभव-लब्ध दर्शन क्यो इस तरह बदल गया? पार्तुगीज जहाज के कैप्टन कॉस्टलो साहब के कारण?

लेकिन वैसा क्या होगा? कीमती ह्विस्की पिलाकर क्या मास्टर साहब जैसे आदमी के मन को, मास्टर साहब जैसे आदमी के जीवन-दर्शन को इस तरह बदला जा सकता है?

हो सकता है, इस युग का—इस टेकनॉलॉजी के युग का—यही अभिशाप हो। वरना जो लोग आदर्श की खातिर एक दिन सब कुछ त्यागकर सन्यासी हो गये थे, युग के बदलते ही वे घोर विलासी क्यो हो गये? इसके लिए क्या टेकनॉलॉजी—कलपुर्जे—जिम्मेदार है? पता नही, सचाई क्या है!

हम कॉलेज मे राधाकुमुद मुखर्जी की पुस्तक पढ चुके है। समाज-शास्त्र के इतने बडे विद्वान दुनिया मे हैं ही कितने! उन्होंने ही कहा है—जीवन जब एक ही है तो उसकी समस्या का समाधान भी एक ही होना चाहिए। कितने ही विद्वानो ने उसके समाधान की खोज की है। कोई कहता है, विज्ञान से ही आदमी को मुक्ति मिल सकती है और कोई कहता है, अध्यात्म शक्ति से ही आदमी को मुक्ति मिलेगी।

मास्टर साहब ने ही पढ़ाते वक्त मुझसे कहा था, "देखो, प्लेटो से शुरू कर मध्य युग तक सभी यही कहते थे—मनुष्य की मुक्ति का एक ही पथ है और वह है अध्यात्मवाद। लेकिन १९१४ ई० के प्रथम विश्व युद्ध से ही स्पेशलाइजेशन की चर्चा छिड़ गयी। उसी समय से एक-एक आदमी एक-एक चीज का विशेषज्ञ होने लगा। नाना प्रकार के मत चल पड़े, नाना प्रकार के पथ। लेकिन हमारे देश के राधाकुमुद बाबू ने ही पहले पहल कहा ज्ञान के पथ का इस तरह विभाजन करना ठीक नहीं। जिस तरह जीवन एक है उसी तरह उसका समाधान भी एक ही तरीके से होना चाहिए चाहे उस जीवन की समस्या हजारों की संख्या में क्यों न हो।"

इतना कुछ जानने-सुनने के बावजूद मास्टर साहब की ऐसी परिणति क्यों हुई? सब कुछ जानते रहने पर भी मास्टर साहब ने कुछ न जानने जैसा काम क्यों किया?

फिर क्या इसके पीछे कोई दूसरा ही कारण है? अगर है, तो वह कारण क्या है?

एक दिन की एक छोटी-सी घटना मुझे अब तक याद है। कह सकते हैं कि इस परिवेश में मुझे उस घटना के एक नये अर्थ का पता चला।

घटना यों बिलकुल मामूली ही है। लेकिन अलग-अलग परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त तुच्छ घटना भी अलग-अलग व्याख्या लेकर उपस्थित होती है। यह घटना भी उसी कोटि की है।

याद है, उस दिन रविवार था। रविवार को मास्टर साहब मुझे पढ़ाने नहीं आते थे। मगर उस रविवार को क्लास में दिया गया सबक हल करना अनिवार्य हो उठा था। इसीलिए सोचा, मास्टर साहब के पास जाकर उस पाठ विशेष को समझ आऊँ।

तब कुल मिलाकर शाम हो चुकी थी। मास्टर साहब जिस मकान में रहते थे, उसकी बगल की दो फीट तंग गली में काफी अन्दर जाने के बाद उनके कमरे के अन्दर जाया जा सकता था। वह बड़ा ही एकांत स्थान था। मास्टर साहब जैसे आदमी के लिए बहुत ही आदर्श और शान्त परिवेश। बाहर के रास्ते का किसी भी तरह का शोर-गुल, हो-हल्ला वहाँ नहीं पहुँचता था।

घर के सामने, गली क मुहाने पर जाते ही देखा, एक गाडी खडी है। गाडी काफी कीमती थी और उसके अन्दर ड्राइवर बैठा हुआ था।

सोचने लगा, मास्टर साहब के पास गाडी लेकर कौन आ सकता है। मन मे थोडी-बहुत उत्सुकता लिए गली के अन्दर जाकर जब मास्टर साहब के कमरे के पास पहुँचा, उस कमरे मे जनाना आवाज़ सुनकर मैं ठिठककर खडा हो गया। मास्टर साहब के कमरे के भीतर से जनाना आवाज़ क्यो आ रही है ? उनके कमरे मे मैंने कभी किसी औरत को जाते नही देखा था।

फिर क्या देश से मास्टर साहब की माँ यहाँ आयी है ? लेकिन अगर वह माँ है तो फिर यह गाडी किसकी हो सकती है ? मास्टर साहब की माँ क्या गाडी से आयी है ? बिना किसी सकोच के मै उस ओर थोडा और आगे बढ गया।

सहसा मेरे कानो मे एक औरत की आवाज आयी, "अपने त्याग की बात रहने दो। इन अध्यात्मवाद की बातो को गोली मारो। यह सब बात किताबो मे लिखी रहती है, यह सब बात किताबो म ही पढने मे अच्छी लगती है। जीवन के लिए इन बातो की कोई कीमत नही हुआ करती।"

उत्तर म मास्टर साहब के गले की आवाज सुनायी पडी, "नही लीला, ऐसी बातें मत कहो। तुम अक्लमन्द हो, मैं इतने दिनो स तुम्हे पढाने आ रहा हूँ। तुम्हारे मुँह मे ऐसी बाते शोभा नही देती। मैंने अपने छुटपन की दुर्गा दीदी की बातें तुम्हे बतायी है। उतने बडे आदमी की बहू गले मे फदा लगाकर क्या मर गयी थी, यह बात भी तुम्हे बता चुका हूँ। अपनी पूरी जिन्दगी की बात तुम्हे बता चुका हूँ। मैंने अपनी जिन्दगी मे देखा है, ऐसा ही सब कुछ नही होता। इतना कुछ सुनने के बाद भी तुम यह बात कह रही हो ? फिर मैं यही समझूँगा कि मेरी सारी शिक्षा व्यर्थ है। समझूगा कि इतने दिनो तक महापुरुष जो कुछ लिख गये हैं, सबका सब असत्य है।"

जनाना गले की आवाज़ आयी, "अपने महापुरुषो की वाणी अपने पास ही रखे रहो। महापुरुष क्या गृहस्थ रहे है ? उन्होने चूंकि दुनियादारी नहीं की थी, इसलिए वे पैसे का मर्म समझ नही सके। महापुरुषो को भले ही पैसे की जरूरत न हो, मगर मुझे है। और अगर पैसे की चाह न करूँ तो फिर बी० ए० की परीक्षा मैंने फर्स्ट क्लास मे क्या

पास की ? सन्यासी होने के लिए लिखना-पढना कोई जरूरी नही है।"

मास्टर साहब के गले की आवाज आयी, "तुम यही कहना चाहती हो कि पैसा कमाने के लिए ही आदमी लिखता पढता है ? पैसा कमाने के लिए ही आदमी बी० ए०, एम० ए० पास करता है ?"

जनाना गले की आवाज आयी, "अगर पैसा कमाना नही चाहता है तो फिर क्यो पढता है ?"

मास्टर साहब ने कहा, "अगर तुम ऐसा ही सोचती हो तो फिर मेरे पास क्यो आती हो ?"

जनाना गले की आवाज सुनायी पडी, "मै तुम्हारी भलाई के लिए "

"अपना भला-बुरा मैं खुद समझता हूँ।"

"अगर तुममे इसकी समझ होती तो ढाई सौ रुपये की यह स्कूल-मास्टरी करने मे तुम्हें शर्म महसूस होती। तुम्हारे इस घर मे मुझे अगर वहू बनकर आना पडे तो इसमे बेहतर है कि मैं मर जाऊँ। मैं तुम्हारे सामने ही कह रही हूँ, आज से तुमसे मेरा कोई रिश्ता नही रहा। मैं चल रही हूँ।"

यह कहकर महिला सम्भवत जाने वाली ही थी, मगर पीछे से मास्टर साहब ने पुकारा, "सुनो लीला, मत जाओ, सुनो।"

महिला जाते-जाते रुक गयी। "कहो, क्या कहना है ?" उसने कहा।

मास्टर साहब के गले की आवाज कानो मे आयी, "फिर क्या तुम्हारे विचार मे चरित्र की तुलना मे पैसे की ही ज्यादा कीमत हे ? आदमियत के बनिस्वत "

महिला ने टोका, "तुम्हारे जैसे ढाई सौ रुपये के मास्टर के मुँह से 'चरित्र', 'आदमियत' जैसे बडे-बडे शब्द शोभा नही पाते ह। अब से मेरे सामने इन शब्दो का उच्चारण मत करना।"

उस दिन गली के मुहाने पर खडे होकर, छिपकर म सारी बाते सुन रहा था और सुनते सुनते विस्मय, भय और सकोच से थरथर काप रहा था।

अचानक किसी महिला का अपनी बगल से जाते देखकर मेरे ध्यान मे आया कि छिपकर उन लोगो की बातें सुनकर मने अपराध किया

है। मगर तब कोई उपाय नही था। महिला मेरी बगल से होती हुई गाडी के अन्दर बैठ गयी और गाडी उसी क्षण रवाना हो गयी।

मैं वहा कुछ देर तक हतप्रभ जैसा खडा रहा। क्या करूँ, समझ मे नही आया। उसके बाद मन म भय लिए आहिस्ता-आहिस्ता मास्टर साहब के कमरे की ओर बढ गया। सोचा, पता नही, जाकर क्या देखूगा। कमरे के अन्दर जाते ही देखा, मास्टर साहब अपनी हथेलियो मे मुह छिपाये रो रहे है। मै वहा कुछ देर तक चुपचाप खडा रहा। उसके बाद भात जलने की गध नाक मे आते ही देखा, स्टोव पर देगची मे भात खदक रहा है।

मैं अब चुप नही रह सका। चिल्लाकर कहा, "मास्टर साहब, आपका भात जल रहा है।"

मास्टर साहब ने सिर उठाकर मुझे देखा और सन्न रह गये। बोले, "क्या बात है ? तुम ? तुम कब आये ? बात क्या है ? इस वक्त आने का कारण ?"

मैने कहा, "आपका भात जल रहा है, मास्टर साहब।"

उस समय मास्टर साहब का ध्यान उस ओर था ही नही। चेहरे पर निर्विकार स्वाभाविकता तैर रही थी। आहिस्ता से वे स्टोव के पास गय और उसकी चाबी खोल दी। स्टोव की आग उसी क्षण बुझ गयी। उसके बाद स्टोव से देगची को उतार कर कमरे के एक किनारे रख दिया।

मैंन कहा, "भात तो जल चुका है, मास्टर साहब, आप क्या खाइएगा ?"

मास्टर साहब ने अपने चेहरे पर मुस्कराहट लाने की व्यर्थ चेष्टा करते हुए कहा, "जलने दो, मैं पावरोटी खा लूगा। मगर तुम इस वक्त एकाएक यहाँ किस लिए आये हो ?"

मैंने कहा, "मैं आपसे एक हिसाब समझने के खयाल से आया था, मगर रहने दीजिए, बाद मे समझ लूगा।'

और मैं वहाँ खडा नही रहा। उस दिन वहा स भागकर चले आन के बाद ही शान्ति मिली थी।

घटना साधारण थी। साधारण को भी कुछ-न-कुछ महत्त्व दिया ही जाता है। परन्तु उस समय मैं जिस उम्र का था, मेरे लिए परेशान होना ज़रूरी नही था। आज इतने साला के बाद, उन्ही मास्टर साहब

की बदली हुई इस स्थिति मे, अतीत की वह घटना एक नया अर्थ लेकर मेरे सामने उपस्थित हुई। उस दिन जो महिला मास्टर साहब के यहा आयी थी, वह कौन थी ? किस वजह से मास्टर साहब से उसका विरोध चल रहा था ? उस दिन महिला के चले जाने के बाद मास्टर साहब क्यो हथेलिया से मुख ढँक कर रो दिये थे ?

यह प्रश्न उस समय मेरे मन म जगा था तो जरूर मगर, अपना कोई स्थायी चिह्न नही छोड सका था। अभी इतने दिना के बाद, ब्लैक प्रिंस के स्टोर रूम के अँधेरे म बैठे रहने पर, वे बाते नये सिरे से याद आने लगी। लगा, इतने दिना के बाद उन्ही मास्टर साहब के सामने कैसे खडा रहूँगा ? आमने-सामने खडे होकर कैसे बात चीत करूँगा ? कैसे पूछूगा कि उस दिन आप कैसे थे और आज कैसे हो गये ? खादी के उस लिबास को छोडकर आपने कैसे विलासी जीवन को वरण कर लिया ? इसका रहस्य क्या ह ?

आश्चय जनक है ईश्वर के द्वारा बनाया गया यह आदमी, और आश्चर्यजनक है मनुष्य के मन का इतिहास और भूगोल ! लगता ह, इसका कोई आदि-अन्त नही, है कोई कारण-अकारण नही है, देश-काल आदि का कोई भेद नही है। शायद यह भी इतिहास-भूगोल की तरह ही अनादि-अव्यय-अनन्त है। अनादि है उसका उत्पत्ति-शिखर और अनन्त है उसका सचरण-क्षेत्र।

फिर भी मेरे मन मे सदेह था कि विजय ने जिस ब्लैक प्रिंस के बारे मे बताया है, वह मेरा मास्टर साहब नही है। हो सकता है, यह कोई दूसरा ही आदमी हो। यह भी हो सकता है कि विजय ने मुझे जो कहानी सुनायी है, वह वैसे एक आदमी की कहानी है जिससे मैं पूणतया अपरिचित हूँ।

विजय मेरी बगल मे चुपचाप बैठा था। "पता नही, यहाँ कब तक चुपचाप बैठे रहना पडेगा।" उसने फुसफुसा कर कहा।

मैंने कहा, "दरवाजे की दरार म उस कमरे मे झाक कर देखो।"

विजय ने कहा, "देख चुका हूँ। इसके अलावा मैं यहाँ पहली बार नही आया हूँ, इसके पहले भी एक-दो बार सच वारन्ट लेकर आ चुका हूँ। सबसे पहले उस वक्त आया था जब कमलाबाला दासी नामक एक नाबालिग लडकी का उद्धार करना था। उसके बाद ही हमारे मैं ब्लैक प्रिंस के सम्बन्ध मे एक सीक्रेट फाइल तैयार की गयी"

अचानक वशीलाल दरवाजे का ताला खोलकर अन्दर आया।

पूछा, "हुजूर आप लोगों को कोई असुविधा तो नही हो रही है ?"

विजय ने कहा, "नही। असुविधा कुछ न कुछ होगी हो लेकिन किया ही क्या जा सकता है ? पहले यह तो बताओ कि तुम्हारा साहब कब आयेगा ?"

वशीलाल ने कहा, "आज जल्दी ही आने की बात है, कल सवेरे साहब को हवाई जहाज से बैंकॉक जाना है।"

एक क्षण चुप रहने के बाद उसने कहा, "दो कप चाय बना लाऊँ? आप लोग चाय पीजिएगा ?"

विजय ने कहा, "नही। तुम बाहर जाओ, हम दरवाजे की दरार से हर चीज पर निगरानी रख रहे हैं।"

वशीलाल अब वहाँ रुका नही रहा। कमरे से बाहर जाकर उसने दरवाजे पर फिर से ताला लगा दिया। हो सकता है, थोडी देर बाद ही सदर दरवाज़े की कॉलिंग बेल बजने लगे।

उसके बाद साहब कमरे के अन्दर आयेगा।

विजय और मैं दरवाज़े की दरार से बाहर की ओर निर्निमेष ताक रहे थे।

मैं यह देखना चाहता था कि यह ब्लेक प्रिंस मेरे मास्टर साहब हैं या नही ?

हम बहुत देर तक प्रतीक्षा मे बैठे रहे। बैठे बैठे ऊब आने लगी। देखा, वशीलाल घर का काम-काज कर रहा है। कपडे के एक फटे टुकडे से आलमारी, कुरसी, मेज़ और तमाम असबाबो को साफ़ कर रहा है। उसका ध्यान दरवाज़े की तरफ है। शायद यह सब उसका रोजमर्रा का काम काज है।

ठीक उसी समय सदर दरवाजे की घंटी घनघनाने लगी। हम चौक पडे। अब हमे काम करना है। ब्लैक प्रिंस के कमरे के अन्दर आते ही वशीलाल उसके बदन से कोट उतारेगा, फिर पूछेगा कि साहब ड्रिंक करेगा या नही या चाय पियेगा या नही या साहब को किन किन चीजो की ज़रूरत है।

उसके बाद वैरागी सामन्त निश्चित समय पर कमरे के अन्दर आयेगा। साथ मे चार अदद सोने की चूडियां ले आयेगा। सोने की चार अदद चूडियाँ पहले से ही वैरागी सामन्त को दे दी गयी हैं। वह

उनकी क़ीमत बतायेगा। साहब उस क़ीमत को घटाकर आधी रकम देने को तैयार होगा और चूडियाँ खरीद लेगा। वैरागी उतनी ही रक़म लेने के लिए तैयार हो जायेगा। और ज्यो ही ब्लैक प्रिंस आयरन सेफ खोलकर वैरागी नामन्न को रुपया देने लगेगा, वशीलाल हमारे कमरे का ताला खोल देगा, विजय कमरे से निकलकर ब्लैक प्रिंस पर कूद पडेगा। उसके बाद ब्लैक प्रिंस अगर अडचन डाले तो विजय के पास रिवॉल्वर है ही।

यह सब योजना विजय ने पहले ही बना ली थी। क्योकि ब्लैक प्रिंस को यदि हम माल के साथ नही पकडते है तो फिर वह पकड मे आयेगा ही नही। उसके बाद ब्लैक प्रिंस की आयरन सेफ की तलाशी लेने मे, हो सकता है मेरी भतीजी का हार मिल जाये।

कॉलिंग बेल बजते ही वशीलाल दरवाजा खोलने चला गया।

हमने सोचा था, साहब आ रहा है। मगर साहब नही था। वशीलाल किसी से बातचीत करने लगा। हमे जनाना आवाज सुनायी पडी।

वशीलाल ने किसी महिला के आने की बात हमे नही बतायी थी। जनाना आवाज सुनायी दी, "साहब है ?"

"नही।" वशीलाल ने कहा।

जनाना आवाज सुनायी दी, "वे कलकत्ते मे ही है ?"

"हा।" वशीलाल ने कहा।

"मैं एक बार साहब से मिलना चाहती हूँ।"

"साहब अभी घर पर नही है।"

"साहब कब आयेगे ?"

वशीलाल इस समय किसी बाहरी आदमी को अन्दर नही आने देना चाहता था। इसीलिए उसने कहा, वे कब आयेंगे, इसका कोई ठीक नही है।"

जनाना आवाज सुनायी दी, "मैं थोडी देर तक अन्दर बैठना चाहती हूँ। बहुत दूर से आ रही हूँ। साहब से मिलना जरूरी है।"

वशीलाल असमजस मे पड गया।

"आप कौन है ? आपका शुभ नाम ?"

"मेरा नाम कमलावाला है," जनाना आवाज सुनायी दी, "कमला बाला दासी। तुम यहाँ नये-नये आये हो, इसीलिए मुझे नही

हो। मैं इस घर मे बहुत दिनो तक वास कर चुकी हूँ। यहाँ महावीर काम करता था। वह मुझे पहचानता था। वह कहाँ है ?"

वशीलाल ने कहा, "मैं नया आदमी हूँ। महावीर को मैं नही जानता।"

जनाना आवाज सुनायी दी, "मैं बहुत दूर से आ रही हूँ। बिना बैठे यहाँ से नही जाऊँगी। थोडी देर सुस्ता लू, फिर अगर मुलाकात नही होगी तो लौट जाऊँगी।"

विजय अब तक उत्सुकता के साथ उन लोगो की बातें सुन रहा था। उसके बाद कानो को और भी सतर्क रखकर मेरी ओर देखता हुआ बुदबुदाया, "अरे, वही कमलावाला दासी है, जिसके बारे मे तुम्हे बता चुका हूँ। वह इतने दिनो के बाद ब्लैक प्रिंस के पास आयी है। बात क्या है ?"

मेरी समझ म कुछ भी नही आ रहा था। पूछा, कौन-सी कमला वाला दासी ?'

विजय ने फुसफुसा कर मेरे काना मे कहा, "याद नही है ? मैंने तुम्हे बताया था, कुछ साल पहले एक लडकी अपने मा बाप के साथ कलकत्ता देखने आयी थी और स्यालदह के मोड से लापता हो गयी थी। उसके लिए मैं सच वारन्ट लेकर यहाँ आया था। वही कमलावाला दासी इतने दिना के बाद यहाँ कैसे आयी ? आश्चर्य है।"

महिला घर के अन्दर आना चाहती थी और वशीलाल उसे अन्दर आने नही देना चाहता था। आखिर मे महिला बोली, "देखो, तुम नये आदमी हो, इसीलिए मुझे कमरे के अन्दर नही जाने देते हो। मैं तुम्हारे साहब की पत्नी हूँ। तुम्हारे साहब मेरे पति है यकीन करो, तुम्हारे साहब मेरे पति है।"

वशीलाल को इच्छा नही थी कि महिला घर के भीतर आये। मगर यह सुनकर कि वह साहब की पत्नी है, असमजस मे पड गया। वह महिला की ओर घूरने लगा।

"आप उनकी पत्नी ह तो फिर आपकी माग म सिंदूर कहाँ है ?" वशीलाल ने पूछा।

महिला बोली, "पहले सिंदूर लगाती थी, लेकिन अब नही। अब तुम्हारे साहब से मेरा बनाव नही हो रहा है। एक आवश्यक काम रहने के कारण ही मैं तुम्हारे साहब से मिलने आयी हूँ। मुलाकात होने

के बाद चली जाऊँगी। साहब अगर बिगडेगे तो मैं कहूँगी कि तुम मुझे घर के भीतर नही आने देना चाहते थे, मैं जबरन आयी हूँ और इसमे तुम्हारी कोई गलती नही है।"

अब सभवत वशीलाल को उसके प्रति थोडी दया हुई। लेकिन वह कुछ आपत्ति करे इसके पहले ही महिला परदा हटाकर कमरे के अन्दर चली आयी थी।

और उसी क्षण मुझे लगा, मैं आसमान से जमीन पर गिर गया हूँ। मैं विस्मय से चिहुँक कर चिल्लाना चाहता था। लेकिन किसी तरह अपने आपको सँभाल लिया।

विजय ने मेरी भाव-भगिमा देखकर धीमी आवाज मे कहा, "क्या हुआ? तुम इस तरह चिहुँक क्यो उठे? क्या हुआ?"

मैंने कहा, "वह हमारी सुनीति ही है।"

"सुनीति! वही सुनीति जो तुम्हारी भतीजी को पढाती है?"

"हाँ, सुनीति मित्र। उसी के ही बारे मे तुम्हे बताया था। वह यहाँ क्यो आयी है, समझ मे नही आता।"

विजय ने कहा, "लेकिन वह तो बता रही है कि उसका नाम कमलाबाला दासी है। मैं उसकी फोटो देख ही चुका हूँ—इसका चेहरा ठीक उसी से मिलता-जुलता है।

मैंने कहा, "कमलाबाला दासी सुनीति मित्र कैसे हो सकती है? यह हो ही नही सकता। एक आदमी के दो नाम हो सकते है? सुनीति तो मेरी भतीजी को पढाती है। वह यहाँ क्यो आयी है? तुम्हारे ब्लैक प्रिंस से उसका क्या रिश्ता है?"

विजय ने पूछा, "तुमने अपने घर मे कुछ चर्चा की थी? आज जो तुम्हे यहा आना था, उसके बारे मे किसी को कुछ बताया था?"

"हाँ, चर्चा तो की थी।"

"फिर उसी वक्त उसे पता चल गया है।"

मैं मन ही मन सोचने लगा, यह क्या हुआ। सुनीति अभी क्यो आयी है? ब्लैक प्रिंस स्मगलर, शराबी और गुडा का सरदार है—उससे सुनीति का किस तरह का रिश्ता हो सकता है? और जिसे अभी तक मैं सुनीति मित्र के नाम से जानता था, वह कमला कहकर अपना परिचय क्यो दे रही है?'

मेरा दिमाग चकराने लगा।

विजय ने कहा, "अभी कुछ मत बोलो, चुपचाप रहो, महिला जिस तरह बैठी है, बैठी रहे, देखें, ब्लैक प्रिंस कमरे में आकर क्या करता है।"

"और अगर बैरागी सामन्त इसी वक्त कमरे के अन्दर चला आये तो ? वह भी इसी वक्त आने वाला है।" मैंने कहा।

विजय बोला, "नहीं, यह बात उसे पहले ही बता दी है। अगर कोई दूसरा आदमी कमरे के अन्दर रहेगा तो वह नहीं आयेगा।"

मैं तब दरवाजे की दरार में सुनीति की ओर अपलक निहार रहा था। उसे यहाँ, ब्लैक प्रिंस के कमरे में, इस हालत में देखूंगा, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। अगर वह कमला है, जैसा कि विजय कह रहा है, तो फिर उसे सुनीति मित्र के नाम से इतने दिनों से क्यों पहचानता आ रहा हूँ ? उसे सुनीति मित्र समझकर ही हमने अपने घर में आश्रय दिया है। फिर क्या यह समझना होगा कि एक ही आदमी के दो नाम हैं? हमारे घर में अपने आप को निर्विघ्न छिपाने के लिए ही क्या अपने असली नाम को छिपा रखा है ? मैं सोचते-सोचते हैरान हो गया, मुझ जैसे पुलिस के आदमी की आँख में धूल झोंककर अपना नाम सुनीति बताकर उसने हमारे परिवार के बीच निरापद आश्रय की व्यवस्था कर ली। फिर उसका कालीघाट के मन्दिर में पूजा करना, व्रत के उपलक्ष्य पर निराहार रहना, वीथि को पढ़ाना और उसे आत्मीय से भी बढ़कर परमात्मीय बना लेना---यह सब क्या अभिनय है ?

मैं उसी तरह उस अँधेरी कोठरी में अपने आप को छिपाकर सुनीति के द्वारा कही हुई कहानी के शुरू से अन्त तक का सिंहावलोकन करने लगा। कॉलेज का मेरा वह प्रिंसिपल मित्र, जिसने सुनीति का पता मुझे दिया था, सुनीति के अभिनय से छला गया था ? लेकिन यह छलना क्या ? फिर क्या सुनीति यह नहीं जानती थी कि एक अस्वाभाविक परिवेश में पड़कर उसकी तमाम छलनाएँ बाहरी खोल की तरह किसी न किसी दिन खिसक कर नीचे गिर जायेंगी ? वह क्या यह समझ नहीं सकी थी कि यथार्थ से प्रतियोगिता करने से, चाहे वह कितना ही निर्दोष अभिनय क्यों न हो, उसे एक दिन पराजय स्वीकार करनी ही होगी।

मुझे बेचैनी का अहसास होने लगा। और न केवल बेचैनी, बल्कि मुझे लगा कि सुनीति ने मुझे पराजित कर दिया है। पराजय की ग्लानि से मैं लज्जा महसूस करने लगा। मैं किस तरह अपनी भाभी, भैया

और भतीजी को अपना चेहरा दिखाऊँगा ? उनसे कैसे कहूँगा कि इन तमाम चीजों के पीछे सुनीति मिश्र का हाथ है ?

देखा, सुनीति एक सोफे पर चुपचाप बैठी है। उसकी आखो मे धुंधलापन तैर रहा है। अनुमान लगाया, उत्तेजना के कारण उसका मन चचल है। लेकिन बाहर से उत्तेजना नाममात्र की भी नही दीखती है। वह कठपुतली की तरह प्रतीक्षा कर रही है।

वशीलाल ने उसके पास जाकर कहा, "आप कब तक इन्तजार करती रहेगी ? आज शायद साहब को आने मे देर हो।"

सुनीति ने कहा, "मैं साहब से मुलाकात किये बगैर यहा से नहीं जाऊँगी, चाहे वे कितनी ही रात मे क्यो न आयें।'

वशीलाल ने कहा, "मगर साहब आपको यहाँ बैठी देखकर मुझ पर रज होगे। कहेगे, मैंने आपको अन्दर घुसने क्यो दिया ?"

सुनीति ने बडी ही करुण आवाज मे कहा, "मुझे उनसे बहुत जरूरी काम है।"

वशीलाल ने कहा, "जरूरी काम है तो किसी दूसरे दिन आइएगा। अभी इतनी रात मे आपको यहाँ देखकर साहब का दिमाग गरम हो जायेगा।"

सुनीति दीवाल-घडी की ओर देखती हुई बोली, "अभी ज्यादा रात नही हुई है। और कुछ देर तक इन्तजार करूँगी।"

वशीलाल अब क्या कहे ? शायद सुनीति के प्रति थोडी दया हुई। बैठे, महिला को थोडी देर तक बैठने दो। कुछ देर इन्तजार करूँगा और फिर उसे जबदस्ती यहा से बाहर निकाल दूँगा।

विजय ने मेरे कान से अपना मुँह सटाकर फुसफुसाते हुए कहा, "ब्लैक प्रिंस आ जाये, फिर क्या होता है, यही देखना है। उसके बाद पता चल जायेगा कि यह सुनीति ही कमला है या नही। इसी के कारण हम इतने दिनो से हैरान हैं, इसी की हम इतनी तलाश करते आ रहे हैं और यह ऐसी है कि अपना नाम गलत बताकर तुम्हारे घर मे छिपी हुई है। वेरी स्ट्रेंज। सचमुच बडा ही अजीब काड है।"

हमारे जीवन मे एकाध ऐसी घटना या दुघटना घटित होती है जो हमारे जीवन के लिए मगलदायक साबित होती है। अनेक जन्म जिस तरह मगलकारी होते है, अनेक मृत्युएँ भी उसी तरह फलदायक होती हैं। भगवान सिद्धार्थ का जन्म जिस तरह पृथ्वी के लिए मगलकारी

हुआ था, ईसा मसीह का सलीब पर चढ़ना क्या बाद मे हमारे लिए उतना ही कल्याणकारी नही हुआ था ?

विजय की बात से लगा, हम सचमुच ही एक अजीब घटना के जाल मे फँस गये हे।

ठीक उसी समय बाहर का कॉलिंग बेल बजने लगा और हम दोनो सतर्क हो गये। ब्लैक प्रिंस आ गया। अब पता नही, क्या होगा, क्या घटना घटेगी ? आवाज़ सुनकर सुनीति भी सीधी होकर बैठ गयी।

वशीलाल के दरवाजा खोलने पर साहब के बदले वैरागी सामन्त को पाया।

"साहब है ?'

वशीलाल वैरागी को पहचानता था। घटना किस तरह सजायी गयी है, यह बात भी उसे पहले से ही मालूम थी।

"अभी तक नही आये है।' वशीलाल ने फुसफुसाकर कहा।

"कमरे के अन्दर कौन है ?"

वशीलाल ने कहा, "मैं पहचानता नही। साहब से मुलाकात करने के लिए बैठी है।"

वैरागी ने धीमी आवाज मे कहा, "देखू, महिला का चेहरा कैसा है ?"

यह कहकर उसने अपना सिर अन्दर घुसेडकर एक पल आँखें दौडायी और फिर अपना सिर बाहर निकाल लिया।

बोला, "अरे, वह यहाँ इस वक्त क्या आयी है ? आने का उसे कोई दूसरा वक्त नही मिला ?"

"क्यो ? उसे तुम पहचानते हो क्या ? वह कौन है ?" वशीलाल ने पूछा।

वैरागी बोला, "पहचानूँगा क्यो नही ? साहब उसे ज्यादा दिन तक अपने पास नही रख सका था। वह साहब के घर से भाग गयी थी। समझ मे नही आता कि इतने दिनो के बाद फिर क्यो आयी है ? उसे तुम यहाँ से हटा दो, हमारे काम मे असुविधा होगी।"

यह कहकर वह बाहर के बरामदे मे कही लापता हो गया।

अब वशीलाल फिर सुनीति के पास आया और बोला, "आप कब तक बैठी रहिएगा, मेमसाहब ? लगता है, आज उन्हे आने मे बहुत देर होगी।"

"होने दो। आज मुझे साहब से किसी भी हालत म मुलाकात करनी ही है।"

बात ठीक से खत्म हो भी नही पायी थी कि बाहर कॉलिंग बेल फिर से बजने लगा। "ठगनलाल" जोरो की आवाज आयी।

वशीलाल दौडता हुआ गया और दरवाजा खोल दिया। ब्लेक प्रिंस ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। सामने सुनीति को देखकर वह चौक उठा, "ऐ, कमला तुम ! तुम क्यो आयी हो ?"

वशीलाल ने साहब के बदन से कोट उतारा, उसके बाद उसके हाथ से पोर्टफोलियो लेकर नीचे रखा। समूचा फ्लैट साहब की कर्कश आवाज़ से मुखर हो उठा।

"तुम क्यो आयी हो ?" वह बोला, "एक बार मेरे घर से रुपया चुराकर भाग गयी फिर भी तुम्हारी इच्छा पूरी नही हुई ? अब फिर किस खयाल से आयी हो ?"

उसके बाद वशीलाल की ओर देखकर चिल्लाया, "ठगनलाल !"

"हुजूर !"

"तूने उसे अन्दर क्यो आने दिया? मैने कहा था न, किसी भी अनजान आदमी को अन्दर मत आने देना !"

वशीलाल ने कहा, "मैंने उन्हे अन्दर नहीं आने दिया था, हुज़ूर, वे ज़बरन अन्दर चली आयी है।"

"जबरन का मतलब ? तेरी देह मे ताकत नही है ? एक औरत की ताकत से तूने हार मान ली ?"

वशीलाल ने कहा, "हुज़ूर उन्होने बताया कि वे आपकी मेमसाहब है ?"

साहब सुनीति की ओर आकर बोला, "तुमने क्या कहा था ? तुमसे मैंने शादी की थी ? इतने दिनो के बाद भी तुम यह बात कह रही हो ? तुम्हारी माग मे सिंदूर भरकर कितने दिन पहले मैंने मज़ाक किया था और तुम अब भी उस पर यकीन करती हो ? पता है, तुम्हारी जैसी बहुतेरी औरतो की माँग मे मैने सिंदूर भरा है ?"

"जानती हूँ।"

इतनी देर के बाद सुनीति के गले से एक छोटी सी बात निकली, "जानती हूँ।"

साहब ने कहा, "जानने के बावजूद तुम इस बात को अब तक क्या याद रखे हुए हो ?"

सुनीति ने कहा, "याद रखती ही नही। यह सब बात मैं भूल ही चुकी थी।"

"भूल चुकी थी तो भूली हुई ही रहती। जिन-जिन औरतो से मैंने शादी की थी, सभी भूल चुकी हैं। भूलकर भी ज़िन्दा हैं और उनके साथ-साथ मैं भी ज़िन्दा हूँ।"

"मैं इन बातो को भुला चुकी थी, इसका प्रमाण तुम्हे नही मिल रहा है ?"

"प्रमाण क्या है ?"

सुनीति ने कहा, "जिस दिन मैंने देखा, मुझ जैसी हजारो महिलाओ की माग मे सिंदूर भरकर तुमने उनकी जिन्दगी बरबाद कर दी है, जिस दिन देखा, तुम तस्करी के सोने का कारोबार करते हो, जाली पासपोट का कारोबार करते हो, जिस दिन देखा तुम नम्बरी शैतान हो, उसी दिन मैं यहा से भागकर चली गयी।"

साहब चिल्ला उठा, "ठगनलाल, इसे यहाँ से बाहर निकाल। अभी तुरन्त गरदन पर हाथ रखकर बाहर निकाल दे।"

"नही।"

सुनीति ने अकस्मात् गेहुँअन साँप की तरह फन काढ कर कहा, "नही, तुम इतनी आसानी से मुझे बाहर नही निकाल सकते। बाहर निकालने के पहले तुम्हे मेरी बात सुननी ही होगी।"

साहब ने कहा, "बताओ, तुम क्या कहना चाहती हो ? एक बात समझ लो, मेरे पास ज्यादा वक्त नही है, मुझे आज ढेर सारा काम करना है। जो कुछ कहना है, जल्दी बताओ।"

सुनीति ने कहा, "मैं भी तुम्हारी ही तरह जल्दबाजी मे हूं। मुझे तुरन्त घर लौटना है।"

"घर! घर का मतलब ? अभी तुम्हारी माँग मे सिंदूर दिखायी नही पड रहा है, फिर घर कैसे ? अपने जिस्म की कमाई से मकान बनवाया है ?"

सुनीति ने कहा, "स्टुपिड, रास्कॅल! चुप रहो!"

ब्लैक प्रिंस की बोलती कुछ देर तक बन्द हो गयी। उसके बाद वह आहिस्ता-आहिस्ता और भी आगे बढ़ आया।

बोला, "वाह, वाह, वरी गुड ! देख रहा हूँ, उस दिन की कमला-वाला दासी धुआँधार अंग्रेजी बोल रही है। लगता है, मेर पैसो को तुमने अच्छे कामो मे लगाया है। लिख-पढकर भले आदमी की तरह बोलना सीख लिया है।"

"तुम जैसे शैतान से भली जबान म बातें करूँ, ऐसी कुशिक्षा मैंने नही पायी है। अगर वैसी शिक्षा मिली होती तो यहाँ से भागकर मैं माँग का सिंदूर नही पोछती और न ही अपना नाम वदलकर सुनीति रखती।"

ब्लैक प्रिंस ने जोरो का एक ठहाका लगाया, 'सुनीति ! वाह-वाह, चुनने पर कोई दूसरा नाम नही मिला ? तुम्हारी अक्ल की तारीफ करनी चाहिए। देहात की लडकी के दिमाग मे इतनी बुद्धि हो सकती है, इसकी मैंने कल्पना भी नही की थी। हालाँकि झगडू तुम्हे रास्ते से पकडकर जब मेरे पास ले आया था तो तुम्हारे मुह से एक भी शब्द बाहर नही निकलता था। अब तो अंग्रेजी मे धाराप्रवाह गाली बक सकती हो। हा, यह तो बताओ, आजकल तुम किस बाबू के साथ रह रही हो ? वह कसान कौन है ?"

सुनीति ने कहा, "लगता है, तुम्ह गाली सुनने की फिर से इच्छा हो रही ह। लेकिन यह मत सोचना कि तुम्हे गाली गलौज देने से ही मेरे मन की आग शान्त हो जायगी। तुम्ह अगर पुलिस के हाथो सौप सकती तो मेरे मन की जलन थोडी बहुत शान्त हो जाती।"

"पुलिस ! तुम पुलिस की बात कर रही हो ? पुलिस को इतनी अक्ल है कि मुझे पकड ले ! मैं क्या इतना बेवकूफ हूँ ? इतना कुछ जानने के बावजूद तुम मुझे पुलिस का भय दिखा रही हो ? जब रास्ते से पकडवाकर तुम्ह इसी घर मे छिपाकर रखा था और इस घर के अन्दर तुम्हारे साथ बलात्कार किया था, विवाह के नाम पर तुम्हारी माग मे सिंदूर भरकर जब इसी कमरे मे तुम्हारे साथ बिस्तर पर सोया था, पार्क स्ट्रीट थाने से सच वारन्ट लेकर पुलिस उस समय भी आयी थी। लेकिन क्या पता चला था ? या मुझे पुलिस अरेस्ट कर सकी थी ?"

कुछ देर तक चुप रहने बाद फिर कहने लगा, "खैर, तुमसे यह सब कहने का मेरे पास वक्त नही है, अभी मुझे बहुत काम करना है। तुम चली जाओ। सवेरे मुझे बैंकॉक जाना है और जाने के पहले मुझे एक चिट्ठी लिखनी है।"

यह कहकर ब्लैक प्रिंस ने पुकारा, "ठगनलाल !"

ठगनलाल पैंट्री के अन्दर रसोई बनाने के नाम पर सब कुछ सुन रहा था और हमारी कोठरी का दरवाजा खोलने के लिए तैयार था। साहब की पुकार सुनते ही वह कमरे के अन्दर चला गया।

साहब ने कहा, "मेरा राइटिंग पैड और कलम ले आओ।'

वशीलाल ने मेज पर जैसे ही कलम और राइटिंग पैड रखा, साहब चिट्ठी लिखने लगा। दरवाजे की दरार से मैंने देखा, साहब तल्लीन होकर किसी को चिट्ठी लिख रहा है। लगा, बहुत ही मनोयोगपूर्वक चिट्ठी लिख रहा है।

चिट्ठी लिखते लिखते अचानक उसने सिर उठा कर सुनीति की ओर देखा और कहा, "तुम अब तक बैठी हुई हो? अब अपने घर चली जाओ।"

सुनीति ने कहा, "अपनी बात तुमसे जब तक कह नही लूगी, तब तक मैं घर वापस नही जाऊँगी।"

"अभी बात सुनने का वक्त मेरे पास नही है। चिट्ठी लिखकर मुझे अभी तुरन्त डाक से भेजनी है।"

सुनीति ने कहा, "तुम चिट्ठी लिखना खत्म कर लो, मैं बैठी रहूँगी। आज मेरी बात तुम्हे सुननी ही है।"

साहब ने चिट्ठी लिखते-लिखते कहा, "तुम जो कुछ कहना चाहती हो, कह डालो। तुम्हें और भी पैसे की जरूरत है और मैं पैसा न दूँ तो तुम पुलिस को सूचना भेज दोगी—यही कहना चाहती हो न?"

सुनीति ने कहा, "नही।"

साहब का चिट्ठी लिखना जारी था। बोला, "अगर पैसा नही चाहिए तो फिर तुम क्या कहना चाहती हो? अगर पुलिस से पकड़वाने की बात कहना चाहती हो तो फिर मुझे ही चाहिए था कि तुम्हे पुलिस से पकड़वा दूँ। तुम मेरा रुपया-पैसा चुराकर भागी थी, इसका सबूत मेरे पास है। लेकिन मैं, मैं ऐसा नही करूँगा, क्योंकि तुम्हारी जैसी अनेक महिलाएँ मेरे पास आयी हैं, जिन्हे बेचकर मैंने प्रॉफिट के रूप मे मोटी रकम कमायी है। इसलिए तुम्हारे चलते मेरी जो हानि हुई, उसकी पूर्ति हो चुकी है। मैं पुलिस के पास तुम्हारे खिलाफ कोई कार्रवाई नही करने जा रहा हूँ। मैं तुम्हें वचन देता हूँ।"

इस बीच साहब का चिट्ठी लिखना समाप्त हो चुका था। उसे

लिफाफे मे भर कर साहब ने गोद से चिपकाया और वशीलाल की आर बढा दिया।

बोला, "इसे आज ही रात मे पोस्ट बॉक्स मे डाल देना, जिससे कल ही इसकी डेलीवरी हा जाये। बहुत ही ज़रूरी है।"

वशीलाल ने लिफाफा लेकर अपने पास रख लिया।

अबकी कॉलिंग-बेल की आवाज़ नही बल्कि दरवाजे को कुडी की खटखटाहट सुनायी पडी।

साहब ने चिल्लाकर पूछा, "कौन है ?"

वशीलाल जल्दी-जल्दी बाहर की तरफ गया और लौटकर बोला, "वैरागी आया है, हुजूर।"

साहब को गुस्सा आ गया, "वैरागी को आने का यही वक्त मिला ? अच्छा, उसे अन्दर बुला ले।"

वैरागी का पहले ही सिखा-पढा दिया गया था। कमरे मे आते ही उसने साहब को झुककर सलाम किया।

साहब ने माथा उठाकर पूछा, "क्या है, वैरागी ? कैसे हो ? खबर क्या है ?"

वैरागी ने रोनी-रोनी आवाज़ मे कहा, "हुजूर, आपके पास माल लेकर आया हूँ।'

"माल ! मैं कोई मालिक हूँ जो मेरे पास माल ले आये हो ? झगडू को क्यो नही दे दिया ? झगडू ही तुम्हे पैसा दे देता। झगडू कहा है ? मैं तो कई बार कह चुका हूँ कि सीधे मेरे पास न आया करो। आज-कल ज़माना बहुत खराब है।"

वैरागी ने कहा, "मैं झगडू बाबू के पास गया था। वह घर पर नही मिला। यही वजह है कि आपके पास चला आया। आजकल पैसे की बहुत ही तगी चल रही है, हुजूर !"

साहब ने हाथ आगे बढाकर कहा, "देखूँ, कैसा माल ले आये हो।"

वैरागी ने अपने कुरते की जेब मे माल निकाल कर साहब की ओर बढाया। माल कागज़ मे मुडा था। साहब ने जैसे ही कागज़ खोला, उसमे से सोने की चार चूडियाँ बाहर निकली।"

साहब ने कहा, "एक बारगी चार अदद चूडियो पर हाथ फेर दिया। आजकल तो तुम पूरे उस्ताद हो गये ! कहाँ मिली ?"

"हुजूर, स्यालदह के रथ के मेले मे। एक महिला माँ-बाप के साथ रथ का मेला देखने आयी थी, भीड़ म मैंने गायब कर दिया।"

'दो नम्बर का सोना तो नही है ?"

वैरागी ने कहा, "हुजूर आप ठहरे मोने के जौहरी, इतने दिनो से आप सोने का कारोबार कर रहे हैं। खुद ही परीक्षा करके देख लें।"

साहब ने विविध प्रकार से चारो चूडियो की परीक्षा की, उसके बाद कहा, "खाटी सोना है। अच्छा यह तो बताओ कि कितना लागे ?"

"हुजूर, आजकल मोने की दर पाँच सौ रुपया तोला है। आप इसी बात को मद्दे नजर रखकर दीजिए।"

साहब ने खडे होकर दीवार मे जडी लोहकी आलमारी को खोला। मोने की चूडियाँ रखकर उस फिर से बन्द कर दिया। उसके बाद पॉकेट मे वैलेट बाहर निकालकर उससे कई नोट निकाले और वैरागी के हाथ मे थमा दिये।

"लो।" साहब ने कहा।

वैरागी ने नोटो को गिनकर कहा, "बस, पचास ही रुपये ?"

साहब ने कहा, "काफी दे दिया। अब तुम चले जाओ।"

"मगर हुजूर चार अदद चूडियो का आपने हिसाब करके देखा ह कि कितनी कीमत होती है ? पचास रुपये ही दीजिएगा ता कैसे चलेगा ?"

साहब को ऊब महसूस होने लगी।" फिर इस तरह की चीज मेरे पास बेचने क्यो ले आते हो ?" साहब ने कहा, "बाजार मे सोनार के हाथ भी बेच सकते थे। मैं क्या सोने की खरीद-बिक्री का काम करता हूँ ?"

वैरागी सामन्त ने कहा, "हुजूर, इतने दिना से जितने ही सोने के गहनो की बटमारी की है, आपके ही हाथ बेचा है।"

साहब न कहा, "मेरे पास क्यो आये हो ? सोनार के हाथ बेचने से तुम्हे किसने मना किया है ?"

वैरागी ने कहा, "हुजूर, आप ही हम लोगा के माँ-बाप हैं। क्षगडू बाबू जब से मुझे इस लाइन मे ले आये है, आपको ही माँ-बाप के रूप मे जानता हूँ। जिन्दा रहूँ तो भी आप ही सब कुछ और मरना भी पडे तो आप ही सब कुछ हैं। बाजार के सोनार के हाथ म बटमारी का

माल बेचकर पुलिस के हाथ मे पड़ूँ ? उससे बचने के लिए ही तो आपके पास आया हूँ ।"

बशीलाल इस बीच ह्विस्की का गिलास सामने रख गया था। साहब ने सोडा और बर्फ मिलाकर उसे होठो से लगाया।

अब उसे याद आया, सुनीति यही बैठी हुई है।

उसकी ओर सिर घुमाकर कहा, "तुम अब भी क्यो बैठी हुई हो ?

सुनीति ने कहा, "मैं जो कुछ कहने आयी थी, कह नही पायी हूँ और जब तक कह नही लूगी, मैं यहाँ से जाने वाली नही हूँ।"

"ओह, यह बात !"

लगा जैसे, ह्विस्की का तीखापन साहब के मस्तिष्क को झिझोडने लगा था।

हम दोनो कोठरी से झाँक-झाँक कर सब कुछ देख-सुन रहे थे। मैं हतप्रभ-सा सोच रहा था कि जिस आदमी को अभी सामने देख रहा हूँ, वह क्या मेरे वही मास्टर साहब हैं, जा कठोरतापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते थे और हम लोगो को भी पालन करने के लिए कहा करते थे। जो एक ओर तो सादगी से पूण जीवन और दूसरी ओर महान चिन्तन पर आस्था रखते थे। यह ब्लैक प्रिंस क्या वे ही हैं ? मैं दरवाजे से ब्लैक प्रिंस की ओर जितना देख रहा था, जितनी उसकी बाते सुन रहा था, अपने तमाम प्रत्यक्ष अतीत पर विश्वास करने का उतना ही मेरा मन हो रहा था। यह कैसे होता है, क्योकर सम्भव होता है ?

अचानक साहब ने कहा, "क्यो, क्यो नही बता रही हो ? जो कुछ कहना है, जल्दी से कहो। मुझे कल सवेरे के प्लेन से बैंकॉक जाना है।"

सुनीति ने अबकी स्पष्ट स्वर मे कहा, "मैं तुमसे एक बात अर्ज करना चाहती हूँ।"

"ऐसा क्यो कह रही हो ?"

"हा, मै अर्ज ही करना चाहती हूँ। मैं तुम्हे आदेश नही दे सकती। जानती हूँ, उतना अधिकार मुझे नही है। इसके अलावा तुम्हारे सामने मेरी हस्ती ही क्या है ? तुम अगाध पैसे और सोने के मालिक ठहरे और मैं तुम्हारी तुलना मे कुछ भी नही हूँ।"

"बेकार की बाते रहने दो। यह सब सुनने का वक्त मेरे पास नही है। असली बात क्या है, यही कहो।"

सुनीति ने कहा, "मेरी छात्रा का सोने का हार तुम्हारी आलमारी मे है । उसे मुझे वापस कर दो ।"

"तुम्हारी छात्रा का ? तुम किसी को पढाती हो क्या ?"

"हा । एक भले आदमी के घर पर रहकर उनकी लडकी को पढाती हूँ । उसके बदले मुझे रहने और खाने की सुविधा के अतिरिक्त वेतन भी मिलता है । उसी वेतन के रुपये से अभी मैं एम० ए० मे पढ रही हूँ और मेरा खर्च भी उसी मे चल रहा है ।"

साहब व्यग्य की हँसी हँसने लगा ।

'रीयली । कभी तुम देहात की लडकी थी और अब पूरे तौर प लेडी हो गयी हो ? वेरी गुड न्यूज । वेरी-वेरी गुड न्यूज । जब एम० ए० मे पढ रही हो तो आई० ए० बी० ए० अवश्य ही पास कर लिया होगा । लेकिन जिस घर मे तुम पढाती हो, वहाँ के आदमी क्या यह जानते है कि कभी तुम मेरी पत्नी रह चुकी हो ? उन्हे क्या मालूम है कि कभी मेरे आदमियो ने तुम्हे स्यालदह के मोड पर किडनैप कर लिया था ? अगर उन्हे यह बात मालूम होती तो तुम्हे अपने घर पर टिकने नही देते । सचमुच क्या उन्हे यह सब बात मालूम है ?"

सुनीति ने कहा, "नही, उन्हे मालूम नही है । इसके सिवा उन्हे यह भी मालूम नही है कि मेरा नाम कमला है ।'

"फिर वहाँ तुम्हारा नाम क्या है ?"

सुनीति ने कहा, "उन्हे मालूम है कि मेरा नाम सुनीति है—सुनीति मित्र ।"

"और तुम्हारे माँ-बाप ?"

"उनकी मैंने खोज-खबर नही ली । अपना कलकित चेहरा दिखा कर उनके मन को मैं तकलीफ नही पहुँचाना चाहती हूँ । कॉलेज और यूनीवर्सिटी मे भी लोग मुझे सुनीति के नाम से ही जानते है ।"

साहब ने व्यग्य के लहजे मे कहा, "तुम्हारी रुचि की दाद देता हूँ, कमला । तुम्हारा टेस्ट बहुत ही अच्छा है । अपने लिए तुमने ऐसा नाम चुन लिया है कि लोग तुम्हे सती-साविनी समझेगे—जल से धोयी हुई तुलसी की पत्ती । सचमुच तुम क्या थी और क्या हो गयी ! तुम्हे देख-कर और तुम्हारी बाते सुनकर मुझे खुशी हो रही है । याद है, कभी ऐसा वक्त भी था कि तुम मेरे साथ बैठकर शराब पीती थी । मैं तुम्हारे

गिलास मे शराव ढाल देना था और तुम गटागट पूरी ह्विस्की एक ही घूट मे पी जाती थी। उन दिनो की वाते तुम्हे याद है ?"

सुनीति ने कहा, "तुम यही सब करके मेरा सवनाश करना चाहते थे, मुझे बाज़ारू वेश्या बनाना चाहते थे, मुझे दूसरी-दूसरी लड़कियो की तरह फॉरेन मार्केट मे वेचना चाहते थे।"

साहब ने कहा, "हाँ, मैं झूठ नही कहूँगा, कमला। तुमने जो कुछ कहा, मैं तुम्हे वही बनाना चाहता था। मगर तुम मुझसे भी बढकर शैतान हो, तुमने चोर से बटमारी की। मेरा पैसा चुराकर तुम लापता हो गयी।"

"लापता होकर मैंने कौन-सा अन्याय किया है ? मैं अपनी जिन्दगी बरबाद कर तुम जैसे शैतान की भलाई करूँगी, ऐसी अबोध मुझे क्यो सोचा था ?"

साहब ने गिलास से दूसरा घूट लिया।

बोला, "शैतान ! मैं शैतान हूँ ? तुमने मुझे शैतान कहा ? सो तुम मुझे शैतान ही कह लो। मगर मैं शैतान क्यो बना, यह बात आज कोई नही जानना चाहता है, कमला ! मैं पहले क्या था, यह भी कोई नही जानना चाहता।"

सुनीति ने पूछा, "पहले तुम क्या थे ?"

साहब ने गिलास से एक लम्बा घूट लिया।

बोला, "मैं जो कहूँगा उस पर तुम यकीन करोगी ?"

"करूँगी। कहो।"

"आज के मेरे इस रूप को देखकर तुम क्या यकीन करोगी कि कभी मैं मोटी खादी का धोती-कुरता पहनता था, निरामिष भोजन करता था, ब्रह्मचय का पालन करता था, हर रोज आँख खुलने के बाद गीता का पाठ करता था ? यकीन करोगी कि किसी समय ढाई-तीन सौ रुपये वेतन की स्कूल मास्टरी की नौकरी से सुखी था ? मगर मैं क्यो ब्लैक प्रिंस हुआ, मालूम है ?"

सुनीति ने कहा, "नही। शायद किसी पोर्तुगीज साहब के चक्कर मे फँसकर।"

"नही नही, यह बात नही है, कमला ! तुमने किससे क्या सुना है, पता नही। मगर जिस कॉस्टेलो साहब को तुमने मेरे घर पर देखा था, इसके लिए वह जिम्मेदार नही है। मिस्टर कॉस्टेलो मुझे

लाइन म ले आया है । कॉस्टेला मुझे इस लाइन मे नही भी लाता तो भी मैं कभी न कभी तो आता ही ।"

"क्या ?"

"उसके लिए एक दूसरा ही आदमी जिम्मेदार है । बचपन की बातो के सिलसिले मे मैंने तुम्हे दुर्गा दीदी के बारे म बताया होगा । दुर्गा दीदी की आत्महत्या के बाद मुझे चैतन्य चाचा एक आश्रम म रख आये थे । मेरी लिखाई-पढ़ाई का सिलसिला वहीं चलता रहा था । उसी आश्रम मे रहने के कारण मैं ब्रह्मचारी बन गया । मगर आज जो मैं ब्लैक प्रिंस के रूप म बदल गया, वह किसके कारण ? उसके लिए एक व्यक्ति जिम्मेदार है । वह कहती थी, जीवन मे रुपया-पैसा ही सब कुछ है, भोग ही सब कुछ है, विलासिता ही सब कुछ है । वह कहती थी, जो जीवन की लडाई म हार जाता है, वही त्याग की बातें करता है, जिसम भोगने की क्षमता नही है, वही ब्रह्मचर्य की वाणी का प्रचार करता है, जिसके पास कीमती कपडे खरीदने का पैसा नही है, वही खादी पहनकर देश-सेवक बनता है ।"

सुनीति ने कहा, "तुम किसके बारे मे कह रहे हो ? उसका नाम क्या है ?"

साहब बोला, "वह सब तुम्हारे लिए सुनना कोई ज़रूरी नही है, कमला । जीवन म जो खो जाता है, वह दुबारा नही मिलता । वह भी उसी तरह मेरे जीवन से खो चुकी है । उसी की बात के कारण मैं गोल्ड-स्मगलर बना, हालाकि वह मेरे जीवन से खो गयी ।"

सुनीति ने कहा, "बताओ न, वह कौन है ? कहाँ रहती है ? उसका नाम क्या है ?"

साहब ने कहा, "तुम यह सब मुझसे मत पूछो । अभी वे बाते रहने दो । तुम अपने बारे मे बताओ । कैसी हो ? तुम्हे कितनी तनख्वाह मिलती है ? तुम किस तरह की छात्रा को पढ़ाती हो ?"

सुनीति ने कहा, "यही बात तो बताने आयी हूँ, मगर बीच मे बहुत-सी फालतू बातें आ गयी । तुम कल सवेरे ही बैंकॉक जा रहे हो? सवेरे के प्लेन से ही ?"

"हाँ, मैं यहाँ से जो कुछ लेकर जाऊँगा, उसके पास जमा करने के बाद ही मैं निश्चिन्तता की साँसें ले पाऊँगा । आजकल एयरपोर्ट पर बहुत चेकिंग होती है । सेक्यूरिटी का बहुत कडा इन्तजाम है ।"

"मगर तुम्हारे लिए तो डर की कोई बात नही। तुम इस लाइन मे नये आदमी नही हो। हमेशा से ऐसा करते आ रहे हो। जो नया होता है, उसके लिए डरने की बात होती है।"

साहब ने कहा, "मालूम है। लेकिन जानती हो कमला, आज सुबह से ही मेरा मन खराब है। लगता है, मैंने यह क्या किया? किसकी बात से मैं ऐसा हो गया? सच कह रहा हूँ, कभी कभी मुझे लगता है कि पहले मेरा जो रूप था—वही उस समय जब मैं ढाई सौ रुपये की मास्टरी करता था, जब अपने ही हाथ से रसोई बनाकर खाता था, अपने ही हाथ से कपडा फीचता था, ब्रह्मचर्य-पालन करता था—इससे कही अच्छा था।'

सुनीति ने पूछा, "तुम्हारा मन सुबह से ही क्या खराब हो गया?"

साहब ने कहा, "आज भी मैं हर रोज की तरह ऑफिस जा रहा था, अचानक देखा, एक व्यक्ति बस के इन्तज़ार मे खडा है।"

"वह कौन था? तुम्हारा कोई परिचित आदमी?"

साहब बोला, "वह मर्द नही, एक महिला थी। जानती हो, वह कभी बस पर सवार नही हुई है, रास्ते पर पैदल नही चली है, हमेशा कीमती गाडी से चक्कर लगाती आयी है। जो औरत शुरू से ही कार से घूमती रही है, उसे बस के इन्तज़ार मे खडी देखकर मुझे हैरानी हुई। उसके अलावा उसकी साडी-ब्लाउज मे भी पहली जैसी तडक-भडक नही थी। पहले का सौन्दर्य भी नही था और न ही [illegible] जैसा यौवन और आकर्षक चेहरा। देखकर मुझे बडा ही दुख हुआ।"

सुनीति ने कहा, "वह कौन है?"

ऐसा लगा, जैसे साहब के कान मे बात पहुँची ही नहीं। [illegible] आप कहने लगा, "हालाकि मेरे पास जो इतना [illegible] है, [illegible] मैं [illegible] प्रिंस हूँ, आज जो हमारे पास इतना वैभव है, [illegible] बदौलत है, कमला। मैं इतनी-इतनी औरतो का [illegible] हूँ, उसका कारण वही है। एक दिन तुम्हे जो [illegible] वह भी उसी के कारण।"

सुनीति ने कहा, "यह तुम क्या कह रहे हो? [illegible] भी नही आ रहा है।"

साहब ने कहा, "तुम समझ नही [illegible] समझ नही सकेगा। तुम तो मुझे [illegible]

जानती हो, कमला। मगर मैं क्या गान्दू स्मगलर हुआ, यह बात तुम लोग नहीं जानते। मैंने क्या बड़ा आदमी बनना चाहा—यह बात भी तुम लोगों को मालूम नहीं है।"

सुनीति ने कहा, "मुझे सब कुछ मालूम है।"

साहब ने कहा, "क्या मालूम है?"

"यही कि कॉस्टलो साहब ही तुम्हें इस लाइन में ले आया।"

साहब ने कहा, "यह सब फालतू बात है। कॉस्टलो मेरा कोई नहीं है। उससे मुझे सिर्फ कारोबार का ही रिश्ता है। मैं यहाँ से सोना सस्ती कीमत में खरीदकर उसे अधिक मूल्य में देता हूँ। कभी-कभी उसे कीमती पत्थर भी देता हूँ। यहाँ से गाँजा चरस ले जाता हूँ और वह पँचगुना दाम देता है। इससे ज्यादा मेरा उससे कोई रिश्ता नहीं है। उससे अवश्य ही मेरा पेट भरता है। लेकिन दिल?"

"तुम में दिल नामक कोई चीज़ है?"

साहब तब नशे में आ चुका था। बोला, "इतने दिनों से नहीं था मगर आज लगा कि है। हाँ, आज सुबह बस स्टैंड में खड़ी उस महिला को देखकर मुझे अपने खोये हुए दिल का अहसास हुआ। लगा, मैं क्या और किसके लिए इतना रुपया कमा रहा हूँ।"

सुनीति ने कहा, "बात तो सही है। इतनी तरह के जाली कारोबार कर इतना ज्यादा पैसा कमाने में तुम्हें क्या फायदा हो रहा है? इतना-इतना पैसा कौन भोगेगा?"

साहब ने कहा, "इस बात की चर्चा कर तुमने अच्छा ही किया। पहले यह बात मुझसे किसी ने नहीं कही थी। हालांकि इस बात का उत्तर मेरे पास है। पता नहीं, तुम्हें बताया था या नहीं कि कभी मैं बहुत अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़ा करता था। हिस्ट्री, फिलॉसफी और लिटरेचर पढ़ा करता था। तब मैं एक श्लोक पढ़ता था जो आज भी याद है। पढ़ता था 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'। यानी निरासक्त होकर भोगना ही आदर्श भोग है। मैं अपने छात्रों को यही सिखाता था और वे उसी पर आस्था भी रखते थे। लेकिन एक आदमी ने उस पर विश्वास नहीं किया था।"

उसके बाद क्या हुआ, पता नहीं, साहब ने एकाएक कहा, "यह सब तुम्हें क्यों नहीं कहा था, इसका कारण तुम समझ नहीं सकोगी।"

सुनीति ने कहा, "कहो, मैं समझ जाऊँगी।"

"समझ जाओगी ? तुम समझ लोगी ? मगर समझोगी कैमे ? तुम ठहरी गाँव की लडकी, लिखना-पढना सीखा ही नही।"

सुनीति ने कहा, "मैं लिखी-पढी औरत हूँ। अगर नही होती तो छात्रा को पढाती ही कैमे ? मेरी छात्रा हर साल परीक्षा मे अव्वल आती है।"

साहव ने गिलास को फिर से होठो से लगाया।

"सचमुच ! सच कह रही हो ?" साहब ने कहा, "मगर तुम उमे पढाती कैसे हो ? जब तुम मेरे पास थी तो लिखना-पढना बिलकुल नही जानती थी। इन कई बरसो के दरमियान तुमने कैसे आइ० ए०, बी० ए० पास कर लिया ?"

सुनीति ने कहा, "मैं अँग्रेजी और सस्कृत मे हमेशा अव्वल आती थी।"

"अयँ क्या कह रही हो तुम ! कहाँ से पास किया ? किस स्कूल मे पढती थी ? कब ?'

साहब चिहुँककर सीधा होकर बैठ गया और बोला, "ऐसा किस तरह हुआ ?"

सुनीति ने कहा, "तुम्हारे घर से भागकर मैं ईसाइयो के एक चर्च मे चली गयी थी। उन लोगो ने अपने खर्च से मुझे लिखाया-पढाया— खास तौर से अँग्रेजी।"

"फिर तुम वहाँ जाकर ईसाई हो गयी थी ?"

सुनीति ने कहा, "हाँ।"

"हिन्दू धर्म त्याग दिया था ?"

सुनीति ने कहा, "तुम्हारे नरक मे भागने के वाद मैंने सोचा, चाहे मुझे ईसाई बनना पडे या और कुछ। कही आश्रय पाना हो मेरे लिए तब स्वर्ग जैसा था। मैं चूकि वहाँ गयी, इसीलिए ज़िन्दा रह गयी। आज जो मैं बी० ए० पास कर एम० ए० मे पढ रही हूँ, एक भले आदमी के यहाँ मुझे जो आश्रय मिला है, इन सब बातो का श्रेय उन्ही लोगो को है। वहाँ से निकलकर जब मैं कॉलेज मे दाखिल हुई तो मुझे स्कॉलर-शिप मिला। उसी स्कॉलरशिप के पैसे से सस्कृत के एक पडित के पास सस्कृत पढी। कठोपनिषद् मे मैंने तुम्हारे उस श्लोक को पहले-पहल पढा था—तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा "

"आश्चर्य है।"

साहब ने गिलास से फिर से घूंट लिया और कहने लगा, "सचमुच ही आश्चर्य की बात है, कमला ! तुमने सचमुच ही मुझे आश्चर्य में डाल दिया। जानती हो, मैं भी एक छात्रा को पढाता था। वह मेरी उन बातो पर विश्वास नही करती थी। वह सोचती थी, पृथ्वी में एक मात्र भोग ही आनन्ददायक वस्तु होती है, जिसके पास पैसा है, वही सुखी है। उसके पिताजी बडे आदमी थे। उनके पास दो-तीन मकान और गाडी थी।"

सुनीति ने कहा, "तुम भी तो अब इसी बात पर विश्वास करते हो।"

"हा, अभी इसी पर विश्वास करता हूँ। छाया जो कहती थी, उसी पर विश्वास करता हूँ। कॉस्टेलो साहब ही मुझे इस रास्ते पर ले आया। उसने मुझे हिस्ट्री और फिलॉसफी पढने से रोका और डिटैक्टिव पढने को कहा। कहा उससे तुम्हारी चिन्तन-धारा डिसिप्लिन्ड होगी, बुद्धि लॉजिकल होगी। लीला जो जो कहा करती थी, कॉस्टेलो भी वही वही बात कहने लगा। और, लीला और कॉस्टेलो जब एक ही बात कहने लगे तो मैं इस पर विश्वास किये बिना नही रह सका।"

सुनीति ने कहा, "लीला ? लीला कौन है ? उसका नाम इसके पहले तुम्हारी जबान से नही सुना था। उसे भी क्या विलायत ले जाने के बहाने तुमने फॉरेन मार्केट मे बेच दिया है ?"

"नही नही, बात ऐसी नही है। किसी जमाने में वह मेरी छात्रा थी। उसका विवाह हो चुका है।"

"विवाह हो चुका है ?"

"हा, वह पैसे को प्यार करती थी और उसकी शादी मिस्टर हसराज नामक एक करोडपति से हुई थी। लेकिन "

"लेकिन क्या ?"

"लेकिन आज सवेरे जब मैं ऑफिस जा रहा था, देखा, वही लीला हसराज बस पर चढने के लिए सडक पर क्यू मे खडी है, हालाँकि इसके पहले उसे मैंने कभी पैदल चलते नही देखा था। और सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि पहले की तरह कीमती साडी भी उसके बदन पर नही थी और न पहले के जैसे गहने ही। इसके पहले उसमे जो रूप था, वह जाने कहा चला गया ? देखकर मैं तो सन्न रह गया।"

यह कहकर साहब ने जोरो का एक कहकहा लगाया।

सुनीति ने कहा, "यह क्या, तुम रो क्यो रहे हो ?"

साहब ने जल्दी-जल्दी अपनी आँखे पोछी और कहा, "नही-नही, मैं रो कहाँ रहा हूँ ? मैं तो हस रहा हूँ। हाँ, मैं हँस रहा हूँ। हँस नही रहा हूँ ?"

यह कहकर ब्लेक प्रिंस ने स्वाभाविक हँसी हँसने की चेष्टा की, परन्तु उसे इसमे कामयाबी हासिल नही हुई।

[इक्कीस]

अँधेरी कोठरी मे विजय और मैंने एक-दूसरे की ओर देखा। नि शब्द। मास्टर साहब का यह कैसा अद्भुत चरित्र है! हम लोग किसे पकड़ने आये है? इतने दिनो के बाद ब्लैक प्रिंस के अन्तर म क्या विवेक की ज्वाला सुलगने लगी है? या यह भी अभिनय का ही एक प्रकार है?

देखा, वैरागी सामन्त थोड़े फासले पर खड़ा है। मगर साहब का उस ओर ध्यान ह ही नही। या फिर साहब उसे आदमी समझता ही नही। या ब्लैक प्रिंस ने सभवत यह सोच लिया है कि बरागी सामन्त मे वह सामर्थ्य है ही नही कि वह इन बातो का मर्म समझ सके।

और, उस कमरे के बाहर, जहा रसोई बनती है, वशीलाल छिपकर खड़ा है और सब कुछ देख-सुन रहा है। या बहाना बना रहा है कि वह यह देखने के लिए खड़ा है कि साहब का गिलास कब खाली होता है। गिलास ज्यो ही खाली होगा, वह कमरे के अन्दर जाकर बोतल से गिलास मे शराब ढाल देगा। वह बीच बीच मे उस कोठरी की ओर भी तिरछी निगाहो से ताकता है, जिसके अन्दर हम लोग है। ताला खुलने मे देर होते देखकर हम ऊब रहे हैं, गरमी के कारण पसीने से लथपथ हो गये है।

लेकिन, उपाय ही क्या है? जब तक उपयुक्त क्षण नही आता है, वह दरवाजा नही खोलेगा। वह पुलिस लाइन मे ट्रेनिंग पा चुका है। किस क्षण, किस असामी को पकड़ना चाहिए, इसके विषय मे वह अनुभवी है।

अचानक निस्तब्धता को भेद कर साहब ने कहा, "खैर, बेकार की बाते छोड़ो। अब तुम्हे यहा से जाना चाहिए, कमला। काफी रात हो चुकी है।"

सुनीति ने कहा, "हाँ, चली जा रही हूँ।"

साहब ने कहा, "अगर अकेली नहीं जा सकती हो, तो कहो, केदार से कह दूँ कि वह तुम्हें तुम्हारे घर पर पहुँचा आये।"

सुनीति ने कहा, "नहीं, अकेली आयी हूँ तो अकेली ही चली भी जाऊँगी।"

साहब ने कहा, "मगर तुमने यह तो बताया ही नहीं कि तुम्हारे आने का उद्देश्य क्या था।"

सुनीति उठकर खड़ी हो चुकी थी। वह फिर से बैठ गयी।

"आने के समय डर रही थी कि मुझे अन्दर आने ही नहीं दोगे। पहले की तरह ही गाली-गलौज करोगे, डराओगे-धमकाओगे। सोचा था, कहीं तुम अपने रिवॉल्वर का ही निशाना मुझे न बना डालो।"

"क्यों, तुम्हें मैं गोली मारने क्यों जाऊँगा?"

"गोली का निशाना क्या नहीं बना लोगे? मैं तुम्हारा पैसा चुराकर भाग चुकी हूँ। सोचा था, आज तुम मुझसे बदला लोगे।"

साहब हँस पड़ा, "तुम्हारा यह सब सोचना गलत नहीं है, कमला। सच कह रहा हूँ, आज अगर तुम्हें गोली नहीं मारता तो कम से कम तुम्हें पकड़कर मिड्लईस्ट जरूर ले जाता और वहां तुम्हें और-और लड़कियों की तरह बेच देता। तुम कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती थी, क्योंकि मेरे एजेन्ट हर जगह हैं। उनके लिए हर वक्त वीसा-पासपोर्ट तैयार रहते हैं। लेकिन मैंने ऐसा क्यों नहीं किया, बता सकती हो?"

"तुम्हीं बता दो।"

साहब ने कहा, "इसलिए कि सवेरे ऑफिस जाने के समय बहुत दिन का परिचित एक चेहरा दीख गया था।"

"उससे मुलाकात होने के कारण मुझसे ऐसा बर्ताव क्यों कर रहे हो?"

साहब ने कहा, "इसका कारण तुम समझ नहीं सकती हो। किसी की भी समझ में नहीं आयेगा। सुबह से उसी बात की बार-बार याद आ रही थी। हां, उसी की जिसके कारण मैं स्कूल-टीचर से गोल्ड-स्मगलर बन गया। उसकी ऐसी हालत कैसे हुई? और अगर उसकी यह हालत होनी ही थी तो मैंने क्या इस रास्ते का चुनाव किया? इतना पैसा कमाने के बावजूद क्या मैं सुखी हो सका? इसीलिए मैं दिन भर यही सोचता रहा कि ठीक रास्ते पर मैं था या वह थी?"

कहते-कहते एकाएक उसके ध्यान मे आया कि वैरागी सामन्त अभी तक खडा है। पूछा, "तुम अब भी क्यो खडे हो ?"

"हुजूर, दस रुपये और दे दीजिए, गाँव भेजना है।"

"नही, उससे ज्यादा नही दिया जायेगा।"

अचानक बाहर से एक तरह की आवाज आयी और साहब चौकन्ना हो गया।

साहब ने कहा, "ठगनलाल, जाकर देख तो, कौन है।"

वशीलाल ने जैसे ही दरवाजा खोला, वैरागी सामन्त के उस्ताद झगडू ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया।

झगडू के चेहरे पर आँखे जाते ही साहब के चेहरे पर एक आमूल परिवर्त्तन आ गया। वह उस वक्त और ही तरह का आदमी हो गया। अब तक जो आदमी अपने स्वभाव, आचरण और वार्त्तालाप के कारण सीधा-सादा लग रहा था, वही अब शेर की तरह दबग हो गया। अब जैसे उसे याद आया कि वह ब्लेक प्रिंस है।

सुनीति उसके चेहरे की ओर ताकती हुई बोली, "मैं तुमसे एक बात कहना चाहती थी।"

साहब ने कहा, "जानता हूँ, मगर अभी मेरे पास उतना वक्त नही है कि मैं तुम्हारी बाते सुनू। तुम अब चली जाओ।"

"लेकिन मैं आज बिना कहे जाऊँगी नही।"

साहब ने कहा, "कह दिया न, आज कोई बात सुनू, इसके लिए मेरे पास वक्त नही है। मेरा आदमी आ चुका है। मैं बैंकॉक से शनिवार को लौट रहा हूँ। उसी दिन आना, तुम्हे जो कुछ भी कहना है, उसी दिन कहना।"

सुनीति ने कठोरता के साथ कहा, "चाहे तुम्हे जितना भी काम क्या न रहे, लेकिन मेरी बात सुननी ही होगी।"

सुनीति का वैसा रूप मैंने कभी नही देखा था। आज तक मैं उसे निरीह और शान्त महिला के रूप मे ही जानता था। मगर अब उसका चेहरा कैसा हो गया ? यह क्या उसके चरित्र की दृढता है ? उसके इस चरित्र की मैंने कल्पना नही की थी।

सुनीति ने कहा, "अब तक मैं धीरज धर कर तुम्हारी सारी बातें सुन रही थी, अब तुम्हे भी धीरज रखकर मेरी बातें सुननी होगी।"

"इसका मतलब ?"

सुनीति ने कहा, "मैं जो कुछ कहना चाहती हूँ, वह सीधी सी बात है। ऐसी बात नहीं है जो तुम्हारी समझ में नहीं आये।"

झगड़ ने शायद उम्मीद नहीं की थी कि कमरे के अन्दर आने पर वह ऐसा दृश्य देखेगा। कभी झगड़ ही कमला को चुराकर यहाँ ले आया था। इसी के कान के झुमके की उसने चोरी की थी। उसकी समझ में यह बात आ गयी कि किसी खास बात पर इस महिला से साहब का झगड़ा चल रहा है। लेकिन साहब से उसकी पहले ही बात हो चुकी थी कि वह इसी वक्त यहाँ आयेगा।

मैं विजय के कान में फुसफुसाया, "वशीलाल अभी तक दरवाज़ा क्या नहीं खोल रहा है ? सुनीति की वह कहीं हत्या न कर दे।"

विजय ने मुँह पर उँगली रखकर इशारा किया—चुप रहो।

चुप होने के लिए मैं चुप तो हो गया ज़रूर, परन्तु सुनीति के फला-फल की बात सोचकर मेरे मन में भय का संचार होने लगा। मैं अन्दर ही अन्दर छटपटाने लगा। लेकिन उस समय एक असहाय दर्शक की भूमिका ग्रहण करने के अतिरिक्त मेरे लिए कोई दूसरा उपाय भी नहीं था।

कोई दूसरा उपाय न देखकर ब्लैक प्रिंस चिल्ला उठा, "यहाँ से बाहर निकलो। निकलो बाहर।"

सुनीति ने कहा, "मैं यहाँ रहने के लिए नहीं आयी हूँ। मैं यहाँ से चली जाऊँगी, मगर इसके पहले मेरी छात्रा का सोने का हार मुझे दे दो।"

"मैंने तुम्हारी छात्रा का सोने का हार लिया है, यह बात तुमसे किसने कही ?"

सुनीति ने कहा, "तुमने ज़रूर लिया है। तुमने नहीं लिया है तो तुम्हारे आदमी ने ज़रूर लिया है। कालू ने लिया है।"

"कालू ने लिया है ? कालू कौन है ?"

"हो सकता है, कालू को तुम नहीं पहचानते हो, मगर तुम्हारे आदमी पहचानते हैं। तुम्हारे गुंडों का यह सरदार पहचानता है। उन्हीं लोगों ने तुम्हारे पास लाकर बेचा है।"

ब्लैक प्रिंस ने अब अपना असली चेहरा प्रकट किया।

बोला, "बेचा है ! मेरे पास तुम्हारी छात्रा का सोने का हार बेचा है ?"

"सोना बेचने की बात सुनकर तुम इतना हैरान क्यो हो रहे हो ? तुम चोरी के सोने की खरीद नही करने क्या ? यही तो, अभी-अभी इस आदमी ने तुम्हारे पाम सोने की चार चूडियाँ बेची है। तुमने मेरे सामने ही उसे पचास रुपये दिये हैं।"

"मैंने उससे चोरी का सोना खरीदा है ?"

सुनीति उत्तेजना के मारे हाँफने लगी।

बोली, "तुमने चोरी का सोना अगर नही खरीदा तो क्या मैं झूठ बोल रही हूँ ? मुझे आख नही है ? कान नही है ? और अगर मैं झूठ ही कह रही हूँ तो उसी से पूछकर देखा कि उसने बेचा है या नहीं ?"

उसके बाद वह वैरागी सामन्त की ओर देखती हुई बोली, "बताओ, तुम्हारी वे सोने की चारा चूडिया चोरी का माल थी या नही ?"

वहाँ जितने भी आदमी उपस्थित थे, उनकी उत्कठा से पूण दृष्टि के सामने वैरागी मामन्त ने मुनोति के प्रश्न का उत्तर दिया, "हाँ, मा जी, यह बटमारी का ही माल है।"

"झगडू वैरागी का गला दबोचने आगे की ओर लपका। बोला, "साले, नमकहराम ! तू झूठी बात बोलता है ? साहब क्या चोरी का सोना खरीदते है ?"

अब मैं और अधिक छटपटाने लगा। वशीलाल अब भी चुपचाप क्या खडा है ?

विजय ने अपने मुँह पर उँगली रखकर मुझे चुपचाप बैठे रहने का मकेत किया।

इस बीच ब्लैक प्रिंस गुस्से से चिल्ला उठा। झगडू की ओर देख कर बोला, "बेवकूफ की तरह ताक क्यो रहा है ?"

झगडू वैरागी की ओर लपका मगर वैरागी मामन्त को पहले से ही सारी बातो का पता था। उसे मालूम था कि हम कमरे के अन्दर बैठकर मब कुछ देख रहे हैं। समय आने पर हम बाहर निकल आयेंगे। इमीलिए वह चुपचाप खडा रहा।

उधर सुनीति को इम बात की परवाह नही थी कि वहा क्या हो रहा है। उमने कहा, "तुम मेरी छात्री का हार निकाल दो वरना मैं उसके घर मे मुँह दिखाने लायक नही रह जाऊँगी।"

ब्लैक प्रिंस ने कहा, "तुम अपना चेहरा किसके सामने दिखा सकती

हो और किसके सामने नही, इसके लिए माथा खपाने का वक्त मेरे पास नही है।"

सुनीति ने कहा, "अगर मैं यहा से बाहर निकलने की खातिर ही आयी होती तो पहले ही यहाँ से चली गयी होती, तुम्हारे हुक्म के इन्तजार म खडी नही रहती।"

"क्या कहा ? तुम्हारी इतनी हिम्मत ?"

सुनीति ने कहा, "मैं तुम्हारी फालतू बातें नही सुनना चाहती हूँ। तुम्हारा सोना कहा है, उसे पहले बाहर निकालो। देखना चाहती हूँ कि तुम कौन-सा पैकेट लेकर बैङ्कॉक जा रहे हो। मैं उसके अन्दर देखूँगी कि मेरी छात्रा का सोने का हार—उसकी सालगिरह वाला हार —है या नही। बिना यह देखे मैं यहाँ से नही जाऊँगी।"

ब्लैक प्रिंस ने अब देर नही की, लपक कर सामने आ गया। कहा, "जाओ, यहाँ से बाहर चली जाओ। कह रहा हूँ, यहाँ से बाहर निकल जाओ।"

और उसने उँगली से दरवाजे की तरफ इशारा किया।

लेकिन सुनीति पर्वत की तरह अचल-अटल खडी रही। अपना सिर उठाकर उसने कहा, "तुम मुझे भय दिखा रहे हो ?"

"हाँ, दिखा रहा हूँ।" ब्लैक प्रिंस ने चीखकर कहा।

सुनीति ने अपना सिर ऊपर की ओर उठाया और बोली, "मैं नही जाऊँगी, जो करना है, करो।"

ब्लैक प्रिंस ने तत्काल अपने पॉकेट से रिवॉल्वर निकाल लिया और उसे सुनीति की ओर तानकर कहा, "अब जाओगी या नही ?"

मैं भय से सिहर उठा। वंशीलाल तैयार था ही, उसने चट से हमारे दरवाज़े का ताला खोल दिया और विजय उसी क्षण हाथ मे रिवॉल्वर लिए कठोरी से बाहर निकलकर ब्लैक प्रिंस की ओर बढा। वह चिल्लाकर कुछ कहना चाहता था। मगर उसके पहले ही ब्लैक प्रिंस की नज़र हम पर पड चुकी थी और उसने हमे निशाना बनाकर गोली चला दी।

क्या हुआ, यह बात तत्काल हमारी समझ मे नही आयी। शायद सुनीति सामने आकर खडी हो गयी थी या ब्लैक प्रिंस का हाथ काँप उठा था या वह भय से सिहर उठा था। अवश्य ही ऐसा ही कुछ हुआ होगा वरना सुनीति के ही बदन मे गोली क्यो लगती ? जब धुएँ का

गुवार छँट गया, देखा, सुनीति फश पर पडी है और उसके शरीर से रक्त का फव्वारा छूट रहा है।

उस क्षण मुझे अपनी आँखो पर जैसे विश्वास ही नहीं हो रहा था। इसी बीच विजय, वशीलाल और वैरागी सामन्त न मिलकर दाना को पकड लिया था। जब ब्लैक प्रिस विजय के हाथ मे कैदी था। वैरा सामन्त झगड़ू को पकडे हुए था। वशीलाल जब ब्लैक प्रिस के हाथ हथकडी पहनाने लगा तो ब्लैक प्रिस ने कहा, "ठगनलाल।"

वशीलाल ने कहा, "मैं ठगनलाल नहीं, वशीलाल हूँ। मैं पुलिस का आदमी हूँ।"

अब मै अपने आप को सयत नही रख सका।

मैंने कहा, 'मास्टर साहब ?"

मास्टर साहब ने भी मेरी ओर आँखे माडी। शायद मुझे पहचानने की कोशिश की। परन्तु उत्तेजना के कारण शायद अतीत, वत्तमान, भविष्य—किसी के बारे म भी उनकी काई जानकारी शेप नही थी।

स्मरण दिलाने के उद्देश्य से मैंने अपना नाम बताया और कहा कि मैं आपका ही छात्र हू।

छात्र ? लगा, नाम सुनकर याद करने की कोशिश करने लगे। मगर याद नही कर सके, या अपने व्यतीत को प्राण-पण से भूलन की कोशिश करने लगे।

लेकिन मैंने छोडा नही। कहा, "आप कैसे थे और किस तरह के हा गये मास्टर साहब ? आप ही मेरे आदश थे, आप ही मुझे त्याग की बाते सिखाते थे, ब्रह्मचय पालन करन का उपदेश देते थे। फिर आप ही इस तरह क्यो हो गये ?"

शायद यह बात उनकी समझ म आ गयी थी कि मैं पुलिस का आदमी हूँ। इसीलिए कुछ देर तक मुझे घूरते रहे, उसके बाद आखें दूसरी ओर फेर ली। शायद पकडे जाने की दुबलता ने उन्हे असहाय बना दिया था। या यह भी हो सकता है कि उन्हे अपने अतीत की बातें याद आने लगी और वे अनुताप की भटठी मे जलने लगे या फिर वे अपनी आँखो के आसू का राकना चाहते थे।

लेकिन तब उन बातो के सदभ मे साचने विचारने या तक वितक करने का वक्त हमारे पास नही था। विजय थाने मे टेलीफान करन और डाक्टर को बुलाने मे व्यस्त था। इसके बाद उस चाबी से लाहे

[बाईस]

मैं जिन दिनों पुलिस के अपराध-निरोध-विभाग का अफसर था, यह घटना उन्ही दिनो की है। तब इस तरह की बहुतेरी घटनाएँ घट रही थीं। मगर कोई घटना ऐसी नही थी जो मुझ पर स्थायी छाप छोड़ सके। क्योंकि दुनिया मे चोर, डाकू, घूसखोर, झूठे और गुंडे महाभारत काल से ही रह रहे है। फिर भी इस तरह की घटना कहाँ दीख पड़ती है ?

प्रकाश से अंधकार की ओर बढ़ जाये, सचाई मे बेईमानी की ओर अग्रसर होने लगे, आत्म-त्याग के बदले आत्म-प्रवंचना को अपना ले—इस तरह की घटना मेरे जीवन के लिए आदि और अन्त दोनों थी। इसीलिए वह घटना अब भी मुझे भूली नही। याद रहनी ही चाहिए। लेकिन कारावास मे दंड की यातना भोगने के दौरान मास्टर साहब को भी क्या उन बातों की कभी याद आती होगी ?

पता नही।

याद है, उस रात तमाम कारवाई खतम कर जब घर लौटा था तो देखा, भाभीजी छटपटा रही थीं। मुझ पर नजर पड़ने के बाद थोड़ी-बहुत आश्वस्त हुईं और दौड़ती हुई मेरे पास आकर बोलीं, "देवर जी सर्वनाश हो गया, सुनीति का कही पता नही चल रहा है।"

कुछ भी न जानने का बहाना बनाकर मैं बोला था, "कब से गायब है ?"

"शाम से ही। शाम के वक्त मुझसे कहा मैं जरा बाहर जा रही हूँ। मैंने सोचा, अच्छा है, बाहर से घूम-फिर आये, कभी तो बाहर जाती ही नही। अगर बाहर निकली है तो कोई हर्ज नही। हो सकता है, कोई जरूरी काम हो। मैंने उसे रोका नहीं।"

भाभी जी ने कहा, "उसके बाद रात के आठ बज गये, फिर नौ, फिर दस। उस वक्त भी नही आयी तो मैं बाहरी दरवाजे पर खड़ी

होकर इधर-उधर ताकने लगी। मुझे डर लगने लगा। सोचा, घर पर तुम भी नहीं हो, क्या-करूँ, क्या नहीं करूँ—कुछ भी समझ में नहीं आया। पुलिस को खबर दूँ या नहीं। आजकल कैसा जमाना आ गया है कि हर तरह के खतरे की संभावना है।"

मैंने कहा, "पुलिस को खबर भेजने से अब कोई लाभ नहीं होगा। सुनीति अब लौटकर नहीं आयेगी।"

"क्यों?" भाभी जी जैसे आसमान से नीचे गिर पड़ी।

मैंने शुरू से आखीर तक की घटना उन्हें बतायी। सुनकर भाभी जी यों चौंक पड़ी जैसे बिजली गिर पड़ी हो या उससे भी बढ़कर कोई घटना घट गयी हो।

भाभी जी ने कहा, "सच्ची बात बता रहे हो न देवर जी? मुझे तो जैसे विश्वास ही नहीं हो रहा है। वह इतने दिनों से हमारे घर में रह रही थी, फिर भी मैं कुछ समझ नहीं सकी।"

उसके बाद सुनीति के दुख पर भाभी जी के मुँह से एक छोटा-सा शब्द बाहर निकला, "आह!"

मैंने कहा, "आप अभी 'आह' कर रही हैं भाभी जी। मगर मान लीजिए, सुनीति अगर जिन्दा बच जाती तो क्या आप इन घटनाओं को जानने के बाद उसे घर में रहने देती? अपनी छाती पर हाथ रखकर बताइए कि आप उसे यहाँ रहने देती?"

भाभीजी ने उस दिन इस बात का उत्तर नहीं दिया। शायद यह प्रश्न उत्तर देने योग्य था भी नहीं। और सिर्फ भाभी जी के बारे में ही क्यों कहूँ, बीसवीं शताब्दी का सारा समाज इसका उत्तर दे सकेगा, इसमें मुझे संदेह है। बीसवीं तो बीसवीं, इक्कीसवीं शताब्दी का समाज भी इसका उत्तर नहीं दे सकेगा। क्योंकि यह न तो नैतिकता का प्रश्न है और न ही समाजवाद का, बल्कि रुपये-पैसे का प्रश्न है। रुपये पैसे की मर्यादा जितनी बढ़ती जायेगी, नैतिकता की मर्यादा उतनी ही घटती जायेगी।

याद है, उस दुर्घटना के बाद जब मास्टर साहब को कोर्ट के लॉक-अप में डाल दिया गया तो विजय के ऑफिस में जाकर इस दुर्घटना के सम्बन्ध में मैंने चर्चा की थी। उस समय भी सम्भवतः मेरे मन से विस्मय और शोक की भयावहता दूर नहीं हुई थी। सुनीति के जीवन की विचित्रता ने मुझे जितना रोमांचित किया था, उसकी

मृत्यु ने भी मुझे उतना ही अभिभूत कर लिया था। और हाँ, मास्टर साहब की गिरावट ने तो मुझे पूर्णतया आश्चर्य मे ही डाल दिया था। मेरा मन उसकी कोई व्याख्या प्रस्तुत करने मे अपने को असमर्थ पा रहा था।

विजय ने कहा, "जानते हो, दरअसल उसके लिए जिम्मेदार कौन है? न तो तुम्हारे मास्टर साहब जिम्मेदार हैं और न कोई दूसरा ही। जिम्मेदार है तो हमारे इस युग की टेक्नॉलॉजी। इस युग मे पैसे से आराम और सुख की इतनी सामग्री मिल जाती है, जितनी किसी भी युग मे नही मिलती थी। और चूकि पैसे से आराम मिलता है, इसलिए सभी का झुकाव उसी की तरफ हो गया है। जैसे अमेरिका को ले लो, वहाँ नैतिक मूल्यो का ह्रास हो चुका है और उसका प्रभाव हमारे देश पर भी पड रहा है। यही वजह है कि लोगो की निगाह मे आज नैतिकता का कोई मूल्य नही, और इसी कारण पुस्तको मे पढे हुए पहले के गुण आज के आदमी के लिए असत्य हो गये हैं। दो चार व्यक्तियो के अलावा बाकी सभी भले आदमी अब दुर्जन होते जा रहे है। जितने भी भले आदमी आज बचे हुए हैं उन्हे भी ज्यादा दिना तक बचा कर रखा जा सकेगा, मुझे ऐसा नही लगता।"

मैंने कहा, "लेकिन अगर यही सच हो तो हमारे मास्टर साहब जैसे आदमियो की इस तरह की परिणति क्यो होती है? इसकी कल्पना भी नही की जा सकती है।"

विजय ने कहा, "और कुछ बरसो तक इन्तजार करो। देखोगे, हमारा समाज भी अमेरिका के जैसा होगया है। घर-गृहस्थी-समाज टूट कर बरबाद हो जायेगा। इसे कोई भी रोक नही सकेगा। क्योकि जो लोग अभी तक दुर्जन नही हुए हैं, उन्हे मान सम्मान दिया जाये, इसका कही भी कोई इन्तज़ाम नही है। फिर भला वे सचाई के रास्ते पर टिके क्यो रहगे? बल्कि परिणाम उलटा ही होगा।"

हम लोगो की बातचीत के दरमियान बंशीलाल भी वहाँ पहुँच चुका था।

"हुजूर!" उसने कहा।

बंशीलाल ने एक लिफाफा बढाते हुए कहा, "कल पार्क-स्ट्रीट के फ्लैट मे जिस साहब को पकडा था, उसकी एक चिट्ठी मेरे पास रह गयी है। मैं आपको देना भूल गया था।"

"चिट्ठी ?"

वशीलाल ने याद दिलाया, "हुजूर, साहब ने एक चिट्ठी लिखकर लिफाफे मे डाली थी और मुझसे उसे लेटर बॉक्स मे डालने कहा था। यह वही चिट्ठी है।"

अब इतनी देर बाद हमे उस चिटठी की याद आयी।

विजय ने लिफाफे को उलट-पुलट कर देखा। मैंने भी देखा। लिफाफे पर साफ़-साफ हरफो मे लिखा था लीला हसराज। पता २२१२, सिंधु ओस्तागर लेन, कलकत्ता।

लिफाफे के ऊपरी हिस्से को फाडकर विजय ने चिटठी बाहर निकाली और उसे पढने लगा। मैं भी उसी के साथ पढने लगा। पढते-पढते मुझे लगा, मैं जैसे दार्जिलिंग के पहाड पर खडा होकर सूर्योदय देख रहा होऊँ।

मास्टर साहब ने लिखा था

लीला,

इतने वरसो के बाद मेरी यह चिट्ठी पाकर हो सकता है, तुम्हे आश्चर्य लगे। सोचोगी, मुझे तुम्हारा पता कहाँ मिल गया आज सवेरे भी और-और दिनो की तरह मैं अपनी कार से ऑफिस जा रहा था। अचानक देखा, सडक के बस-स्टैंड पर तुम क्यू मे खडी हो। इतने वरसो के बाद भी मैं जो तुम्हे पहचान गया, इसका कारण है तुम्हारा चेहरा। तुम्हारा चेहरा भूलने लायक नहीं है और यही कारण है कि मैंने तुम्हे पहचान लिया। वरना मैं इसकी कल्पना नही कर सकता था कि तुम्हारी जैसी महिला बस के इन्तजार मे खडी रहेगी। मैंने केदार को गाडी रोकने को कहा। केदार मेरा ड्राइवर है। उसके बाद तुम्हे दिखाकर मैंने केदार से कहा कि वह तुम्हारे पीछे पीछे जाये और तुम्हारे घर का पता तथा तुम्हारे बारे मे विस्तार के साथ समाचार लाकर मुझे दे। केदार मेरे पास बहुत दिनो से है। उसके लिए यह कोई काम मुश्किल नही है। शाम के समय ऑफिस आकर उसने तुम्हारे बारे मे सब कुछ बताया। अभी ऑफिस से लौटकर तुम्हे चिट्ठी लिखने बैठा हूँ। केदार से जो कुछ सुना, उससे इच्छा हुई कि मैं सीधे तुम्हारे घर चला आऊँ। मगर कल सुबह ही एक जरूरी काम से मुझे बैङ्कॉक जाना पड रहा है, इसीलिए अभी तुम्हारे पास आने मे असमर्थ हूँ। आगामी शनिवार को मैं वहाँ से लौटकर तुमसे जरूर ही मुलाकात करूँगा। आशा है, तुम मुझसे भेंट करोगी।

सचमुच केदार से मैंने जो कुछ सुना, उससे मुझे घोर आश्चर्य हुआ है। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा है कि पैसे की खातिर जिस करोड़पति मिस्टर हंसराज से तुमने शादी की थी, तीन साल पहले उससे तुम्हारा सम्बन्ध विच्छेद हो चुका है। इसी के चलते आज, तुम्हें छः सौ रुपये की टायपिस्ट की नौकरी करनी पड़ रही है और तुम सिंधु ओस्तागर लेन के एक लेडीज मेस में रह रही हो। लेकिन कभी तुम बड़े आदमी की लड़की थी, बड़े आदमी की पत्नी थी। वह सब आज कहाँ चला गया? ऐसा क्या हुआ जिसके चलते तुम्हें इस दुरवस्था में पड़ना पड़ा? ऐसी कौन-सी घटना घटी जिसके कारण तुम्हें छः सौ रुपये माहवार की मामूली नौकरी स्वीकार करनी पड़ी? तुम जब मेरी छात्रा थी, मैं तुम्हें अंग्रेजी और इतिहास पढ़ाया करता था। एक दिन मैंने ही तुम्हारे सामने विवाह का प्रस्ताव रखा था। वह बात क्या आज तुम्हें याद है? उस दिन तुमने हँसकर मेरे प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। और न केवल मेरे प्रस्ताव को ही ठुकराया था, मेरे आदर्श की भी तुमने खिल्ली उड़ायी थी। उस दिन तुमने मुझे समझाने की कोशिश की थी कि पैसा ही आदमी का लक्ष्य होना चाहिए। उस दिन मैंने तुमसे तर्क-वितर्क किया था। वे सारी बातें तुम्हें जरूर ही याद होंगी। उस दिन मैंने कहा था, पैसे से सुख का कोई रिश्ता नहीं है। सुख तो मन की चीज होती है। पैसे के प्रति आसक्ति रहने से सुख कभी नहीं मिल सकता। तुमने मुझे ठुकराकर सुख की उम्मीद में एक करोड़पति से शादी की थी। बाद में सुना था, उनका नाम मिस्टर हंसराज है। याद है, जिस दिन तुम्हारी शादी हुई, मैं स्कूल नहीं गया, दिन भर खाना नहीं पकाया और न कुछ खाया ही। अपने कमरे में बैठा सोचता रहा, सोचता रहा। उसके बाद मैंने प्रतिज्ञा की कि तुम्हारे पति मिस्टर हंसराज की तरह ही करोड़पति बनूँगा। और करोड़पति बनकर प्रमाणित कर दूँगा कि मुझमें भी यह योग्यता है कि तुम्हारा पति बन सकूँ। आज मैं करोड़पति हूँ, लीला। सचमुच, आज मैं करोड़पति हूँ। मगर इतने रुपये पैसे का मालिक होने पर भी मुझे क्या मिला? तुम्हारी बात कहाँ सच हो सकी? सुख मिला ही नहीं। बल्कि जिन दिनों मैं खादी पहनता था, स्कूल की मास्टरी करके महीने में ढाई सौ रुपये कमाता था, अपने हाथों से रसोई बनाता था—तभी मैं सुखी था। लीला, सचमुच तुम्हारा हिसाब बिन मिला ही रह गया।

खैर, वे सब बातें छोडो। तुम्हारे आदर्श पर चलकर मैं एक गरीब स्कूल-मास्टर से आज करोडपति की श्रेणी मे आ गया हूँ—मल्टी-मिलिऑनायर बन गया हूँ। लेकिन करोडपति की पत्नी होकर भी तुम आज मर्चेन्ट-ऑफिस मे छ सौ रुपये की नौकरी क्या कर रही हो? बस से ऑफिस क्यो जाती हो? सिधु ओस्तागर लेन के सस्ते लेडीज मेस मे क्यो रह रही हो, यह बात मेरी समझ मे नही आती है। तुम्हारे पति ने तुम्हें छोड क्यो दिया? तुम्हारे पिताजी, जो इतने बडे आदमी थे, वे कहाँ गये? मेरी समझ मे कुछ भी नहीं आ रहा है। सचमुच, तुम्हारा एक भी हिसाब नही मिला।

खैर, अगले शनिवार को शाम छ बजे मैं तुम्हारे मेस मे आकर तुमसे इन मामलो पर बातचीत करूँगा। तुम वही रहना। अब तो मैं तुम्हारे कथनानुसार करोडपति या मल्टी मिलिऑनॉयर हो चुका हूँ। अब तुम मेरे प्रस्ताव को अमान्य नही करोगी, ऐसा विश्वास है। आशा है, अब शायद मेरे जीवन की बैलेन्स सीट मिल जाये, मेरे जीवन का हिसाब मिल जाये।

यह चिट्ठी हडबडी मे लिख रहा हूँ। याद रखना, अगले शनिवार को शाम छ बजे वहाँ पहुँच रहा हूँ।

तुम्हारा
मास्टर साहब

चिट्ठी पढकर विजय ने मेरी ओर देखा, मेरी भी आँख विजय की ओर चली गयी। हम दोनो उसी क्षण गाडी लेकर २२।१, सिधु ओस्तागर लेन, लेडीज मेस की ओर रवाना हुए। हमने पता लगाने की कोशिश की, वहाँ लीला हसराज नामक कोई महिला रहती है या नही।

एक महिला ने बताया, "वे रहती तो जरूर थी, मगर उनकी बदली हरियाणा मे कही हो गयी और वे कल ही यहाँ से रवाना हो चुकी है।"

"हरियाणा का पता क्या है, मेहरबानी कर बता सकती हैं?" हमने पूछा।

महिला बोली, "अपना पता हमे देकर नही गयी है।"

अन्तत उसका पता मिला ही नही। आज भी मुझे लगता है, लीला हसराज का पता उस दिन मिल जाता तो भी हम पाते कि उसके जीवन का हिसाब नही मिला है। यहाँ तक कि उस दिन वशीलाल यदि उस चिट्ठी को लेटर बॉक्स मे डाल देता तो भी हिसाब नही मिलता। न

तो सुनीति के जीवन का हिसाब मिलता और न ही मास्टर साहब और लीला हसराज के जीवन का। मास्टर साहब की दुर्गादीदी के जीवन का हिसाब ही क्या उस दिन मिला था?

शायद सचाई यही है कि किसी भी आदमी के जीवन का कोई हिसाब कभी मिलता ही नहीं है।

शायद यह रोकड ही ऐसी है जो कभी मिली नहीं कभी मिलेगी भी या नहीं? कौन जाने।

●